उपदेशामृत भाग -२

उपदेशामृत

भाग – २

श्री श्री माता अमृतानन्दमयी देवी

संकलन

स्वामी ज्ञानामृतानन्द पुरी

शारदा पुस्तकालय
क्रमांक 29

माता अमृतानन्दमयी मिशन ट्रस्ट
अमृतपुरी पोस्ट, कोल्लम जिला - ६९०५२५
केरल

Upadesamrit - Part 2(Hindi)

Collection of Amma's Teachings

Compiled by: Swami Jnanamritananda Puri

Translation into Hindi: Dr. N.E.Viswanathan Iyer
M.A.(Hindi, sanskrit); PhD.
Retd. Head of Hindi Dept., Cochin University

Published by:
Mata Amritanandamayi Mission Trust,
Amritapuri P.O., Kollam Dist., Keralam, INDIA 690 525
Phone: (0476) 896 178 / 897 578 / 621 279 *Fax:* 0476 * 897 678

	Year	Month	Copies
First Edition	*1999*	*February*	*2000*

© Mata Amritanandamayi Mission Trust, Amritapuri, Kollam.

Type Setting: Amrita DTP, Amritapuri.

Printed at: Amrita Offset Printers, Amritapuri.

नित्यानन्दकरी वराभयकरी सौन्दर्यरत्नाकरी
निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी ।
प्रालेयाचलवंशपावनकरी काशीपुराधीश्वरी
भिक्षां देहि कृपावलम्बनकरी मातान्नपूर्णेश्वरी ।।

दो शब्द

हम उपदेशामृत का यह दूसरा भाग भक्तों की सेवा में सहर्ष प्रस्तुत करते हैं। पहला भाग पढ़ने के बाद भक्तों ने बहुत अनुरोध किया कि दूसरा भाग भी अतिशीघ्र उपलब्ध कराया जाए। अम्मा के इन्हीं सभी बच्चों के आग्रह का फल है यह द्वितीय भाग। यहाँ यह भी कहना पड़ेगा कि यह कार्य श्री एन.ई.विश्वनाथन् अय्यरजी के सहयोग के बिना संभव न होता जिन्होंने अल्प समय में ही मलयालम से हिन्दी में इस पुस्तक का सरल भाषा में अनुवाद किया। उनके प्रति हम अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

महात्माओं के वचन केवल ऊपरी तौर से पढ़ने के लिए नहीं होते। अम्मा यह नहीं चाहती कि हम इनको पढ़कर भूल जाएँ। अगर हम अम्मा के वचनों को अपने जीवन में उतार न पाएँ तो उन्हें पढ़ना निष्फल रहेगा। साधारण तौर पर जब हम विभिन्न शास्त्रों का अवलोकन करते हैं तो लगता है कि उनमें निहित ज्ञान को अपने जीवन में अमल में लाना कठिन होगा। परन्तु अम्मा के श्रीमुख से निर्गलित भक्ति व ज्ञान की धारा इतने सरल शब्दों में प्रस्तुत हैं कि साधारण से साधारण व्यक्ति भी उन्हें समझ सकता है, उन्हें अपने जीवन में उतार सकता है। अम्मा कहती है कि एक कागज़ पर मधु लिखकर उसे चाँटने से हम मिठास का अनुभव नहीं कर सकते, न हि हम चित्र में बने गाय को दुह सकते है। घर के चित्र में हम रह नहीं सकते। अगर हमें धूप व वर्षा से सुरक्षित रहना है तो घर बनाना ही होगा। वैसे ही यदि हम जीवन

सुख-चैन से बिताना चाहते है तो अम्मा के बताए मार्ग का अनुगमन करना ही होगा।

अम्मा अपने ही उपदेशों की प्रतिमूर्ति है। उनका जीवन भी शास्त्रों का सार है। यदि हम उनके जीवन का ही श्रद्धा से निरीक्षण करें तो अन्य किसी शास्त्राध्ययन की आवश्यकता नहीं है। अम्मा के जीवन में व्यक्त प्रेम व करुणा ही अम्मा का संदेश है। यदि हम इन्हें थोडी मात्रा में ही सही अपने जीवन में उतार पाएँ तो हमारा जीवन भी धन्य हो जाएगा – परम शान्ति व आनन्द के द्वार हमारे लिए भी खुल जाएँगे।

हमें आशा है कि सभी पाठकगण अम्मा के इन अमृतवचनों का पूरा लाभ उठाएँगे। आगे भी भक्तो की सेवा में हमें अम्मा के उपदेश पहुँचाने का सुअवसर मिले इस प्रार्थना के साथ हम यह संकलन अम्मा के श्रीचरणों में समर्पित करते है।

– प्रकाशक

6

६

अम्मा भागवत सुनती हैं

....अब यह क्या क्या शरारतें करेगा? कौन जाने! गगरी तोड़कर पूरा दहीमय कर दिया। दही की बाढ़ थी। उसके बदन पर ही दही लगा है। इसलिए उसका मार्ग ढूँढ़ना मुश्किल नहीं। तीन-चार पदचिह्न दही से अंकित दिखाई देते हैं। आगे कुछ नहीं दिख पड़ता।

हम भी इतना ही देख सकते हैं, ईश्वर के समीप तीन-चार कदम लक्षण देख बढ़ सकते हैं। उपनिषद्, पुराण सब मिलाकर मुश्किल से तीन-चार कदम, बस! उसके बाद स्वयं ढूँढ़ निकालना ही पड़ेगा।

यशोदा ढूँढ़ती जाती है। उसे पता है कि कृष्ण को देखना हो तो कहाँ कहाँ खोजना है। जहाँ मक्खन या दूध है वहाँ खोजती हैं। ज़रूर मिलेगा। भगवान को यों देख सकें तो बड़ा आनंद है। मगर अब हमारी अवस्था ऐसी है। जब देखने का विश्वास हो तब जाकर देखना काफी है।

यों ढूँढ़ते आगे बढ़ते हैं तो कृष्ण खड़े हैं। ऊखली उलटकर उसके ऊपर खड़े हैं। चारों ओर एक फौज़ ही! श्रीराम की सेना!

सभी हाथ बढ़ाते हैं, खाते हैं। कृष्ण को लग रहा है- अपने चार हाथों में से दो हाथ कारागार में छोड़े न? वह ठीक नहीं हुआ। अब हज़ार हाथ हों तब भी पूरे नहीं पड़ेंगे इन बंदरों को मक्खन देने। 'जल्दी जल्दी खाओ, माँ के आने के पहले खा जाओं' वे साथ चारों तरफ देखते भी हैं। झपकती आँखों से देखते हैं ये सर्वसाक्षी। यों देखते-देखते खूब हाथ भर भर देते समय वह आँखों में पड़ा। कौन?

सुना है कि कौआ और हवा दोनों तरफ दरवाज़ों के होने पर ही भीतर घुस आते हैं। कृष्ण ने और एक बात देखी। बाहर लपक जाने दरवाज़ा खोल रखने के बाद चोरी करते हैं। मैया आईं और हाथ बढ़ाया। जब पकड़ा नहीं पकड़ा की स्थिति आई तब उछल पड़े- दौड़े भी। दौड़ने की ज़रूरत? मैया के हाथ में छड़ी है। उसे देखने पर क्या कृष्ण नहीं जानेंगे? मैया की उम्र लाठी टेकने की नहीं है। तो फिर छड़ी क्यों? पिटाई करने ही आती है। यह क्या कृष्ण नहीं जानता?

गोपन्यधावन्नयमाप योगिनां
क्षमं प्रवेष्टुम् तपसेरितं मनः ।(भागवत्-१०-९-९.)

कलरि के सामने काव्यकौस्तुभ ओट्टूर उण्णिनंबूदिरिप्पाड् का भागवत प्रवचन। भक्ति रसामृतम् पयस्विनी कूल तोड़कर बह रही है। सब मोहित चित्त हो सुन रहे हैं। अम्मा भी हैं। कन्हैया की बाललीलाएँ सुनने तल्लीन! हृदय-चश्मदीद की तरह सुनाते ओट्टूर उण्णिनंबूदिरिप्पाड्! आनंद की प्राप्ति के लिए और क्या चाहिए?

कुछ समय बीता तो अम्मा उठीं। वे पश्चिम की तरफ चलीं। कलरि और वेदान्त विद्यालय के बीच के प्रांगण में पहुँची। विद्यालय के बरामदे पर टंगे गमलों में उगे पौधों के पास खड़ी रहीं। हर बेल पर ध्यान से हाथ से सहलाते एक एक बेल को हथेली में लेकर चुंबन दिया। दर्शकों को लगता कि एक माँ नन्हें मुन्ने को दुलार रही है। इस समय कोई लड़की कुछ कहती हुई अम्मा के पास गयी तो अम्मा ने इशारे से मना किया कि मत बोलो। वह लड़की बेलों को छूने लगी तो अम्मा ने रोका।

लड़की का निर्दय स्पर्श उस पौधे को दर्द दे तो? उस पौधे से अम्मा का संवाद काफी समय तक जारी रहा। मनुष्यों की तरह पौधे भी शायद अम्मा से अपना दुःख बताना चाहते होंगे। अम्मा के अलावा और कौन उन्हें ढ़ाढ़स दे सके?

सत्संग समाप्त हुआ। अम्मा वापस कलरिमंड़प पर आ गईं।

अम्मा- 'सत्संग शब्दों से उच्चारण करने का विषय नहीं है। वह जीवन में अमल में लाने का तत्व है। मौखिक रूप से व्यक्त करने से बढ़कर उसे जीवन में अपनाने की आवश्यकता है।'

त्याग

एक गृहस्थ भक्त ने अम्मा के सामने संदेह प्रस्तुत किया- 'अम्मा हमेशा त्याग के महत्त्व की बात कहा करती हैं। त्याग क्या है?'

अम्मा- 'बेटे, अपने सुख और स्वार्थ को देखे बिना समर्पण भाव से जो भी काम किया जाय वह त्याग है। 'मैं और मेरा' के भाव के बिना अपने सुख को ठुकराकर संसार के लिए एवं ईश्वरार्पण रूप में जो कर्म करते हैं उसे अम्मा त्याग कहती है। स्वार्थ के लिए हम जो कष्ट झेलते हैं उसे अम्मा त्याग नहीं मानती।'

भक्त- 'कुछ स्पष्ट करें तो ...।'

अम्मा- 'अपने बच्चे को बीमारी हो जाय तो हम उसे लेकर अस्पताल जायेंगे। गाड़ी न मिले व अस्पताल दूर हो, तब भी अस्पताल जायेंगे। बच्चे का दाखिला कराने के लिए कितने ही लोगों की खुशामदी करनी पड़े तो करेंगे। पे वॉर्ड़ न मिले तो बहुत बड़े आदमी होने पर भी मैली धरती पर भी लेटेंगे। दिनों तक छुट्टी लेकर बच्चे को पहरा देंगे। मगर ये सभी तकलीफें अपने बच्चे के लिए ही झेलते हैं। उसे त्याग नहीं कहा जा सकता। एक सेंट ज़मीन के लिए अदालत की सीढ़ीयाँ कई बार चढ़ने हम तैयार हैं। वह अपनी ज़मीन के लिए है। रात को जागकर ओवरटाईम काम करते हैं। वह हमें पैसा मिलने के लिए है। इन बातों को त्याग नहीं कहा जा सकता। किंतु अपना स्वार्थ तथा सुख-सुविधा त्यजकर

किसी दूसरे की मदद करें तो वही त्याग कहलाएगा। मेहनत कर और तकलीफें झेलकर कमाया धन एक गरीब की मदद के लिए खर्च करें तो वह त्याग कहला सकता है। पड़ोसी बच्चा बीमार पड़े और कोई सहायता के लिए न हो तो किसी प्रतीक्षा के बिना एक मुस्कुराहट तक की अपेक्षा किये बिना अस्पताल में बच्चे को साथ देने तैयार हों तो उसे त्याग कह सकते हैं।'

'अपने जीवन की सुख-सुविधाएँ काटकर उससे बचाया पैसा धर्मोपकारार्थ काम में लगाते हो तो वह त्याग है। इस प्रकार के त्यागपूर्ण काम करना आत्मलोक के द्वार खटखटाना है। ऐसे काम वह द्वार खोल देते हैं। ऐसा कर्म ही कर्मयोग हैं। दूसरे मृत्यु को ले चलते हैं। 'मैं' और 'मेरा' के भाव से जो काम करते हैं वे कभी हमारा साथ नहीं देते।'

'बहुत दिनों से जिस मित्र से मिले नहीं वह आता है तो हम प्रेम से उसे गुलदस्ता भेंट करते हैं। परन्तु उनसे पहले हम ही उन फूलों की खूबसूरती और खुशबू का आनन्द लेते हैं। देने का संतोष भी हम ही पाते हैं। उसी प्रकार त्यागपूर्ण निष्काम कर्म के ज़रिए हमें अनजाने ही संतोष एवं आनंद प्राप्त होता हैं।'

'बच्चों, जो सदा त्यागपूर्ण कर्मों में लगे रहते हैं, वे शायद समय के अभाव के कारण यथा आवश्यक जप न कर पायें फिर भी वे अमृतत्त्व को पाते हैं। वह व्यक्ति दूसरों के लिए अमृत की तरह उपकारप्रद निकलेगा। त्यागपूर्ण जीवन ही सबसे बड़ा सत्संग है। दूसरे देख अनुकरण कर सकते हैं।'

जप से संबंधित उपदेश

ब्रह्मचारी- 'अम्मा क्या रात को सोये बिना जप करना अच्छा है?'

अम्मा- 'निद्रा वर्षों से हम में बनी हुई आदत है। उसे अचानक रोकने पर हमें कई तरह के शारीरिक कष्ट होते हैं। प्रतिदिन कम से कम चार-पाँच घंटे सोना चाहिए। नींद एकदम छुड़ानी नहीं चाहिए। क्रमशः कम करते जाना चाहिए। तब भी कम से कम चार घंटे सोना चाहिए।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा, मंत्र जपते समय कई बार ध्यान भंग हो जाता है।'

अम्मा- 'मंत्रजप बड़ी श्रद्धासहित करना चाहिए। या तो मंत्र के शब्द पर मन को केंद्रित करना होगा या अर्थ पर। नहीं तो मंत्र का प्रत्येक अक्षर जप करने के अनुसार मन में उन अक्षरों को देखते हुए जपना चाहिए। इष्टमूर्ति का रूप देखते हुए जप कर सकते हैं। रोज़ एक नियत संख्या तक जप पूरा करने का संकल्प पहले से करना चाहिए। तब हम दृढ़ता से जप की आदत बना सकेंगे। किंतु बिना श्रद्धा के केवल संख्या पूरी करने के लिए जप नहीं करना चाहिए। मन की एकाग्रता सब से मुख्य बात है। जपमाला का उपयोग करते हुए जप करना ध्यान भंग से बचने में सहायक रहेगा। साथ ही संख्या भी समझ सकेंगे। प्रारंभ में एकाग्रता मिलना कठिन रहेगा। इसलिए ओंठ हिलाते जपने की आदत ड़ालनी चाहिए। क्रमशः ओंठ और जीभ हिलाये बिना ही मन ही मन जपने की आदत ड़ालनी चाहिए। जप केवल यांत्रिक न हो। सावधानी से जपना चाहिए। प्रत्येक मंत्र यों जपना चाहिए मानों मिठाई का आस्वादन कर रहे हों। अंत में हम मंत्र को भले ही छोड़े, पर मंत्र हमें नहीं छोड़ेगा। ऐसी दशा में हम पहुँचेंगे।'

'यशोदा ने श्रीकृष्ण को ऊखली में बाँध ड़ाला न? उसी प्रकार हमें अपने इष्टमूर्ति को मंत्रपाश से बाँधने एवं बाद में उसे खोलने की कल्पना करनी चाहिए। इष्टमूर्ति के साथ खेलने, बात करने, लुकाछिपी खेलने- जैसा कि फिल्म में देखते हैं, मन में देखने का प्रयत्न करें। प्रेम हो तो ऐसी कल्पना करने की बात किसी को कहने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। ऐसे ही विचार उठेंगे। बच्चो, प्रेम की वृद्धि करनी चाहिए। 'मेरे भगवान' ऐसा मनोभाव आना चाहिए।'

१९८५ नवम्बर १५ शुक्रवार

शाम को अम्मा और शिष्य कायंकुलम के भक्त परिवार के घर पहुँचे। गरीब परिवार था। उन्होंने इसके पहले कई बार निमंत्रण दिया था। अब की बार अम्मा ने निमंत्रण स्वीकार किया।

कीर्तनसुधा का प्रबंध घर के सामने तैयार किये छोटे पंदाल में

था। बड़ी संख्या में लोग आए थे। उनमें अधिकांश लोग अशिक्षित एवं आध्यात्मिक बातों से अनभिज्ञ थे। शराब की बदबू से भरा वातावरण था। ब्रह्मचारियों को कीर्तन आलापने में बड़ा कष्ट हुआ। घरवालों ने लोगों का नियंत्रण करने में उचित ध्यान नहीं दिया था। इसकी पूर्व कल्पना से ही अम्मा ने पहले निमंत्रण स्वीकार नहीं किया होगा। अम्मा कहा करती है- 'अम्मा कहीं भी जाने तैयार है। बाज़ार में बैठकर गाने भी तैयार है। कोई भी परिहास करे, अम्मा सुनने को तैयार है। अम्मा को इसकी कोई परवाह नहीं है। अम्मा भगवान के नाम गाने आई है न, फिर शरम क्यों? मगर अम्मा के साथ जो बच्चे हैं वे अम्मा पर व्यंग-उपहास की बातें सुनकर चुप रह नहीं पाएँगें। इसके अलावा साथ कन्याएँ हैं। क्या वे कहीं भी बैठकर गा सकती हैं? उनकी सुरक्षा ज़रूरी है न? इसीलिए अम्मा सब लोगों का निमंत्रण एक ही ढ़ंग से स्वीकार नहीं कर पाती।'

गाड़ी में आश्रम को लौटते समय अन्य व्यस्तता नहीं थी। इसलिए सत्संग का अच्छा मौका मिला।

कर्मरहस्य

एक ब्रह्मचारी ने पूछा- 'अम्मा, क्या प्रत्येक अपराध का दंड़ सहना ही पड़ता है?'

अम्मा- 'अपराध छोटा होने पर भी उसका दंड़ अनिवार्यतः झेलना पड़ता है। भीष्म को भी एक अपराध करने के कारण उसकी सज़ा भुगतनी पड़ी थी।'

ब्रह्मचारी- 'उन्होंने कौनसा अपराध किया था? कैसी सज़ा मिली?'

अम्मा- 'द्रौपदी के वस्त्रहरण के समय वे मौन देखते रहे न? भीष्म जानते थे कि दुर्योधन कोई बात नहीं सुनेगा। वे मौन रहे। अधर्मी कौरव सुने या न सुने, उन्हें धर्म का उपदेश दे सकते थे। विरोध में एक भी अक्षर न कहने के कारण अधर्म के भागीदार हो गए। इसी कारण उन्हें शरशय्या पर लेटना पड़ा।'

'जब अधर्म चलता है तब धर्म जानने के बावज़ूद प्रतिवाद

बिलकुल किए बिना हाथ व मुँह वंद कर रखना सवसे वड़ा अधर्म है। वह कायर का काम है न कि वीर का। जो भी अपराध करें वे उसके परिणाम से बचने की कल्पना न करें। नरक उनके लिए है।'

ब्रह्मचारी- 'वह नरक कहाँ है?'

अम्मा- 'इस धरती पर ही।'

ब्रह्मचारी- 'ईश्वर ही सही और गलत दोनों काम करवाते हैं न?'

अम्मा- 'बेटे, जिसे यह ज्ञान हो कि ईश्वर ही सव कुछ कराता है, उसके लिए वह ठीक है। सही काम करके उससे लाभ पाते समय एवं गलत काम करके दण्ड् पाते वक्त भी समभाव से सव को ईश्वर का कार्य समझने की शक्ति हममें होनी चाहिए।'

'भूलों के ज़िम्मेदार हम ही हैं, न कि ईश्वर। टॉनिक शरीर को पुष्ट करता है। ड़ॉक्टर स्पष्ट बताते हैं कि टॉनिक रोज़ कितने चम्मच कितनी बार पीना चाहिए। उस निर्देश का पालन किए बिना सारी टॉनिक एक साथ पीने से रही-सही सेहत भी नष्ट हो जाएगी। इसको लेकर ड़ॉक्टर पर अपराध का आरोप करने से क्या लाभ? लापरवाही से गाड़ी चलाकर कहीं टकरा जाने पर पेट्रोल में बुराई ढूँढ़ने के समान है हमारे अविवेक से होनेवाली गड़बड़ियों केलिए ईश्वर को ज़िम्मेदार ठहराना। भगवान ने हमें वताया है कि इस संसार में कैसे जीना है। उसका पालन न करने के कारण जो विपदा पड़े उसका अपराध ईश्वर पर मढ़ने से कोई लाभ नहीं है।'

ब्रह्मचारी- 'भगवद्गीता कहती है कि फल की इच्छा के बिना. कर्म करो। फल की इच्छा के बिना कर्म कैसे किया जा सकता है?'

अम्मा- 'भगवान ने दुःखरहित जीवन बिताने के लिए इस प्रकार कहा है। फल की चिन्ता करके मन ही मन परेशान हुए बिना श्रद्धापूर्वक कर्म करो। जो फल मिलता है वह अपने आप ज़रूर मिलेगा। सीखते समय ध्यान से सीखो। जीत और हार की चिन्ता से परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। मकान बनाते समय यह सोचकर सिर न धुने की मकान खड़ा रहेगा या गिरेगा। इसके

बदले शिल्प के गणित के अनुसार विधिवत निर्माण का प्रयत्न करना चाहिए। अच्छा कर्म करने से ज़रूर फल मिलेगा। यदि एक किसान अच्छा चावल बिना कंकड़ के बेचता है तो सब लोग उसी से खरीदेंगे। सावधानी से धान उबालकर, सुखाकर, कूटकर चावल तैयार करें तो उस प्रयत्न का फल मिलता है न? किन्तु अत्याधिक लाभ पाने के लोभ से कपट करें तो आज या कल उसकी सज़ा मिलेगी ही। मन का चैन भी नष्ट हो जाएगा। अतएव श्रद्धापूर्वक ईश्वरार्पण बोध से काम करना ही कर्तव्य है। फल के बारे में सोचें न सोचें, कर्म का फल बिना घटे या बढ़े मिलेगा ही। फिर फल की चिन्ता से समय क्यों नष्ट किया जाए? समय नष्ट किए बिना क्या ईश्वर का ध्यान नहीं कर सकते?'

ब्रह्मचारी- 'यदि आत्मा सर्वव्यापी है तो मृत व्यक्ति में भी चैतन्य होना चाहिए न? फिर मृत्यु क्यों होती है?'

अम्मा- 'बल्ब के फ्यूस हो जाने या पंखा खराब होकर चलना बन्द कर दे तो उससे बिजली का अभाव नहीं होता। चलता पंखा सामने से हटाकर रखने से हवा नहीं मिलती तो इससे हवा का अभाव नहीं होता। हवा भरके उड़ाया गुब्बारा अगर फूट जाए तो उसकी हवा नष्ट नहीं होती। वह तो हवा में ही है। उसी प्रकार आत्मा सर्वव्यापी है, सब जगह है। मृत्यु आत्मा के अभाव से नहीं होती। शरीर नामक उपाधि का नाश ही मृत्यु है। आत्मचैतन्य शरीर के माध्यम से प्रकाशित होता है। वह व्यापार जो बन्द होता है, वही मृत्यु है। वह आत्मा की त्रुटि नहीं है। माध्यम के दोष से यह होता है।'

संवाद के बीच जो थोड़ी फुरसत मिली उसमें अम्मा ने दो ब्रह्मचारियों को कीर्तन सिखाया। अम्मा एक एक पंक्ति गाती गईं। वे अम्मा के साथ गीत दुहराते रहे।

हे भगवान..... हे भगवान.....
हे भक्तवत्सल भगवान!
पावन पुरुष पाप विनाशक
पापी ही हैं जगत में
सत् मार्ग दिखाने कौन है?

हे जगन्नाथ! अच्छाई नष्ट हुई
सत्य धर्मादि मानव समाज में नष्ट हुए
तत्व सब ग्रंथों में सिमट गए।
जो कुछ दिखते सभी कपट-वेष हैं
धारण करो कन्हैया, धर्म का उद्धार करो।

गाड़ी आगे बढ़ रही थी। अम्मा ने दूसरा कीर्तन सुनाया।

माँ आँखें खोलो न?
अन्धकार हटाने आओ न?
लक्ष सहस्र अनन्त नाम से
आदर से बुलाऊँगी
अज्ञानियों के इस जग में
अज्ञान दूर करने और कौन है?
विज्ञान का सार हो तुम माँ
विश्व महामयी माँ
भक्तप्रिया राजेश्वरी भवानि
क्या दया नहीं करोगी?
भीतरों पर प्रकाश करोगी
दिव्यरूपी क्या नहीं बुलाओगी? माँ......
तत्वाभिराम तुम्हारा प्यार भूख पाने खिलते हैं
तत्क्षण से हम पुकारते हैं
आदिरूपी! तुम आओ न! माँ......

गाड़ी जब वल्लिक्काव के नावघाट पर रुकी तभी सब समझ सके कि आश्रम पहुँच गए हैं।

अम्मा के दर्शन के लिए आया एक भक्त आश्रम के द्वार पर उनकी प्रतीक्षा में खड़ा था। उसके साथ एक युवक था, जो आध्यात्मिक बातों में गहरी दिलचस्पी न रखने पर भी बातें जानने की इच्छा रखता था। उसने कुछ आध्यात्मिक ग्रंथ पढ़े भी थे। दोनों शाम को जब आश्रम पहुँचे, तब अम्मा कायंकुलम के लिए प्रस्थान कर चुकी थीं।

अम्मा को देखते ही भक्त ने साष्टांग प्रणाम किया। युवक निःसंगता से अम्मा पर दृष्टिपात किए खड़ा रहा। अम्मा दोनो को लेकर कलरिमण्ड्प के सामने बैठीं।

अम्मा- 'बच्चे कब आए?'

भक्त- 'हमने बस से आते समय अम्मा को आश्रम की गाड़ी में जाते देखा। हमारी उम्मीद नहीं थी कि अम्मा को देख सकेंगे। यहाँ हमारे पहुँचने पर पता लगा कि अम्मा आज ही लौटेंगीं। तब आश्वस्त हुए।'

अम्मा- 'कायंकुलम पर एक बच्चे के घर गए। बहुत गरीब हैं। दिनों से अम्मा को बुला रहे थे। उनकी व्याकुलता देख आज जाने का वचन दिया था। बेटे की साधना कैसे चल रही है?'

भक्त- 'अम्मा के आशीर्वाद से सब ठीक चल रहा है। अम्मा एक शंका निवारण कर लूँ?'

अम्मा- 'हाँ! हाँ! पूछ लो न?'

गुरु से मंत्रदीक्षा

'मेरा एक मित्र है। उसने एक संन्यासी से मंत्रदीक्षा ली है। हाल ही में हम मिले तो उसने कहा कि तुम्हें भी उस संन्यासी से मंत्र ग्रहण करना चाहिए। मैंने कहा कि अम्मा से मैं मंत्र ग्रहण कर चुका हूँ। फिर भी वह मानता नहीं। आखिर किसी तरह उस से छूट गया। अम्मा, एक गुरु से मंत्र स्वीकार करने के बाद फिर दूसरे गुरु से मंत्र स्वीकार करना क्या ठीक है?'

अम्मा- 'बच्चों, एक व्यक्ति को गुरु स्वीकार करने के बाद किसी अन्य को गुरु स्वीकार करने वाला सतीत्वविहीन स्त्री के समान है। यदि प्रथम गुरु से मंत्र स्वीकार नहीं किया हो तो कोई समस्या नहीं है।'

'एक सद्‌गुरु से मंत्र स्वीकार करने के बाद अन्यत्र कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। वे सब कुछ संभाल लेंगे। हम दूसरों का भी सम्मान कर सकते हैं, इज़्ज़त कर सकते हैं, गलती नहीं है।

परन्तु जो किसी पथ पर जमकर खड़े नहीं होते वे कुछ प्राप्त नहीं करते। वह एक स्त्री द्वारा अपने पति को धोखा देकर परपुरुष को स्वीकार करने के समान है। किसी गुरु पर दृढ़ आस्था से ही हम उनसे मंत्र स्वीकार करते हैं। उसके बाद दूसरे किसी गुरु को स्वीकार करने का मतलब यह है कि हमारी प्रथम आस्था नष्ट हो गई।'

भक्त- 'मंत्र देनेवाले गुरु के प्रति विश्वास अगर नष्ट हो जाए तो क्या करें?'

अम्मा- 'विश्वास को बनाए रखने का पूरा प्रयास करना चाहिए। फिर भी संभव नहीं हो तो उस गुरु के पास रहना बेकार है। विश्वास नष्ट होने के बाद फिर से उस विश्वास को बनाने का प्रयास गंजे सिर पर बाल उगाने के प्रयत्न के समान है। विश्वास एक बार नष्ट हो जाए तो दुबारा ज़माना बड़ा कठिन है। इसीलिए किसी को गुरु स्वीकार करने से पहले अधिक से अधिक विचार व परीक्षा करनी चाहिए। सद्गुरुओं से मंत्र ग्रहण करना ही उत्तम है।'

भक्त- 'सद्गुरु से मंत्र स्वीकार करने का क्या प्रयोजन है?'

अम्मा- 'सद्गुरु अपने संकल्प से हमारी आध्यात्मिक शक्ति को जगा सकते हैं। दूध में केवल दूध ही ड़ालने से वह दही नहीं बनता। किन्तु दही के बर्तन से थोड़ा सा दही लेकर दूध में ड़ालें तो वह असली दही बन जाएगा। महात्मा जब मंत्र का उपदेश देते हैं तब उनका पूर्ण संकल्प उसके पीछे रहता है। उपदेश के समय उनकी प्राणशक्ति शिष्य में प्रवाहित होती है।'

भक्त- 'यहाँ ऐसे सज्जन अनेक हैं जो हर किसी को मंत्र देकर गुरु बनना चाहते हैं। उनके दिए मंत्र से क्या लाभ है?'

अम्मा- 'केवल शास्त्र सीखकर कई लोग भाषण देते हैं। उपजीविका के लिए भागवत और रामायण का पारायण करनेवाले भी है। वे अपनी ही रक्षा करने में असमर्थ हैं। वे दूसरों की रक्षा कैसे कर सकते हैं? जिन्होंने ऐसे लोगों से मंत्र स्वीकार किया है वे एक सद्गुरु के मिलने पर उनसे अवश्य मंत्र स्वीकार कर सकते हैं। सद्गुरु से मंत्र स्वीकार करना ही उत्तम है।

साधना से आध्यात्मिक शक्ति को जगानेवाले लोग ही मंत्र देने के अधिकारी हैं। उसके बिना जो 'गुरु' बने हुए हैं वे स्पंज की नाव के समान हैं, यात्रिओं को वह नाव दूसरे किनारे पहुँचा नहीं सकती। कोई चढ़ जाए तो नाव डूब जाएगी, यात्री भी। परन्तु सद्गुरु बड़े जहाज़ जैसे हैं। कितने ही लोग उसमें दूसरे पार पहुँच सकते हैं। साधना की शक्ति के बिना शिष्यों को स्वीकार करके मंत्रोपदेश देना छोटे साँप का बड़े मेंढ़क को निगालने के प्रयत्न जैसा है। साँप मेंढ़क को गले के नीचे उतार भी नहीं पाता, मेंढ़क छूट भी नहीं पाता।'

युवक- 'महात्माओं के सत्संग से क्या लाभ होता है?'

अम्मा- 'बेटा, अगरबत्ती बनानेवाले कारखाने से हम जब निकलकर आते है तब हममें भी वह सुगन्ध संक्रमित होती है। हमने वहाँ काम नहीं किया है। कोई सुगन्धी वस्तु नहीं खरीदी है। किसी वस्तु को छुआ तक नहीं, सिर्फ उनके समीप गए हैं। फिर भी अनजाने में वह सुगन्ध हममें संक्रमित हुई है। उसी प्रकार हम जब महात्माओं के समीप जाते हैं तब अनजाने ही एक प्रकार का परिवर्तन होता है। मामुली लोगों के पास जाने पर जैसा अनुभव होता है, उससे महात्माओं के समीप जाने का अनुभव कुछ भिन्न रहता है। उनका सामीप्य हममें अच्छे गुण, अच्छी वासना और अच्छे संस्कार को जगाता है। किन्तु दुर्जनों की समीपता कोयले के भण्ड़ार में प्रवेश करने के समान है। हम चाहें कोयले को न छुएँ तो भी कमरे से बाहर आते समय शरीर पर कालिख लगेगी ही।'

'हम वर्षों तक तपस्या कर सकते हैं। तथापि महात्माओं का सत्संग मिलना कठिन है। इसका मौका मिले तो उसे गँवा नहीं देना। धीरज नष्ट होने पर भी सत्संग का मौका अधिकाधिक पाने का प्रयत्न करना चाहिए। दस वर्ष के तप से भी जो लाभ नहीं होता वह महात्माओं के एक स्पर्श, एक दर्शन से हम पा सकेंगे। किन्तु 'अहं' की भावना नहीं होनी चाहिए। आस्था भी ज़रूरी है।'

युवक- 'हम आश्रम का परिसर देख आये।'

अम्मा- 'बेटा यहाँ देखने को विशेष क्या है?'

एकान्त साधना की आवश्यकता

युवक- 'यहाँ पीछे एक गुफा का निर्माण किया गया है। उसकी ज़रूरत मेरी समझ में नहीं आई।'

अम्मा- 'प्रारम्भ में साधकों को एकान्त ज़रूरी है। यह मन को अन्य बातों से हटाकर अन्तर्मुख होने में मदद देगा। इसके अलावा निर्दिष्ट पथ से आगे बढ़ने पर हर वस्तु में ईश्वर का दर्शन किया जा सकता है। यहाँ पहाड़ नहीं है। घरों की बस्ती है। एकान्त भी नहीं। ध्यान करने गहरा स्थान तैयार भी नहीं कर सकते क्योंकि चारों तरफ पानी है। दो-तीन फुट की गहराई में पानी है, इसलिए उसे गुफा भी कह नहीं सकते।'

'बेटा, बीज बोने के पहले खेत का खरपतवार दूर कर साफ करना चाहिए। जमीन को जोतकर हमवार बना देना चाहिए। उस के बाद ही बीज बोते हैं। बीज जब उगते हैं तब खरपतवार गोड़ना चाहिए। लेकिन जब बालिओं की स्थिति हो जाए तब गोड़ने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। खरपतवार उसे कुछ कर नहीं सकता। उससे जूझने की शक्ति बाली में होती है। किन्तु प्रारम्भ में खरपतवार उखाड़ न फेंकें, तो वे पौधों को नष्ट कर देंगे। उसी प्रकार साधना के प्रारम्भ में एकान्त में साधना करनी चाहिए। दूसरों के साथ अधिक सहयोग किए बिना जप और ध्यान में लीन हों। साधना में कुछ प्रगति पाने के बाद किसी भी बाहरी बाधा को मात करने की मानसिक शक्ति प्राप्त हो जाएगी।'

'पानी नल से ऊपर की तरफ पम्प करते हैं। नीचे छेद है तो पानी नहीं चढ़ेगा। अतःएव बाहरी बातों को छोड़ देना चाहिए। यह मनःशक्ति के ह्रास को रोकेगा। अब तक हमारे मन में भरी हुई बुरी वासनाओं को एकान्त में रहकर दूर करना तथा हृदय को स्वच्छ बना लेना चाहिए। अधिक लोगों से हिलना मिलना नहीं चाहिए। शास्त्रों के अध्ययन से सब अधिक समझ सकते हैं। एक छात्र क्या रेलवे स्टेशन पर जाकर वहाँ पढ़ सकेगा? वहाँ बड़ी भीड़ व शोरगुल होगा। सीखने के लिए लायक माहौल होना चाहिए। इसी तरह साधकों के लिए भी प्रारंभ में एकान्त ज़रूरी

है। पर्याप्त अभ्यास करने के बाद किसी भी परिस्थिति में वे ध्यान कर सकते हैं। मगर अब नियमों की पाबन्दी ज़रूरी है।'

'गुफ़ा में बैठकर ध्यान करने का कारण एकान्त ही नहीं, दूसरा कारण भी है। धरती के नीचे और पहाड़ के ऊपर की तरंगों में दूसरी जगहों से अलग कुछ विशेषताएँ हैं। वहाँ रहकर साधना करने पर साधना में एक विशेष स्फूर्ति मिलेगी।'

'महात्माओं ने बताया है कि भूमि के नीचे की गुफाएँ साधना के योग्य हैं। हम रोग की दशा में डॉक्टर के पास जाते है। डॉक्टर जो भी कहें, हम उसपर यकीन करेंगे। उसी प्रकार हमारे लिए महात्माओं की वाणी ही प्रमाण है। वह वेदवाक्य है। पुराने जमाने में साधकों को तपस्या के लिए वन व गुफाएँ बड़ी संख्या में सुलभ थीं। साधक फलमूल खाते वहाँ तपस्या में लीन रह सकते थे। किन्तु आज की दशा भिन्न है। इसलिए गुफा भी तैयार करनी पड़ती है। यद्यपि यह हमारी बनाई गुफा है तो भी एकान्त और ध्यान के लिए यह काफी है।'

युवक- 'एक तपस्वी को ध्यान करने क्या गुफा ज़रूरी है? गुफा में बैठकर एकान्त पाना क्या प्रकृति से अलगाव नहीं है? वह क्या कमज़ोरी नहीं है?'

अम्मा- 'बेटे, पानी से लबालब भरी बाँध है। उसके भीतर हिलोरें उठते है परन्तु इससे पानी नष्ट नहीं होता। किन्तु बाँध के टूटने पर सब कुछ नष्ट होगा। इसी तरह साधक जब दूसरों से बातें करता है, मिलता-जुलता है, तब साधक की ऊर्जा नष्ट होती है। इससे बचने के लिए वह प्रारम्भ में दूसरों से अलग रहे तो अच्छा है। यह उनका अभ्यासकाल है। साधनाकाल है। साइकिल या मोटर चलाना सीखने के लिए मैदान चाहिए। उसे दुर्बलता कहा नहीं जा सकता। मैदान निर्जन होने से किसी को तकलीफ दिए बिना सीख सकते हैं। सीख लेने पर कहीं भी गाड़ी चला सकते हैं। किसी को तकलीफ नहीं होगी। इसी तरह आज यह गुफा और गुफा का एकान्त साधकों के लिए आवश्यक है। कुछ दिन के बाद सेवा के लिए संसार में निकल पड़ेंगे।'

युवक- 'तपस्या करने क्या मूकाम्बिका या हिमालय जाना काफी

नहीं है? वहाँ इसकी सुविधा है न?'

अम्मा- 'बेटे, सही हिमालय और मूकाम्बिका तो स्वयं सद्गुरु की सन्निधि ही है। शास्त्र बताते हैं कि गुरुचरण सारे तीर्थों का संगम है। और एक बात - ये साधक हैं। साधकों को पथ प्रदर्शन के लिए गुरु की सन्निधि ज़रूरी है। साधक को गुरु की अनुमति के बिना गुरु सामीप्य छोड़ जाना नहीं चाहिए।'

'बेटा, कठिन रोग के शिकार को डॉक्टर दवा देकर घर नहीं भेजते। वे उस रोगी को अस्पताल में प्रवेश कराकर वहीं इलाज करते हैं। बीच बीच में रोगी को जाँचना चाहिए। रोगी की दशा के अनुसार दवा घटाना बढ़ाना चाहिए। साधना में भी यही स्थिति है। गुरु का ध्यान सदा शिष्य पर रहना चाहिए। शिष्य को समय-समय पर जो सन्देह होता है उसके समाधान के लिए गुरु की सन्निधि चाहिए। साधना के प्रत्येक कदम पर आवश्यक निर्देश देकर शिष्य को आगे बढ़ाने गुरु का सामीप्य आवश्यक है। गुरु को उस पथ पर यात्रा करने का अनुभव भी होना चाहिए।'

'यदि साधक को सही निर्देश देकर उचित पथ से ले नहीं चलते तो पागलपन तक हो सकता है। ध्यान अधिक करने पर शरीर गरम हो जाएगा। उस समय शरीर को शीतल करने का उपाय बताना चाहिए। तद्नुसार आहार देना चाहिए। अधिक ध्यान किए बिना मन को केवल विश्राम देना चाहिए। जो आदमी चालीस किलो का वज़न उठा सकता है उसके सिर पर सौ किलो का वज़न लाद दें तो वह काँपता-काँपता नीचे गिर जाएगा। ध्यान यदि शरीर के सहन करने की मात्रा से बढ़ जाए तो यही होगा। ऐसे समय पर उचित मार्गनिर्देश पाने के लिए शिष्य को गुरु के पास ही रहना चाहिए।'

'ध्यान करते करते कोई गड़बड़ी हो जाए तो वह न तो ध्यान की न ही ईश्वर की भूल है। ध्यान करने की रीति की गलती है। उचित रीति से ध्यान करके प्रगति पाने के लिए यहाँ के बच्चों को आज अम्मा का सामीप्य ज़रूरी है। अकेले साधना करने का समय नहीं आया है। इसलिए वे दूर कहीं जा नहीं पायेंगे। कुछ समय बाद समस्या नहीं रहेगी।'

युवक- 'इस तपस्या से लाभ क्या है?'

अम्मा- 'मामूली आदमी अगर एक मोमबत्ती है तो तपस्वी ट्रान्सफॉर्मर है। उसमें कितने ही व्यापक स्थान को ऊर्जा प्रदान करने की शक्ति है। तपस्या से आत्मशक्ति बढ़ेगी। प्रतिबन्धों से हार नहीं मानेगा। फल की कामना के बिना कर्म करने की चेतना मन को प्राप्त होगी। जो भी करें खूब कर सकेगा। सब को समान देखते हुए किसी से विशेष ममता रखे बिना आगे बढ़ सकेगा। ये सब क्या अपने लिए और संसार के लिए उपयोगी नहीं हैं?'

'केवल शब्दों से 'अहं ब्रह्मास्मि' कहना आसान है। परन्तु यों कहते समय उसके मन में ईर्ष्या और विद्वेष है। यह साधना उस दुष्ट मन को छोड़कर दिव्य मन को प्राप्त करने का 'अभ्यास' है। बेटा पढ़ने के बाद ही परीक्षा दे पाता है न? क्या पढ़े बिना परीक्षा दे सकेगा? अगर यों परीक्षा दे तो क्या जीत पाएगा? ड्रायव्हिंग सीखने से ही गाड़ी चला सकते हैं न? साधना उसी प्रकार का अभ्यास है। अपने मन को नियन्त्रण में लाने के पश्चात किसी भी परिस्थिति में हारे बिना आगे बढ़ सकते हैं। उसके लिए केवल शास्त्राध्ययन काफी नहीं है, तपस्या भी चाहिए। सूर्य को सुगन्ध मिलने की सी बात है। उनकी यात्रा पूर्णता की ओर है। उनके शब्दों में चैतन्य आ जाता है। उनकी उपस्थिति ही दूसरों को आनन्द प्रदान करेगी। उनसे संसार में लाभ ही होता है। वें उसकी शक्ति पा जाते हैं।'

युवक- 'यह परम अवस्था अर्थात बोधोदय, साक्षात्कार आदि का मतलब क्या है?'

अम्मा- 'सब में ईश्वर को देखना, सबमें एकत्व का दर्शन करना, 'सब तुम ही हो' यह जान लेना - यही साक्षात्कार है। अपनी चिन्ताएँ शान्त हों, बाहरी अभिलाषाएँ शान्त हों और मन लीन हो, तब समाधि की दशा रहेगी। यदि समाधि प्राप्त हो गई तो अन्यों को तुमसे कोई उपद्रव नही होगा, केवल लाभ ही होगा। ऐसे लोग मामूली तालाब नहीं, नदियाँ हैं। 'मैं' और 'मेरा' का भाव उनसे दूर हो गया है। उनके सामीप्य से वृक्ष और नदी की सन्निधि की तरह हर किसी को आनन्द और शीतलता ही प्राप्त होती है।'

समय बहुत हो गया इसलिए अम्मा संवाद समाप्त करने उठीं।
अम्मा- 'बेटा कल यहाँ होगा न? अम्मा यहीं बैठी रहेगी तो बच्चें (ब्रह्मचारी) भी यहाँ रहेंगे। उनकी दैनिक व्यवस्था में भंग होगा। अब अम्मा कल मिलेंगी?'

अम्मा कमरे की तरफ चलीं।

१९८५ नवम्बर १६ शनिवार

कल ब्रह्मचारीगण अम्मा के साथ यात्रा के बाद आश्रम लौटें तो रात को देर हो गई। इसलिए कई ब्रह्मचारी प्रातःकालीन अर्चना में शामिल नहीं हुए। प्रभात में ध्यान के समय अम्मा ध्यान कक्ष में आईं। अर्चना में शामिल न हुए बच्चों से कारण पूछा।
अम्मा- 'यात्रा से बड़ी थकान होने पर भी विरागी बच्चे समय की पाबन्दी नहीं तोड़ते। बच्चों, रोज़ जो सहस्रनामार्चन करते हैं, उसमें भंग न हो। अर्चना न किया हो तो वह करने के बाद ध्यान करना काफी है।'

सब ध्यान को फिलहाल स्थगित करके सहस्रनामार्चन में लग गए। अम्मा भी उनके साथ बैठीं। अर्चना के बाद अम्मा उत्तरी दिशा के आँगन में आ बैठीं। कल आया युवक भी पास है।

ब्रह्मचर्य

युवक- 'यहाँ क्या ब्रह्मचर्य अनिवार्य है?'
अम्मा- 'अम्मा ने उनसे कहा है कि ब्रह्मचर्य की शक्ति को ओजस में परिवर्तित करके अपने चैतन्य को पहचानो, वही यथार्थ आनन्द है। यहाँ के बच्चे उसके अनुसार आगे बढ़ रहे हैं। जो ऐसा कर सकते हैं सिर्फ वे ही यहा रहें। दूसरे गृहस्थाश्रम स्वीकार करके जा सकते हैं। कुछ दिन अभ्यास करके देखना। जिन्हें अपने हार जाने का अनुभव होता है वे किसी भी क्षण जाने को आज़ाद हैं।'

'पुलीसवालों के बीच में उनकी व्यवस्था है। सेना में सेना की

व्यवस्था है। उसी प्रकार आश्रम के ब्रह्मचारी के लिए ब्रह्मचर्य जीवन की नियमावली होती है। उसके अनुसार आगे बढ़ना होगा। यहाँ रहनेवालों के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है। केवल लौकिक अर्थ में ही नहीं, पंचेन्द्रियों का भी संयम चाहिए। किसी से भी जबरदस्ती नहीं करते, केवल बताते हैं कि यही पथ है।'

'अम्मा ने उनसे कहा कि गृहस्थाश्रमी होकर जीवन बितावें। वे उसके लिए तैयार नहीं हुए। तब कहा कि यदि यह बात हो तो अमुक ढ़ंग से आगे बढ़ना चाहिए। यदि वे ऐसा नहीं कर पाते तो दूसरे क्षण यहाँ से जा सकते हैं। उसकी आज़ादी है। यह सब के लिए सुगम नहीं है। अतएव किसी को हठ करके इसमें नही लाते। गृहस्थाश्रमी होने का उपदेश ही देते हैं। जबरदस्ती नियन्त्रण मत करो। प्रयत्न करके देखो। संभव नहीं हुआ तो गृहस्थाश्रम स्वीकार करों। यही बताया जाता है।'

'अगर नट की पोशाक पहन ली तो ठीक से अभिनय करना चाहिए। नहीं तो उसका प्रयत्न नहीं करना। लक्ष्यप्राप्ति ब्रह्मचर्य के बिना संभव नहीं। हमारे महात्माओं ने क्या कहा हैं?'

युवक- 'किस महात्मा की बात कह रहीं हैं?'

अम्मा- 'बुद्ध, श्रीरामकृष्णदेव, विवेकानन्द, रमण भगवान, रामतीर्थ, चट्टंबि स्वामी, श्रीनारायणगुरु इन सबने क्या कहा है? बुद्ध, रामतीर्थ, तुलसीदास आदि क्यों पत्नी को छोड़कर चले गए? श्रीशंकराचार्यजी ने बाल्य में ही क्यों संन्यास ग्रहण किया? क्या ब्रह्मचर्य की ज़रूरत न होने से? श्रीरामकृष्णदेव ने विवाहित होने के बावजूद आदर्श के लिए ब्रह्मचर्य का उदाहरण दिखाया न?'

'ब्रह्मचर्य का मतलब आज हम जो सोचते हैं सिर्फ वह नहीं है। अविवाहित रहना ही नहीं। हर कदम परमतत्त्व की खोज में चलना होता है। उसके विपरीत कोई चिन्ता मन में नहीं उठनी चाहिए। दूसरों पर टीकाटिप्पणी न करना, अनावश्यक बात न सुनना, अनावश्यक दृश्य न देखना, अनावश्यक बातचीत न करना- यें सब नियम ब्रह्मचर्य के अन्तर्गत हैं। हमारा हर चिन्तन और काम पवित्र रहना चाहिए। तभी यथार्थ ब्रह्मचर्य प्राप्त होगा। आध्यात्मिक पथ पर ब्रह्मचर्य अनिवार्यतः होना चाहिए।'

'प्रारम्भ में चिन्तन के स्तर पर नियंत्रण कठिन रहेगा। इसलिए बाहरी स्तर पर ब्रह्मचर्य अवश्य होना चाहिए। ब्रह्मचर्य का पालन न करने पर साधना से प्राप्त सारी शक्ति नष्ट हो जाएगी। बलपूर्वक पकड़कर रोकने की बात नहीं कहती। जिन्हें ध्येय की चेतना हो उन्हें यह नियंत्रण बड़ा कठिन नहीं हैं।'

'खाड़ी देशों में नौकरी के लिए जानेवाले कितने ही वर्षों बाद लौटते हैं। वे उतने वर्ष पत्नी और बच्चों से दूर रहते हैं न? नौकरी की याद के सामने पत्नी, पुत्र व मुल्क आदि कुछ नहीं होते। इसी प्रकार जिसे केवल साक्षात्कार का लक्ष्य होता है, उसमें उसी की चिन्ता रहती है। शेष सभी चिन्ताएँ अस्त होती हैं। जबरदस्ती पकड़कर रोकने की ज़रूरत नहीं है।'

'बाहरी स्थिति में ही सुख समझने के कारण उसके लिए प्रयत्न कर अपनी सारी उर्जा नष्ट करते हैं। इसलिए स्वयं मनन करके तत्त्वों को समझना चाहिए। ईश्वरप्रेम व एकाग्र तपस्या के ज़रिए शक्ति का संग्रह करना चाहिए। आनन्द को अन्य वस्तुओं में समझने के कारण अपनी उर्जा नष्ट होती हैं। यह पहचानकर उसके अनुसार काम करनेवालों को यह बड़ी कठिन बात नहीं है। कुछ पौधे हैं। इनमें पत्ते बढ़ें तो फल नहीं लगते। उसके बाहरी पत्तों को छाँटना चाहिए। तभी वे पौधे फुलते और फलते हैं। बड़ी संख्या में फूल मिलते हैं। इसी प्रकार बाह्य सुख पर मोहित हो जावें तो आंतरिक सत्ता का पता नहीं कर सकते।'

युवक– 'भारतीय संस्कृति क्या लौकिक जीवन को पूर्णरूप से ठुकराती है?'

अम्मा– 'नहीं, इतना ही कहती है कि यथार्थ आनन्द उसमें नहीं है।'

युवक– 'तो क्या लौकिक जीवन के आनन्द का अनुभव करते हुए लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकते?'

अम्मा– 'जो व्यक्ति साक्षात्कार की तीव्र इच्छा रखता है वह दूसरे जीवन के बारे में या भौतिक सुख के विषय में सोच तक नहीं सकता। जो ऐसा नहीं कर सकते वे लौकिक जीवन जारी रखने पर भी उसकी निस्सारता पहचानकर पूर्ण विराग पाने और जप-ध्यान

करके तीव्र विराग से त्यागमय जीवन बिताने से लक्ष्य पर पहुँच सकते हैं।'

युवक- 'क्या लौकिक जीवन बिताते हुए कभी आत्मसाक्षात्कार नहीं पा सकते?'

अम्मा- 'जो भी हो, उसमें सुख का अनुभव करते हुए आत्मा की मिठास जान नहीं सकते। जिस बर्तन में इमली रखी हो उसमें खीर ड़ालकर पीने से खीर का स्वाद कैसे समझ सकेंगे?'

युवक- 'क्या आप उसकी व्याख्या करेंगीं?'

अम्मा- 'भोग सुख अनुभव करते समय क्या उसमें आनन्द नहीं पाते? उसका नियंत्रण किए बिना आत्मानुभूति के स्तर तक पहुँच नहीं पाएँगे। तुम विवाह कर लो। बच्चों के साथ जीवन बिता लो। उसके साथ साथ उस परमात्म पद पर मन को निरन्तर केन्द्रित कर सकोगे तो कोई सवाल नहीं है। इसके बदले जो व्यक्ति केवल लौकिक में आनन्द खोजता है उसे अलौकिक आनन्द कैसे मिलेगा?'

युवक- 'लौकिक जीवन हमारे जीवन का ही एक अंग है। अन्य लोगों के लौकिक बंधन के फलस्वरूप ही हम हुए हैं न? स्त्री-पुरुष संबंध ही न हो तो संसार की स्थिति क्या हो जाए? तब उसका निषेध कैसे करें? उस संबंध के कारण जो परम आनन्द हो वह हमारे लिए कैसे निषिद्ध हो सकता है?'

अम्मा- 'अम्मा नहीं बताती कि उसे एकदम ठुकरा दें। पर जानना चाहिए कि सही आनन्द उसमें नहीं है। समझना चाहिए कि मिठास फल के छिलके में नहीं, भीतर है। फल के भीतरी तत्त्व में जो मिठास देख चुका वह छिलके को केवल छिलके का स्थान ही देगा। वह समझ जाएगा कि यह ध्येय नहीं है। मन में परमात्मा से ही उसका संबंध रहेगा। गृहस्थ जीवन बिताते हुए भी परमलक्ष्य पर पहुँच सकते हैं। किन्तु उस मछली की तरह जो कीचड़ में रहते हुए भी कीचड़ से निर्लिप्त रहती है निस्संग होकर जीना चाहिए।'

'पुराने ज़माने में सभी वर्णाश्रम धर्मों का पालन करते थे। वे शास्त्रोक्त प्रणाली से जीवन बिताते थे। वे ईश्वर को ध्येय बनाकर

जीते थे। वे केवल क्षुद्र इन्द्रियसुख नहीं चाहते थे। एक पुत्र के, जिसे पिता का ही प्रतिबिम्ब मानते थे, पैदा होने के बाद पति पत्नी को अपने प्रतिबिम्ब की जन्मदात्री के रूप में माँ के समान देखता था। पुत्र जब बालिग हो जाता तब परिवार का सारा दायित्त्व उस पुत्र को सौंपकर वानप्रस्थ स्वीकार करते थे। तब तक पति-पत्नी को गृहस्थ जीवन के ज़रिए पक्वता प्राप्त हुई होगी। सन्तानों की देखभाल करते, नौकरी करते, कई कठिनाइयों का सामना करते उन्हें पक्वता अपने आप मिलती थी। वानप्रस्थ काल में पत्नी साथ रहती थी। अन्त में वह नाता भी छोड़कर पूर्ण संन्यास स्वीकार करते थे, लक्ष्य पर पहुँचते थे। यही पुराने दिनों का रिवाज़ था। किन्तु धन और बन्धुजनों से नाते के कारण, स्वार्थ के कारण, आज कोई उस प्रकार का जीवन बिता नहीं पाते। इसे बदलना चाहिए। लक्ष्य को पहचानकर जीवन बिताना चाहिए।'

युवक- 'क्या ऐसे लोग नहीं हुए हैं जिन्होंने स्त्री-पुरुष संबन्ध में परम आनन्द माना था। क्या ऐसे लोग नहीं हैं जिन्होंने पुत्रों से माता के स्नेह का लौकिक आधार माना है?'

अम्मा- 'उन लोगों ने वही सीखा है। वे उतना ही देख सके हैं। लौकिक संबंध का आधार भी केवल काम विकार न हो। यथार्थ स्नेह ही पारिवारिक संबंध की नींव होना चाहिए। सभी प्रेम पर निर्भर करता है। प्रेम नहीं हो तो कोई नयी वस्तु हो नहीं सकती। उस प्रेम का स्रोत ईश्वर है न कि ऐन्द्रिय आवेग। सो हमें समझना चाहिए।'

'बेटा, कुछ लड़के कहा करते हैं कि अम्मा, काम विकार हमारे मन को बहुत शिथिल कर रहा है। सहोदर भावना तक नष्ट होने लगती है। किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। ऐसी स्थिति का कारण क्या है? बेटा, आदमी ऐन्द्रिय-विकार के अधीन होकर जीता है। उसे फिर से प्रोत्साहन देकर बढ़ावें तो संसार की गति क्या हो जाएगी? इसलिए ऐसे कहने में क्या गलती है कि तुम अपनी ओर मुड़ो और यथार्थ आनन्द का स्रोत ढूँढ़ो। गलत काम करनेवाले को क्या फिर से गलती की ओर धकेलना चाहिए या उससे पीछे हटाना चाहिए?'

'अनेक गलतियाँ करके जिये हुए लोग ही साधना के ज़रिए मन पर नियंत्रण पाकर जग के उपकारी हो सके। जो अपनी बहन तक को काम विकार की दृष्टि से देखते थे वे परस्त्रियों को भी अपने बहन के रूप में देखना सीख गये तो अम्मा कैसा उपदेश दे? विकार का मार्ग बताये या विचार का?'

'एक घर में पाँच लोग हैं। उनमें एक अविवेकी है। दूसरा विलासी। तीसरा हर आदमी से झगड़ा करता है, चौथा आँख में पड़ती हर चीज़ चुराता है। किंतु पाँचवा आदमी इनसे भिन्न है। सत्व प्रकृति का व करुणाशील है। दानशील है। सरल जीवन बिताता है। सही ढंगसे कर्म करनेवाला है। वास्तव में यह पाँचवा ही उस घर काताललय संतुलित करता है। इन पाँच लोगोंमें हम किसका अनुकरण करें? अम्मा उतना ही कह सकती हैं। अम्मा दूसरों को ठुकरा नहीं रही। इस मार्ग पर उनके भी आने की प्रार्थना करती है। तभी विश्व में शान्ति व चैन बनाए रख सकेंगे।'

युवक- 'इस आत्मानन्द की थोड़ी सी व्याख्या कीजिए न?'

अम्मा- 'बेटा, वह अनुभव है। क्या एक फूल की सुंदरता शब्दोंमें बताई जा सकती है? क्या अनंतता का सौंदर्य वर्णन किया जा सकता है? शहद की मिठास क्या शब्दों में बताई जा सकती है? मुझे एक थप्पड़ मिली और मुझे बड़ा दर्द हुआ। इससे बढ़कर क्या बता सकती हूँ कि कितनी मात्रा में दर्द हुआ? केवल बुद्धि से आध्यात्मिक अनुभूति पाई नहीं जा सकती। उसके लिए हृदय चाहिए। बुद्धि कैंची की तरह कतरती जाती है। हृदय सुई की तरह पिरो देता है। दोनो अपनी अपनी जगह ज़रूरी हैं। पक्षियों के पंखों के समान। यह बात नहीं कि बुद्धि नहीं चाहिए। हमें बुद्धि चाहिए। नदी का कगार टूटने ही वाला है। नदी में पानी के बढ़ने से संपूर्ण ग्राम पानी में डूब जाएगा। इस पर इसको बचाने का उपाय तुरंत करना चाहिए। ऐसे वातावरण में बुद्धि ज़रूरी है। उसी प्रकार दुर्बल भी नही होना चाहिए। कुछ लोग फालतू बातों के पिछे रोया करते हैं। वह नहीं करना चाहिए। किसी भी प्रतिबंध से हार नही मानना चाहिए। किसी भी परिस्थिति का सामना करने की शक्ति अपने भीतर ही खोज लेनी चाहिए। वह आध्यात्मिक साधनासे ही संभव है।'

अम्मा के शब्द जिज्ञासु के मन के संदेहमेघ को दूर हटाकर ज्ञान की सूर्यप्रभा प्रकट करनेवाले मंद पवन की तरंगों के समान अनुभव हो रहे थे।

१९८६ जनवरी ७ मंगलवार

समय सुबह ९.४५ बजे

अम्मा ब्रह्मचारियों के साथ ध्यानकक्ष में

अम्मा- (ब्रह्मचारियोंसे) 'बच्चों, अम्मा को व्यक्तिभाव में देखते रहने से उन्नति नही कर सकोगे। अम्मा के इस शरीर को नहीं बल्कि जगन्माता को प्यार करना चाहिए। तत्व को पहचानकर अम्मा को भीतर व बाहर संपूर्ण चराचर में देखने की शक्ति पानी चाहिए। गाड़ी में चढ़ जानेपर उसीको अपना लक्ष्य मानना नहीं चाहिए। गाड़ी लक्ष्य तक पहुँचने में मदद देगी, बस।'

जयचंद्रबाबू नामक युवकने आकर अम्मा को प्रणाम किया। उसका गाँव तिरुवनंतपुरम है। आश्रम में स्थायी रूप से रहने के इरादे से आया है। पिछले दर्शन के समय प्रथम बार आश्रम आया था। घर पर एक चिट्ठी लिख छोड़ी और फिर आश्रम आ गया।

अम्मा बाबू से बोलीं- 'बेटा, अब यहाँ रहे तो घरवाले बड़ा हंगामा मचायेंगे। वे अम्मा पर आरोप लगायेंगे। कहेंगे कि अम्माने घरवालों कि अनुमति के बिना बेटे को आश्रम में जबरदस्ती रोका है। इसलिए फिलहाल बेटा घर जाना।'

बाबू पहले सहमत नहीं था। अम्मा ने आग्रह किया तो जाने को राज़ी हुआ। बाबू अम्मा को प्रणाम करके उठा।

अम्मा- 'बेटे के पास यात्रा का खर्च है?'

बाबू- 'पूरे नही पड़ेंगे। वापस जाने का इरादा न होने से लिए नहीं।'

अम्माने ब्रह्मचारी कुंजुमोन से कहा कि ऑफिस से पैसे लेकर दे दो। बाबू कुंजुमोन के साथ ऑफिस चला। अम्मा की बातें जारी रहीं।

सगुणाराधना की सुगमता

'कुछ लोग कहते है कि रूप का ध्यान मत करो। ब्रह्म का रूप नहीं। इसलिए ब्रह्म का ही ध्यान करना। इसमें क्या युक्ति है? एक संकल्प लेकर उसका ही ध्यान करते हैं। दीप का ध्यान करें या शब्द का। यह सब संकल्प हैं। रूपध्यान से उसका अंतर क्या है? निर्गुण ब्रह्म का ध्यान करने पर भी उससे प्रेम न हो तो ध्यान कैसे करेंगे? तो वह भी भक्ति ही है। ब्रह्म पर व्यक्तिभाव की कल्पना ही ईश्वर है।'

यह सुनकर ब्रह्मचारी राव ने कहा- 'उस ईश्वर को ही हम अम्मा के रूप में देखते हैं।'

अम्मा- (हँसते हुए) 'ब्रह्म के सिर, आँख, नाक, हाथ, पाँव सबकी कल्पना कर देखो। कैसा रहेगा?' (सब हँस पड़ते है)

इससे क्या लाभ होगा?

अम्मा- 'ब्रह्म के व्यक्तिभाव की कल्पना करने से आराधन सुलभ हो जाता है। उस परमतत्व का प्रेम से शीघ्र साक्षात्कार कर सकेंगे। पानी की टंकी का पूरा जल नल से बहेगा। हम आसानीसे प्यास बुझा सकेंगे।'

तब ब्रह्मचारी वेणु ने एक शंका प्रकट की।

वेणु- 'कहते हैं कि जरासंध ने भगवान कृष्ण को खदेड़ा था।'

अम्मा- 'वे दुसरों को सिखाने भागते है, किसी के ड़र से नहीं।'

वेणु- 'इसके अलावा जरासंध को भगवान के हाथ से मृत्यु पाने का भाग्य नही था, है न अम्मा?'

अम्मा- 'वह भी ठीक है। यही नहीं एक व्यक्ति का दंभ जितना बाहर लाया जाय उतना लाने के बाद ही भगवान उन्मूलन करते है। छोटा मुन्ना जब नखरा करता है तब पिता भी बच्चे के साथ उछलते है। वह बच्चे के ड़र से नहीं।'

दूसरा ब्रह्मचारी- 'इन दिनों ध्यान के समय गहरी नींद आती हैं।'

अम्मा- 'बेटा, सबेरे कुछ दौड़ना चाहिए। कुछ शारीरिक श्रम करना

चाहिए। तम को रजोगुण से दूर करना होगा। कोई काम न करनेसे वात व पित्त का प्रकोप होगा। ध्यान असंभव होगा, आलस आता रहेगा। जो लोग काम किए बिना रहते हैं उन्हें भगवान अंत में बड़ा कष्ट देते है।' (अम्मा हँसती है)

अम्मा शास्त्रीजी के साथ

अम्मा ध्यान कक्ष से बाहर आईं। बाहर प्रतीक्षा में खड़े एक शास्त्रीजीने अंगोछा कमर पर बाँधे अम्मा को साष्टांग प्रणाम किया। शास्त्रीजी की उम्र ६० वर्ष से अधिक होगी। झोले में हमेशा ब्रह्मसूत्र ग्रंथ लिए चलते हैं। प्रतिदिन वे इसका स्वाध्याय करते हैं। चालीस वर्षोंसे यह क्रम जारी है। उन्होंने अपने लाए फल अम्मा के चरणोंपर समर्पण किए। अम्मा उन्हें लेकर ध्यानकक्ष के बरामदे पर बैठ गईं।

अम्मा- 'बेटे, कब आए?'

शास्त्रीजी- 'मैं तिरुवनंतपुरम गया था। वहाँसे आ रहा हूँ। मेरा पुत्र यहाँ आया था। उसीसे मैं अम्मा के बारे में जान सका। लौटते हुए अम्मा के दर्शन करने की इच्छा हुई।'

अम्मा कुछ समय ध्यानस्थ रहीं। अम्मा की आँखे खुलीं। यह देख शास्त्रीजी ने बातें जारी रखीं।

अम्मा मैं गत ३५- ४० वर्षोंसे दर्शन पढ़ता, भाषण देता रहा हूँ। किंतु आज तक मनशांति प्राप्त कर नहीं सका।

वेदान्त व्यावहारिक हो

अम्मा- 'बेटा, वेदान्त पढ़ने व व्याख्यान देने की चीज़ नही है। जीवन में अंमल में लाने का तत्व है। घर का नक्शा कागज पर बड़े कलापूर्ण ढ़ंगसे तैयार कर रंग चढ़ा दो तो भी उसमें रह नही सकते न? पानी व धूप से बचने के लिए एक आसरा चाहिए तो पत्थर व मिट्टी ढ़ोते हुए घर का निर्माण करना ही पड़ेगा। उसी प्रकार दर्शन तत्वों का ज्ञान अनुभूति के स्तर पर पाने के लिए

साधना अनिवार्य है। बेटा, मन पर नियंत्रण लाए बिना केवल ब्रह्मसूत्र रटने से ही लाभ नही होगा। रटने का काम तो तोता व टेपरिकार्ड्र भी करते हैं। उनमें और हममें क्या फर्क है?'

शास्त्रीजी ने रोज़ पंचदशी और ब्रह्मसूत्र पारायण करने की बात अम्मा को नहीं बताई थी। अम्मा को उसका ज़िक्र करते सुनकर वे आश्चर्यचकित हुए।

इसके पश्चात् शास्त्रीजी ने अम्मा से अपनी व्यक्तिगत समस्याएँ निवेदन की। अम्मा ने उस बेटे को सहलाते हुए सान्त्वना दी। शास्त्रीजी को बगल में बिठाकर, अम्मा ने दूसरे भक्तों को दर्शन देने का क्रम जारी रखा। अम्मा को ध्यानपूर्वक अपलक देखते रहे शास्त्रीजी की आँखे छलछला उठीं। यह देख अम्मा ने उँगलियों से फिर से उनकी छाती सहलाकर सान्त्वना दी।

शास्त्रीजी- 'मैंने गत चालीस वर्षों से जो शान्ति नहीं पाई, उसका अनुभव कर रहा हूँ। मुझे आगे शिक्षा और पाण्डित्य कुछ नहीं चाहिए। अब जो शान्ति अनुभव कर रहा हूँ, वह नष्ट न होने पावें। अम्मा इसका आशीर्वाद दें, बस।'

अम्मा- 'नमः शिवाय। बेटा, वेदान्त का अध्ययन कर उसे मस्तिष्क में जमाए रखना ही काफी नहीं है। उसे हृदय में लाना है। साधना का ध्येय वही है। तभी हम दर्शन में बताए तत्त्वों का अनुभव कर सकेंगे। शहद हथेली में ड़ाला। सुना है कि शहद मीठा होता है। मगर शहद चखने पर ही मिठास अनुभव होगी। उसी प्रकार बुद्धि से प्राप्त ज्ञान को हृदय से जोड़ना चाहिए। वहीं अनुभव आता है। एक स्तर पर बुद्धि और हृदय के एकाकार होने की स्थिति होगी। वह स्थिति वर्णनातीत है। अनुभूति है। बेटा, उस अनुभूति के लिए सारे ग्रंथ सीखना ज़रूरी नहीं है। केवल ईश्वर ही सत्य है, इसका साक्षात्कार होना चाहिए। फिर भगवान को सदा स्मरण करना, हृदय को शुद्ध बनाना। समस्त चराचर में भगवान के दर्शन करना- सबको प्यार करना। बस, और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। जो भी चाहिए सब अपने आप आ जाएगा।'

शास्त्रीजी- 'मैं कई महात्माओं की सन्निधि में और आश्रमों में गया

हूँ। मगर आज ही मेरा हृदय खुला। यह मैं अनुभव कर रहा हूँ।'

अम्मा शास्त्रीजी के आँसू पोंछती हैं।

शास्त्रीजी- 'कम से कम अभी यहाँ आ सका, यह अम्मा का आशीर्वाद है। मैं यहाँ दो दिन ठहरना चाहता हूँ, अगर अम्मा अनुमति दें तो।'

अम्मा- 'बेटे की इच्छा।' उनके ठहरने की सुविधा कराने का काम एक ब्रह्मचारी को सौंपकर अम्मा अपने कमरे की तरफ गईं।

दर्शन के बाद तीन बजे अम्मा आश्रम के उत्तरी भाग के अहाते में गोशाला के पास आकर बैठ गईं। उनके साथ ब्रह्मचारी और शास्त्रीजी हैं।

अभ्यास योग

एक ब्रह्मचारी- 'मन को किस तरह सदा ईश्वर पर जमाए रख सकते हैं?'

अम्मा- 'उसके लिए निरन्तर अभ्यास चाहिए। आठों पहर ईश्वर-स्मरण करना हमारी आदत नहीं रही है। इसलिए एक नई आदत बना लेनी पड़ेगी। इसी के लिए जप करने का उपदेश दिया जाता है।'

'भोजन और निद्रा की वेला में भी जप नहीं टूटना चाहिए। वस्त्र जब हाथ में लेते हैं तब वस्त्र ईश्वर है, बाल संवारने कन्घी लेते समय कन्घी भी ईश्वर है, ऐसी कल्पना करनी चाहिए। गणित सीखते हुए छात्र चलते, शौचालय जाते, पहाड़े रटा करते हैं। एक और एक दो, दो और एक तीन, तीन और एक चार, आदि। वे ज़बानी याद करते हैं। अगर स्कूल में ज़बानी न सुनावें तो सज़ा मिलेगी, उसका डर है। इसलिए हर काम में वे पहाड़े की याद करते हैं। उसी प्रकार हम भी एक कल्पना करते हैं। जो चीज़ लें, उसमें ईश्वर को देखना चाहिए। जानना चाहिए कि संसार में ईश्वर के सिवा और कुछ नहीं है। उस शक्ति के बिना कोई भी कुछ करने में असमर्थ रहेगा।'

'निद्रा और भोजन में ईश्वर का ही चिन्तन होना चाहिए। तू ही मेरा आसरा है, और कुछ भी स्थायी नहीं। तेरे सिवा और किसी का स्नेह स्थायी नहीं। स्नेही संबंधी शरीर के जिस अंग को सहलाते हैं, उस अंग से उनके हाथ हटाने पर वहाँ व्रण-सा अनुभव होता है। फिलहाल, आराम महसूस होता है। वे हाथ में ज़हर लिए हुए हमारे अंगों को सहलाते हैं। इन सब के स्नेह से मुझे अन्त में दुःख ही मिलेगा। उनकी राह देखने से मेरा उद्धार नहीं है। भगवान ही मुझे सन्तुष्टि दे सकेंगे- ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए। दूसरों की मदद करने के लिए भी इस विराग के अलावा और कोई रास्ता नहीं है। इसलिए दृढ़ आस्था होनी चाहिए कि ईश्वर ही नित्य हैं।'

'इतने दिनों से बटोरी हुई वासनाओं का उन्मूलन करना है, जो एक साथ संभव नहीं है। निरंतर प्रयत्न आवश्यक है। चलते, बैठते, सोते सदा मंत्र जपना होगा। भगवान का रूप मन में देखते हुए जप करते समय चिन्ताएँ कुछ न कुछ कम हो जाएँगी। उस हद तक मन शुद्ध बनेगा। 'मैं' का दंभ दूर करने 'तू' (ईश्वर) का साबुन काम में लाना चाहिए। तब 'अहं' का 'मैं' जाएगा और परम 'मैं' हममें निखरेगा।'

ब्रह्मचारी- 'इष्टदेवता को देखते हुए कैसे जप किया जा सकता है? वह कठिन है न?'

अम्मा- 'बेटा अब अम्मा से बातें कर रहा है। अम्मा को देखते हुए बातें कर रहे हो न? अम्मा को देखने से क्या बातें करने में कोई तकलीफ है? बेटा बोलता है, अम्मा को देखता भी है। इसी तरह इष्टमूर्ति का रूप देखते हुए जप करना संभव है। ऐसा नही कर पाए तो यों ही 'अम्मा, अम्मा, अम्मा.. मुझे शक्ति दो। मेरे अज्ञान को दूर करो- मुझे अपनी गोद में स्थान दो- आज तुम्हारी गोद ही मेरी अकेली शरण है। उसी में मुझे शान्ति मिलेगी। इस संसार में मुझे क्यों धकेल रही हो? तुम्हारे बिना क्षण भर भी रह न सकूँगा। तुम सब को अपना लेती हो न? मेरे मन को अपना लो।' इस प्रकार इष्टदेवता से विलापपूर्वक प्रार्थना करनी चाहिए।

ब्रह्मचारी- 'ऐसी प्रार्थना करने के लिए भी भक्ति चाहिए न? वह

भक्ति नहीं आती। अम्मा कहती हैं कि ईश्वर को पुकारते पुकारते रोना चाहिए। मगर रुलाई आवे तो!'

अम्मा- 'रुलाई नहीं आती तो कहते बोलते रुलाई लानी चाहिए। एक छोटा बालक अपनी प्रिय वस्तु खरीद लाने के लिए माँ से झगड़ा करता है न? रोते-रोते माँ के पीछे ही चल पड़ता है। जब तक प्रिय वस्तु न मिले, तब तक रुलाई बन्द नहीं करता। इसी प्रकार हमें अम्मा को तंग करना चाहिए। रोते रहना चाहिए। अम्मा को क्षण भर की शान्ति न दें। 'तुम्हारे दर्शन दो, तुम्हारे दर्शन दो' निहोरा करते रोना चाहिए। जो कहते हो कि रुलाई नहीं आती उसका अर्थ है कि बेटे में इसकी अभिलाषा नहीं है। अभिलाषा होने पर कोई भी व्यक्ति रो उठेगा।'

'अगर रुलाई नहीं आती तो प्रयत्न करके ही सही रोना चाहिए। तुम्हें जब भूख लगे तब भोजन नहीं, न हाथ में पैसा हैं, तब कहीं जाकर प्रयत्न करके खाओगे। उसी तरह यह माँगते हुए रोना कि 'तुम क्यों मुझे रुलाई नहीं देते? मुझे क्यों नहीं रुलाते? क्या इसका मतलब यह नहीं की तुम मुझे पसन्द नहीं करते? अगर तुम्हें मैं पसन्द नहीं हूँ तो मैं कैसे जीऊँ?' ऐसा कहना चाहिए। तब प्रभु शक्ति देंगे। रो सकोगे। यों बताते हुए रो सकते हो। अम्मा ने ऐसा ही किया था। तुम भी ऐसी कल्पना कर लेना।'

'यह रुलाई दुःख के कारण नहीं, आनन्द से है। भीतर का आनन्द है। वें आँसू परमात्मा में जीव के लीन होने पर आते हैं। हमारे आँसू भगवान पर सिद्धि हैं। वह भीतर का आनन्द है। दर्शकों को ही वह दुःख लगता है। वह पाने के लिए संकल्प करना चाहिए। नहीं तो हमारा मन भगवान के निकट नहीं जाएगा। बेटा, प्रयत्न करके देखो न?'

ब्रह्मचारी- 'पहले भगवान के रूप का ध्यान करता था। अम्मा को देखने के बाद वैसा नहीं कर पाया और अम्मा के रूप का ध्यान करने लगा। अब वह भी संभव नहीं। अम्मा के विषय में सोचते समय भगवान का रूप बीच में घुस आता है। भगवान पर सोचता हूँ तो अम्मा का रूप दखल देता है। यह तय कर नहीं पाता कि किस रूप का ध्यान करूँ। तब बड़ा दुःख होता है। अब किसी

रूप का ध्यान नहीं करता, मंत्र के शब्द पर मन को एकाग्र करके ध्यान करता हूँ।'

अम्मा- 'बेटे को जिस में रुचि हो उसी पर मन को जमाकर बढ़ना चाहिए। सब को उसी में देखना चाहिए। उसे तुमसे अभिन्न देखना चाहिए। किसी को भी देखें, कोई भी वस्तु देखें, सब को ईश्वरके विभिन्न पहलू जानना चाहिए।'

शास्त्रीजी- 'ध्यान में इष्टरूप को स्पष्ट देखने क्या करना चाहिए अम्मा?'

प्रेम प्रधान है

अम्मा- 'इष्टरूप से प्रेम होनें पर ही रूप निखर उठेगा। हमेशा यह चिन्ता होनी चाहिए कि दर्शन नहीं मिल रहे हैं। एक प्रेमी को प्रेमिका से जो भाव है वही साधक को ईश्वर के प्रति होना चाहिए। ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि क्षण भर भी भगवान से अलग नहीं रह सकते। उतना प्रेम होना चाहिए। प्रेमिका को नीली साड़ी पहने देखा है तो कहीं भी नीला रंग देखो, प्रेमिका को ही देखोगे। उसी का रूप स्मृति में आता है। भोजन में, निद्रा में उसी की चिंता होगी। सुबह दतौन और नाश्ते के समय भी यही चिन्ता होगी कि प्रेमिका इस समय क्या कर रही होगी। इतना गाढ़ प्रेम इष्टदेवता के प्रति होना चाहिए। इष्टदेवता को छोड़ और किसी चीज़ पर सोचने में असमर्थ होना चाहिए। करैले को भी गुड़ में ड़ाल रखें तो कुछ दिन बाद उसकी प्रकृति बदलेगी, मधुर हो जाएगी। उसी प्रकार हमारा मन कितने ही बुरे विचारों से भरा हो, सदा भगवान के बारें में सोचें तो, उनको समर्पण करें तो शुद्ध हो जाएगा।'

'एक गोपी वृन्दावन में पैदल चल रही थी तो पथ पर एक वृक्ष के नीचे एक गढ़ा देखा। तब गोपी कल्पना करने लगी- कृष्ण इस रास्ते से आए होंगे। तब उनके साथ रही गोपी ने भगवान से कहा होगा कि समीप के वृक्ष का फूल चाहिए। भगवान उस गोपी के कन्धे का सहारा ले ऊपर उछले होंगे।

उनके चरणों के अंकित होने के कारण यह गड्ढा बना है। वह गोपी दूसरी गोपिओं को बुला बुलाकर भगवान के चरणस्पर्श से बना गड्ढा दिखाने लगी। वे भगवान के चिन्तन में शेष सब भूल गईं। चारों तरफ खड़े लोग उस गोपी को कृष्णमय दिखाई देने लगे। किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रखा तो गोपी उसे श्रीकृष्ण का करस्पर्श कल्पित करके भक्तिभावना से मूर्च्छित हो गई। पास खड़े लोगों में भी श्रीकृष्ण स्मृति से वाह्यबोध नष्ट हो गया। सब भगवान के चिन्तन से आनन्द के आँसू बहाने लगे। हममें यह भाव होना चाहिए। हर बात को भगवान के माध्यम से ही देखना। भगवान को छोड़ और कोई जगत नहीं। ऐसे लोगों को ध्यान के समय इष्टरूप स्पष्ट पाने विशेष प्रयत्न करने की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि हर घड़ी उनके मन में भगवान हैं।'

'वृक्षलतादियों! मेरी अम्मा कहाँ हैं? पक्षिमृगादियों मेरी माँ कहाँ है? हे समुद्र, हे झील, तुम्हें चलने-हिलने की शक्ति देनेवाली वह शक्तिस्वरूपिणी माँ कहाँ?' इस तरह से हमारा मन जिस किसी चीज़ को देखने पर भी विलाप कर उठे। कल्पना से विलाप कर सकते हैं। इस प्रकार परिश्रम करते हमारा मन बाधाओं को लाँघकर हमेशा उस भगवद्‌चरणों से संलग्न होता है। बेटा, ऐसी कल्पना करो तो वह पूर्णतः संभव है।'

ब्रह्मचारी- 'दूसरे लोग भूल कर रहे हैं ऐसा कभी कभी लगता है। उससे हमारी मनःशान्ति नष्ट हो जाती है। दूसरों के प्रति सहनशील रहना कैसे सीखें?'

अम्मा- 'अगर हमारा हाथ हमारी आँखों में अनजाने चुभ जाए तो उस हाथ को दूसरे हाथ से तोड़ते मारते नहीं हैं। वहाँ सज़ा नहीं दी जाती। क्षमा करेंगे। पैर टकराए, या हाथ कटे तो सहन कर लेंगे। हाथ, आँख, पाँव आदि मुझसे भिन्न नहीं हैं। हम जानते हैं कि वे सब मेरे ही अंग हैं। इसलिए क्षमा करते हैं। दर्द कितना भी हो झेलते हैं। यों दूसरों को भी अपने समान देखना चाहिए। देखना चाहिए कि ये सब मुझमें है और मैं ही सभी में व्याप्त हूँ। मुझसे अन्य कोई नही है यह याद रहे। तब हम दूसरों की

भूल देख नहीं पाएँगे। देखने पर भी उसे अपनी भूल मानकर क्षमा कर सकेंगे। नहीं तो ऐसा समर्पण भाव चाहिए जैसा सुदामा में था। जो भी आए प्रभु की इच्छा! वह दास-भावना होनी चाहिए। तब हम किसी से द्वेष नहीं कर सकते। हमारी विनय भावना बढ़ेगी।'

'बेटा, या तो सब में 'मैं' ही देखना! नहीं तो सब को ईश्वरमय देखना। सब की सेवा करनेवाला दास बन जाना चाहिए।'

'बेटे, हमें हर क्षण बड़ी सावधानी से जीना चाहिए। भोजन के पहले यह कहना कि, 'प्रभु! क्या दूसरों ने भोजन किया? क्या उन्हें सब ज़रूरी चीज़ें मिलती हैं? आप ऐसा आशीर्वाद दें कि उन्हें उचित समय पर सभी चीज़ें प्राप्त हों।' ऐसी प्रार्थना करके धीरज से मंत्र जप करके ही भोजन करना। हमारे मन में पहले कष्ट झेलनेवालों के प्रति करुणाभाव होना चाहिए। तभी मन निर्मल होगा। वह करुणा ही हमें ईश्वर से घनिष्ठ बनाती है।'

भक्तिसाधना पर बोलती अम्मा ने विश्वप्रेम का वर्णन करते हुए अपने अमृतभाषण का उपसंहार किया। ब्रह्मचारीगण एवं शास्त्रीजी अम्मा के अमृतनिष्यन्दी उपदेश वचनों का स्मरण करते करते प्रफुल्लचित्त हो गए।

१९८६ जनवरी १५ बुधवार

समय प्रभात ८.१५

अम्मा ब्रह्मचारियों के साथ ध्यानकक्ष में बैठी हैं।

अम्मा- 'हम यह कहकर ध्यान करने बैठें कि 'मैं अब ध्यान करूँगा' तो भगवान का रूप नहीं दिखाई देगा। यों ही आँखें बन्द करके बैठे रह सकते हैं। कुछ समय बाद ही सोचेंगे कि, 'हाय्! मैं ध्यानार्थ बैठा हूँ।' इसलिए ध्यानार्थ बैठते समय पहले भगवान को बुलाकर विलाप करना चाहिए- 'हे भगवान्! तुम मेरे सामने आना, तुम्हारी मदद के बिना तुम्हारे दर्शन नहीं हो सकते। तुम ही मेरा आश्रय हो।' यों कहते रोना चाहिए। हमारे सामने भगवान के खड़े रहने की कल्पना करनी चाहिए। यों कुछ समय बाद ध्यान प्रारम्भ करते समय भगवान का रूप स्पष्ट निखर आएगा।'

अम्मा भक्तों के साथ

साढ़े नौ बजे अम्मा बाहर आईं। कुछ दिनों से आश्रम में रहती एक भक्त महिला वापस जाने राज़ी नहीं हो रही थी। अम्मा ने उसे समझाया। वह स्त्री कहती है कि वह अम्मा से जुदा नहीं रह सकती। इस पर अम्मा ने समीप खड़े लोगों से कहा कि पति का पत्र लेकर आए तो आश्रम में रहने की अनुमति देंगे। पति की अनुमति के बिना उसे यहाँ ठहराना ठीक नहीं है। दूसरी महिलाएँ भी इसे आदर्श बनाएँगी। उस बहन के पति आकर पूछें तो अम्मा क्या ज़वाब देगी? दिनों से यह बहिन कहती रहती है कि पति आज आएँगे, कल आएँगे। इस बहिन की एक बालिग बेटी भी है। (भक्त महिला से) अब अम्मा सहन नहीं कर सकती। कल ही जाना पड़ेगा।

भक्त महिला- (रोते हुए) 'वे यदि रविवार को न आवें तो सोमवार को मैं चली जाऊँगी।'

बेटी के आँसुओं के सामने माँ का दिल पिगल गया। अम्मा ने उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

भक्तों को दर्शन देने के लिए अम्मा पर्णशाला की तरफ चलीं। रास्ते में उन्होंने वेदान्त विद्यालय पर नज़र डाली। वहाँ वेदान्त का अध्ययन चल रहा था। एक ब्रह्मचारी दीवार से पीठ टेके अध्यापक की बातें सुन रहा था।

अम्मा- 'बेटे, आध्यात्मिक जीव विद्याध्ययन के स्थान पर यों दीवार पर पीठ टेके नहीं बैठते। सदा जाग्रतासे बैठना चाहिए। हाथ पैर बेकार हिलाना नही चाहिए। किसी चीज़ का सहारा लिए बैठना नही चाहिए। उससे तमोगुण बढ़ेगा। साधक को अपने में ही रहना चाहिए। आध्यात्मिक जीवन आलस्य से बैठकर तमोगुण बढ़ाने के लिए नहीं है। कितनी ही थकान हो, रीढ़ को झुकाए बिना तनकर बैठने का प्रयत्न करना चाहिए।'

अम्मा पर्णशाला पहुँचीं। भक्तों ने एक एक कर अम्मा को प्रणाम किया। गर्दन में कुछ बलहीनता का कष्ट झेलता एक भक्त अम्मा के दर्शन करने आया है। वह अम्मा के दर्शनार्थ दूसरी बार आया

है। प्रथम बार आते समय सिर सीधे खड़ा करने में भी असमर्थ था। रोग के कारण गर्दन शिथिल थी। ऑपरेशन से कोई फायदा नहीं हुआ था। अम्मा ने पहली बार विभूति संकल्पपूर्वक दी। उनसे कहा कि अगली बार आते समय चिताभस्म लाए। वह सज्जन चिताभस्म ले आया है।

अम्मा- 'बेटा, अब कैसा है?'

भक्त- 'काफी सुधार है। सिर सीधा उठा सकता हूँ। यात्रा में भी कठिनाई नहीं। पहले यह संभव नहीं था। बिस्तर पर ही था। गतबार बहुत कष्ट झेलकर ही अम्मा के पास आ सका था। आज वह नहीं है। चिताभस्म लाया हूँ।' (हाथ की पोटली अम्मा को सौंपा।)

भस्म की पोटली खोलकर उस से चुटकी भर हथेली में लेकर अम्मा बोलीं- 'बेटा, इस विभूति में मिट्टी बहुत है। बिना मिट्टी के लाना। आगे लाते समय ध्यान रखना काफी है। अब की बार अम्मा यहाँ से सादा भस्म देंगी।'

पास रखी थाल से कुछ भस्म हाथ में लेकर अम्मा ने उस भक्त की गर्दन पर मल दिया। समीप खड़े ब्रह्मचारी से अम्मा ने भस्म लपेटने के लिए एक कागज़ माँगा। ब्रह्मचारी एक अच्छा सफेद कागज़ फाड़कर ले आया।

अम्मा- 'बेटे, तुम्हें यह अच्छा कागज़ फाड़ने का मन कैसे हुआ? क्या कोई पुराना अखबार नहीं मिला? सफेद कागज़ लिखने आदि के काम में लगा सकते हैं। पुराने अखबार का ऐसा उपयोग नहीं होता। अम्मा प्रत्येक वस्तु के प्रयोजन की बात सोचती है। कभी ज़रूरत से अधिक खर्च नहीं करना चाहिए। वही श्रद्धा भाव है। श्रद्धाभाव होने पर ही विकास कर सकते हैं। भस्म लपेटने अखबार का कागज़ काफी था न?'

स्विटज़रलैंड निवासिनी एक भक्त महिला अम्मा के पास बैठी है। वह आश्रम पहली बार आई है। प्रथम बार अम्मा के दर्शन भी करती है। उसने अम्मा के लिए लाए उपहार एक एक कर दिखाते कहा- 'उपहार चुनने में मुझे बहुत परिश्रम करना पड़ा। मुझे पता नहीं कि अम्मा को कौन सी वस्तु प्रिय होगी?'

अम्मा- 'अम्मा को प्रिय उपहार यह नहीं। अम्मा को बच्चों का मन चाहिए। मगर यह बात है कि यह उपहार चुनते समय बेटी के मन में अम्मा भरी थी।'

'बच्चें प्रेम से ही कोई कोई उपहार लाते हैं। सो ठीक ही है। किन्तु उपहार हमेशा दे नहीं पाएँगे। आगे कोई उपहार ला नहीं सकी तो उसके कारण बेटी दुःखित न होना। यह सोचकर आने में संकोच न करना कि मेरे पास उपहार नहीं है। यह सब उपहार नश्वर हैं। मगर बच्चें मन समर्पण करें तो उसका लाभ शाश्वत रहेगा। वह शुद्ध रूप में वापस मिलेगा।'

भक्त महिला- 'कहते हैं कि गुरुजनों के दर्शनार्थ जाते समय खाली हाथ जाना नहीं चाहिए, हाथ में कुछ न कुछ हो।'

अम्मा- 'वह इसलिए नहीं कि गुरुजनों को कुछ चाहिए। मन समर्पण करने के प्रतीक के रूप में उपहार ले जाते हैं। उनके माध्यम से हम अपने सारे प्रारब्ध गुरुचरणों पर समर्पण कर देते हैं। देने के लिए कुछ नहीं हो तो एक नींबू से भी काम चलेगा। वह भी न मिले तो लकड़ी की खपची भी ठीक है।'.

संभाषण के दौरान एक भक्त महिला आकर अम्मा की गोद में सिर रख कर फूटफूटकर रोने लगी। रोते रोते वह कह रही थी- 'अम्मा, मुझे भक्ति दीजिए। इतने दिनों तक मुझे चकमाती रही। लेकिन अब वह सम्भव नहीं है।' अम्मा उन्हें वात्सल्यपूर्वक सान्त्वना देने का प्रयत्न करती हैं। फिर से वह कहती है- 'अब बहाना नहीं चलेगा। सब कुछ जाननेवाली अम्मा मुझे चकमा देने के लिए कोई न कोई बात पूछती हैं। अम्मा से मैं क्या कहूँ? अम्मा, मुझे मुझसे अधिक जानती हैं।'

यह भक्त महिला अपना भवन आश्रम के नाम लिख देना चाहती है। उसकी अनुमति अम्मा से मिलनी चाहिए। यह रुलाई उसके लिए भी है। मगर अम्मा ने स्वीकार नहीं किया।

अम्मा साढ़े तीन बजे तक भक्तों के साथ रही। उसके बाद ही भोजन किया। अम्मा जब भोजन करने कमरे में आई तब दो ब्रह्मचारी कमरे में अम्मा की प्रतीक्षा में बैठे थे। भोजन करते हुए अम्मा ने उनसे बातचीत की।

'बच्चों को यहाँ आनेवाले लोगों से कुशल समाचार पूछना चाहिए। उनकी सहायता करनी चाहिए। मगर अधिक समय बातचीत में गँवाना नहीं चाहिए। बातचीत के ज़रिए उनमें आस्था बढ़ाने का प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं है। एक पौधा लगाते समय उसमें पहले ही कुछ पत्ते होंगे। लेकिन पौधे की जड़ गहराई में पैठी नहीं होगी। जड़ के पैठने के बाद उगनेवाले पत्ते ही पौधे का विकास दिखाते हैं। स्वयं अनुभव से जो आस्था रखते हैं वही स्थायी होगी। जो जिज्ञासु हैं, सिर्फ उन्ही से विशेष वार्तालाप करना चाहिए।'

एक ब्रह्मचारी ने कल प्रथम बार दर्शनार्थ आए एक भक्त के साथ बड़ी देर तक बातचीत की थी। वह समझ गया कि अन्तर्यामी अम्मा वह जानकर यों बंता रही हैं।

ब्रह्मचारी- 'वे पीछा न छोड़कर प्रश्न पर प्रश्न पूछते रहे तो क्या किया जाए?'

अम्मा- 'सिर्फ उतनी बात करना जिससे उनके सन्देह दूर हों।'

दयामयी की समस्याएँ

समय पाँच बजे

आश्रम में दो तीन दिनों से निवास करते एक युवक को उसके रिश्तेदार आश्रम से वापस ले जाने सुबह आश्रम में पहुँचे हैं। वे आश्रम के उत्तरी भवन के सामने उस बेटे से काफी देर तक बात करते रहे। युवक अम्मा के यहाँ से जाने तैयार नहीं होता। उसकी माँ बड़ी दु:खी थी। अम्मा वहाँ पहुँची और उस स्त्री को भवन के बरामदे पर बुलवाया। वहाँ बैठकर अम्मा ने युवक की माँ से बात की। माँ बेटे को घर भेजने का अनुरोध करती बहुत रोई। अम्मा ने मान लिया। अम्मा के कहने के अनुसार युवक अपनी माँ के साथ चल पड़ा।

उनके जाने के पश्चात अम्मा भवन की सीढ़ियों पर बैठीं। दो-तीन ब्रह्मचारी साथ हैं।

अम्मा- 'अम्मा क्या करेगी? कितनी माताओं को आँसुओं की

कड़वी घूँट पिलानी पड़ती है। यहाँ बड़ी संख्या में ब्रह्मचारी आते हैं। अब की माहौल देखकर लगता है कि सब तुरन्त आ पहुँचेंगे। पिछले दिन नागरकोविल से एक बेटा आया था। उस बेटे को यह कहकर भेजा कि पिता की अनुमति लेकर आओ। इस बेटे को (अभी घर गए युवक) कुछ दिन बाद आने को कहा था। वह मानता नहीं। गत बार आया तो कहा कि माता-पिता की अनुमति लेकर ही आना चाहिए। सभी कहाँ रहेंगे? ब्रह्मचारियों को प्रवेश देने में कुछ नियम बनाने की बात सोच रही हूँ।'

बातचीत और एक विषय पर केन्द्रित हो गई।

अम्मा- 'पन्तलम से एक बेटी भाव-दर्शन के लिए आई थी। परन्तु अम्मा का दिया तीर्थ स्वीकार नहीं किया। अभी वह बेटी बड़ा दुःख पा चुकी है। अब भी समाप्त नहीं हुआ है। अम्मा ने बड़ी करुणा से दिया था। जो नहीं लिया तो अम्मा क्या करे? उस बेटी के मन में अम्मा के प्रति आस्था नहीं थी। उससे विवाह करनेवाले बेटे के मन में अम्मा के प्रति भक्ति है। अपनी पत्नी के भी मन में भक्ति लाने के लिए वह जान-बूझकर उसे ले आया था। अम्मा पर अविश्वास के कारण उस बेटी ने तीर्थ नहीं लिया। उसकी बात सोचकर अम्मा को कष्ट हुआ। कारण यह कि वह अम्मा के बेटे की भावी पत्नी है। अम्मा की सम्पूर्ण करुणा, अम्मा का मन ही इस तीर्थ और प्रसाद के माध्यम से उसकी ओर जाता है।'

'जब वे चले गए तब अम्मा ने उस बेटे के आश्रमवासी भाई को बुलाकर कहा - अम्मा को उनके जीवन में बड़ा दुःख दिखाई दे रहा है, कुछ भीषण विपदाएँ दिख पड़ती है। उनसे कहना कि प्रार्थना करें। उस बेटी ने तीर्थ लेने से इन्कार किया। तो भी अम्मा ने उसे वापस नहीं लिया, ज़मीन पर उड़ेल दिया। इसलिए बड़ा भारी दोष झेलना नहीं पड़ेगा।'

'वह बेटी ज़रूर वापस आएगी। अम्मा के बेटे की पत्नी है न, अम्मा नहीं ठुकराएगी। परन्तु वह बेटी बड़ी मेहनत करने पर ही प्रारब्ध से बच सकेगी। दिया तीर्थ स्वीकार करती तो उतना कष्ट न झेलना पड़ता।'

दामू- 'अम्मा के साथ जीने के लिए बड़ी सतर्कता बरतनी पड़ती है।'

अम्मा- 'अम्मा जब कुछ भी देती है तब उसके पीछे अम्मा का सम्पूर्ण मन रहता है। उस समय अवज्ञा करे तो अम्मा क्या करे? अम्मा ने बात पूरी की।'

करुणामयी अम्मा का कृपामृत स्वीकार करने और आत्मसात करने में जो समर्थ होते हैं वे खुशकिस्मत हैं। हृदय का द्वार खोले बिना कृपा की किरणे भीतर कैसे प्रवेश कर सकेंगी? इसीलिए अम्मा आग्रह करती हैं कि अम्मा के वचनों का शब्दशः पालन करना चाहिए। यह अम्मा के लिए नहीं हमारे लिए है।

१९८६ जनवरी १७ शुक्रवार

निला नदी के तीर पर कृपा नदी

अम्मा और ब्रह्मचारी सवेरे अंबलप्पारा को चल पड़े। भारतपुया के पास पहुँचने पर अम्मा ने कहा कि स्नान करने के बाद आगे बढ़ेंगे। नदी के पानी का पौन भाग सूख चला था। रेतीला भाग साफ दिखाई देता था। दूसरे किनारे के पास ही कुछ पानी था। वहाँ पहुँचने के लिए गाड़ी पुल पर ही आगे कुछ दूर बढ़ी। एकाएक अम्मा ने गाड़ी रोकने को कहा। अम्मा ने पुल शुरू होने की जगह पर सड़क की बाईं तरफ के पथ से गाड़ी चलाने को कहा। वह रास्ता एक पुरातन भवन के प्रांगण को ले जाता है। उसके कुछ पहले गाड़ी रोकी। उस भाग में नदी में उतरने की खास सुविधा नहीं थी। उस तरफ गाड़ी चलाने का अम्मा का मतलब कोई समझ नहीं सका। गाड़ी रोकनेपर तुरंत अम्मा ने पीने कुछ गरम चीज़ माँगी। गाड़ी में ठंडा पानी ही रखा था। सामने दिखे घर से पीने के लिए कुछ लाने की अनुमति माँगी। अम्मा मान गईं। सामान्यतः यात्राओं में अम्मा रास्ते के घरों से कुछ लाने की अनुमति नहीं दिया करतीं। जो कुछ पहले से रखा हुआ है

वही पीती हैं।

एक ब्रह्मचारी पानी लेने तेज़ चला। थोड़ी देर बाद पानी लिए आते हुए ब्रह्मचारी से भी आगे एक वृद्ध माता दौड़ी आती दिख पड़ी। उनके साथ एक छोटी बच्ची भी है। वे जब गाड़ी के पास पहुँची तब अम्मा ने दोनों हाथ गाड़ी के बाहर फैलाये उनकी दोनों बाहें एक साथ पकड़कर आशीर्वाद दिया। वो निरन्तर 'नारायण नारायण' जप रही थी। मगर उच्चारण स्पष्ट नहीं हो रहा था। दौड़ने की थकान के कारण साँस सीधी नही चल रही थी। उनका भक्ति आवेग देखने लायक था।

जब बातचीत करने की स्थिति में पहुँचीं तब उस वृद्धा ने रुँधे गले से अम्मा से कहा- 'ओट्टूर उण्णिनम्बूदिरिप्पाड् ने अम्मा के बारे में पहले ही कहा था। वह सुनने पर अम्मा को देखने की बड़ी इच्छा हुई। किन्तु यह बुढ़ापा! यात्रा करना कठिन! यहाँ आकर अम्मा के दर्शन करने की असमर्थता सोचकर दु:खित थी। आशा हुई कि अम्मा का आशीर्वाद हो तो इस जन्म में किसी न किसी दिन देख सकूँगी। आज वह इच्छा सफल हो गई। ऐसे दिन नहीं बिते जिन दिनों अम्मा का स्मरण नहीं करती। तृप्पूणित्तरा के घर पर अम्मा के जाने की सूचना मिली थी। मैं उसी खानदान की हूँ।'

'मैंने सोचा ही नहीं था कि इतनी जल्दी अम्मा के दर्शन कर सकूँगी। सब अम्मा की कृपा। एक बेटे ने यहाँ आकर कहा- कुछ कंजी चाहिए। एक अम्मा के लिए है। पूछा कि कौनसी अम्मा है। तब उसने अम्मा का नाम बताया। तब मेरे मन में पक्का यकीन हो गया कि मैं जिस अम्मा को देखने अधीर थी वही आई हैं। तुरन्त कंजी और आम का अचार देकर स्वयं छोटी बच्ची को लेकर इधर दौड़ी आई। (उनका गला रुँध गया।) अम्मा, मैं अम्मा को कंजी के अलावा कुछ नहीं दे सकी। अम्मा, इसका अपराध क्षमा करें।' इतना कहते कहते उसकी आँखों से आँसू टपक पड़े। अम्मा ने अपने करकमलो से उन आँखों को पोंछा और कहा- 'अम्मा को कुछ नहीं चाहिए। बच्चों का हृदय काफी है।'

कंजी और आम का अचार मिलाकर गिलास भर पिया। उस भक्त महिला के दिखाए रास्ते से स्नान के लिए नदी में उतरीं।

वह वृद्धा अम्मा को निमंत्रण देना नहीं भूली - स्नान करके लौटते समय अम्मा हमारे भवन में आइएगा।

स्नान के बाद लौटी अम्मा उस महिला की अभिलाषा के अनुसार उनके भवन गईं। बरामदे पर चढ़ी अम्मा के बैठने के लिए वहाँ रखी पुरानी कुरसी आगे बढ़ाई। घर पर अम्मा के पधारने के हर्षातिरेक से वह सब कुछ भूल गई। वहाँ खड़े उसके पतिदेव भीतर जाकर एक लोटे में जल लाए।

दोनों ने मिलकर अम्मा के चरण धोए। अम्मा उनकी निष्कलंक भक्ति के सामने समाधिस्थ बैठी रहीं। अम्मा के चरण पोंछने भीतर से वस्त्र लाने में विलंब हो सकता था। इसलिए उस भक्त महिला ने अपने पहने कपड़े से ही अम्मा के चरण पोंछे। चरण पोंछते समय उसके नयनों से अश्रुकण अम्मा के चरणों पर टपकते दिखाई दिए।

उनके साथ कुछ समय बिताने के बाद अम्मा ने यात्रा जारी रखी। पुल पार किया तो वहाँ अम्मा के गृहस्थ भक्त शशि अम्मा की प्रतीक्षा में कार के साथ खड़ा था। उनकी इच्छानुसार अम्मा ने आगे की यात्रा उस कार में की।

अम्मा और बच्चे करीब ढ़ाई बजे अम्बलप्पारा में गृहस्थ भक्त नारायणन् नायर के घर पर पहुँचे। अम्बलप्पारा, ओट्टप्पालम के पास एक देहात है। आजकल अनेक स्थानों पर नष्ट होती ग्रामीणता की सुषमा यहाँ अब भी बनी हुई है।

वहाँ अनेक लोग अम्मा की प्रतीक्षा में खड़े थे। भक्त परिवार ने घर में प्रविष्ट अम्मा को 'पीठम्' पर बिठाकर चरण धोए, कुंकुम, चन्दन आदि चढ़ाए।

ब्रह्मचारियों के कण्ठों से निर्गलित वेदमंत्र ध्वनि उस छोटे कमरे में गूँज उठी। भक्त हृदय भक्ति के अतिरेक से स्फुरित हुए। अम्मा का पुण्यदर्शन उनके नयनों के लिए पवित्र उत्सव सा था।

पादपूजा के पश्चात अम्मा बगल के कमरे में आईं। यहाँ बैठकर अम्मा ने भक्तों को दर्शन दिए। दर्शनों के लिए पहुँचे लोग एक एक करके अम्मा को प्रणाम करते आगे बढ़े। घरवालोंने ब्रह्मचारियों को 'चापी' पिलाई। यह न चाय थी, न कॉफी। उन्हें

बहुत पसन्द आई।

एक भक्त महिला एक ब्रह्मचारिणी का हाथ धुलाने लगी। इस पर अम्मा की दृष्टी गई। बाद में अम्मा ने कहा- 'साधकों को किसी की मदद नही लेनी चाहिए। तपस्या से प्राप्त शक्ति नष्ट हो जाएगी। हम अपने लिए दूसरों से कटहल का पत्ता (कटहल का पत्ता कंजी पीने के लिए चम्मच की तरह उपयोग मे लाते हैं।) तक न उठावें। यथासंभव हमें दूसरों की सेवार्थ तैयार होना चाहिए।'

एक ब्रह्मचारी दीपदानों की सजावट में लगा था। जब वह दीप जलाने लगा तब अम्मा ने एकाएक उसे रोकते हुए कहा- 'बेटा, उत्तर की ओर मुड़कर खड़े हो जाओ और दीप जलाओं।' ब्रह्मचारी झट से अम्मा की बात का मतलब समझ नहीं सका। अम्मा ने दीपक अपने हाथ में ले लिया। उन्होंने विभिन्न दीपक यथाक्रम अलग अलग स्थान पर स्थापित किए। लोटे में जल भरकर एक केले के पत्ते से उसे ढ़ककर दीपक के सामने रखा। उसके उपर पुष्प चढ़ाये। उसके बाद दीपक की बत्तियाँ जलाईं। दीपक जलाने के बाद अम्मा बोलीं- 'दक्षिणामुख खड़े होकर दीप नही जलाना चाहिए। उसी प्रकार मन्दिर में परिक्रमा करने की तरह बाईं से दाईं तरफ बत्ती जलानी चाहिए।'

एकदम मामूली लगती बातों पर भी अम्मा बारीक ध्यान देती हैं। खासकर ब्रह्मचारियों को सिखाते समय। अम्मा बताया करती हैं कि उन्हें कल संसार में कार्य करना है। प्रत्येक काम में सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए।

कीर्तन के दौरान एक भक्त महिला का छोटा मुन्ना घुटनों के बल रेंगता अम्मा के पास आकर बैठ गया। अम्मा ने उसे उठाकर गोद में बिठा लिया। करताल उसके हाथ में दिया। बच्चे के हाथ अपने हाथ में लिये करताल पर ताल बजाते हुए अम्मा ने कीर्तन जारी रखा-

गोपी वल्लभ! गोपालकृष्ण!
गोवर्धन गिरिधारी!
राधामानस राजीवलोचना
तमालवर्णा ...... कृष्ण

वृन्दावनसंचारी कृष्ण
अरुणकमलदल नयना
बन्धन छुड़ाओ नन्दकुमारा
सुन्दर बाल मुकुन्दा कृष्ण
सुन्दर बाल मुकुन्दा!   गोपी.....

१९८६ जनवरी २२, बुधवार

ध्यानकक्ष में दो पाश्चात्य महिलाएँ ध्यान कर रही हैं। नज़दीक ही उनमें से एक बहिन की बच्ची रंगीन पेन्सिल से सामने रखी कापी के चित्रों में रंग भर रही है। अपने ध्यान में बच्चे के द्वारा भंग न होने के इरादे से माँ ने बच्चे को उसकी प्यारी चित्रकारी दी है। अम्मा ध्यानकक्ष में आईं। सफेद बालों की उस मुन्नी को दूसरों के ध्यान में विघ्न ड़ाले बिना शान्तिपूर्वक चित्र खींचते देख अम्मा कुछ देर तक देखती खड़ी रहीं।

ध्यान संपन्न होने के बाद अम्मा ने चारों तरफ बैठे लोगों से कहा-(उस बच्ची की ओर इशारे करते हुए) 'बचपन में ही बच्चों का ध्यान चित्र खींचना, गाना आदि अच्छे कामों की ओर लगाना चाहिए। धीरज नहीं हो तो यह बच्ची कैसे तस्वीर रचेगी? इससे धीरज सीखेगी। इसके अलावा एकाग्रता मिलेगी। यों ही छोड़ दें तो बच्चे उछलते-कूदते, शरारत करते समय बरबाद करेंगे। फिर अनुशासन मिलना मुश्किल हो जायेगा।'

आज भक्तों की भीड़ कम है। जो हैं उनमें अधिकतर वे पाश्चात्य भक्त हैं जो कुछ दिनों से आश्रम में रह रहे हैं। वे ध्यान करते, ग्रंथालय से पुस्तक लेकर पढ़ते, आश्रम के सेवाकार्य में हाथ बँटाते समय बिताते है। भौतिकता को सही रूप में वह पहचान चुके हैं। उनमें सत्यदर्शन की इच्छा तीव्र है। विद्वेष और प्रतिद्वंद्विता का संसार देख उनके मन थक गये हैं। वे अम्मा में निःस्वार्थ प्रेम का निर्मल स्रोत देखते हैं। सिर्फ उसका अनुभव करने के लिए समुंदर पार कर यहाँ आते हैं।

एक ब्रह्मचारी ने आकर निवेदन किया कि एक युवक अम्मा के दर्शनों की प्रतीक्षा में खड़ा है। अम्मा ने बुलवा लिया। अम्मा

ध्यानकक्ष के पश्चिमी भाग में बैठीं। युवक ने आकर प्रणाम किया। अम्मा ने उसे पास बिठाया।

अम्मा- 'क्या बेटे को आये बड़ी देर हो गई?'

युवक- 'नहीं, अभी आया।'

अम्मा- 'आश्रम के बारे में बेटे ने कैसे जाना?'

युवक- 'मैं कई आश्रमों में जाया करता हूँ। पिछले महिने में मेरा एक मित्र यहाँ आया था। उस दोस्त ने बताया कि अवश्य यहाँ आकर अम्मा के दर्शन करना चाहिए।'

अम्मा- 'बेटे की पढ़ाई क्या पूरी हो चुकी?'

युवक- 'एम.ए. पास किया। अब नौकरी की प्रतीक्षा में हूँ। पैरलल कॉलेज में सिखाने जाता हूँ। जिससे पैसे की कठिनाई अनुभव नहीं होती। मगर उसे स्थायी आमदनी बताया नहीं जा सकता है। इन दिनों नौकरी ढूँढ़ना छोड़ दिया है। मेरी एक बहन है। उसके विवाह करा देने के बाद किसी आश्रम का अंतेवासी होना चाहता हूँ।'

अम्मा- 'क्या बेटे के घरवाले इसका विरोध नही करेंगे?'

युवक- 'क्यों विरोध करें?'

अम्मा- 'माता-पिता को क्या तकलीफ नही होगी?'

युवक- 'माँ-बाप का खर्च उनके पेंशन से चलेगा। इसके अलावा कुछ ज़मीन जायदाद भी है।'

अम्मा- 'वृद्धावस्था में उनकी सेवा कौन करेगा? क्या बेटे को वह काम करना नहीं है?'

युवक- 'इसका क्या दावा है कि उनकी वृद्धावस्था में मैं पास रहूँगा? अगर देश के बाहर काम करूँगा तो क्या दौड़ा आ सकूँगा? उनके पहले मैं मर जाऊँ तो क्या करेंगे?'

"होशियार" अम्मा ने हँसते हुए कहा।

युवक- 'मेरे साथी ने मुझसे अम्मा को देखने आग्रह इसलिए किया कि मैं अम्मा से एक नौकरी के लिए प्रार्थना करूँ! मैंने कहा-'मै अम्मा को देखूँ तो आध्यात्मिक उन्नति के अलावा और कुछ नही

माँगूंगा।'

एक भक्तपरिवार आया और अम्मा को प्रणाम कर पास बैठ गया।

साधक और वैज्ञानिक

युवक- 'एक साधक का जीवन, एक वैज्ञानिक के जीवन से कैसे श्रेष्ठ है? साधक को अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तथा वैज्ञानिक को अपने शोध में सफलता पाने के लिए एकाग्रता ही मुख्यत: चाहिए। फिर इन दोनों में क्या अंतर है? वैज्ञानिक का जीवन भी क्या साधना नही है?'

अम्मा- 'हाँ, वह भी साधना ही है। मगर शोध करनेवाला एक वस्तु पर सोचता है। एक कॅम्प्यूटर पर पढ़ते समय उनका ध्यानविषय कॅम्प्यूटर ही रहेगा। उसके बारे में सोचते सोचते वह उसे समझ लेता है। वैज्ञानिक का मन सिर्फ शोध करते समय उस विषय पर एकाग्र रहता है। उसके बाद उसका मन विभिन्न विषयों के पीछे भागता है। सांसारिक बातों से जुड़ता है। इसलिए उसमें अनंत शक्ति जाग नही पड़ती। किंतु तपस्वी ऐसा नही होता। वह सबको एक समान देखते हुए साधना करता है। इसलिए वह सबका साक्षात्कार कर सकता है। सबमें जो समाया है उसका साक्षात्कार करने वह प्रयत्न करता है। उसका साक्षात्कार करने पर वह समस्त क्षेत्रों में नैपुण्य पा जाता है। उसको जानने योग्य कोई दूसरी चीज़ नही रह जाती।'

'बेटा, नमक से भरे तालाब के एक छोर पर पानी डालें तो थोड़ी देर तक वहाँ के पानी में नमक की मात्रा कम हो जाती है। मगर बारिश हो जाए तो पूरे तालाब में एक समान परिवर्तन आयेगा। इसी प्रकार एक तपस्वी विशाल मन से तपस्या करता है इसलिए उसमें अनंत शक्ति जागृत हो उठती है। सब का साक्षात्कार कर सकता है। वैज्ञानिक में यह प्रवृत्ति नही रहती है।'

युवक- 'शास्त्र बताता है कि सब कुछ एक ही आत्मा है। तब एक आदमी को साक्षात्कार मिलते समय उसके साथ सब को

साक्षात्कार प्राप्त होना चाहिए न?'

अम्मा- 'बेटा, मेन स्विच दबाने से घरके सारे कमरोंमे बिजली मिलती है। मगर जिस कमरे में बेटा है, उसका स्विच दबाने से ही उस कमरे में रोशनी आयेगी। एक कमरे का स्विच दबाने से सारे कमरों की बत्तियाँ नहीं जलती। बिजली की कमी इसका कारण नहीं है। स्विच दबाया तो बत्ती जली और रोशनी मिली। यों सब को एक ही आत्मा कहने पर भी जो साधना से अंतःकरण को शुद्ध कर सके वही आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है।'

'काई से ढ़के तालाब के एक छोर की काई हटाने पर उतना हिस्सा साफ हुआ और पानी दिखाई दिया। उससे पूरा तालाब साफ नहीं होता है न।'

साधना के संदेह

युवक- 'कई लोग कहते हैं कि साधक को यमनियमों का पालन अवश्य करना चाहिए। क्या उसके विषय में इतनी कठोरता चाहिए? क्या तत्त्व जानना पर्याप्त नहीं? ज्ञान प्राप्त करना ही मुख्य बात है न?'

अम्मा- 'बेटा, भूमि किसी भी वस्तु को अपनी तरफ आकृष्ट करती हैं न? समुद्र तट की काली रेत पर रात को सोने के बाद सबेरे जागे तो बड़ी थकान लगेगी। काली रेत हमारे शरीर की शक्ति को खींच लेती है। आज हम प्रकृति के नियंत्रण में रहते हैं। अतएव हमें यमनियमों का पालन करना चाहिए। एक हद तक वह ज़रूरी है। साधना करके प्रकृति के नियंत्रण की सीमा के पार पहुँचने के बाद कोई समस्या नहीं है। हमारी शक्ति नष्ट नहीं होगी। प्रकृति हमारे नियंत्रण में हो जाती है। किंतु उस स्थिति में पहुँचने तक यमनियम आवश्यक हैं।'

'एक बीज बोने पर मुर्गीयों के कुतरने से बचाने के लिए काँटे लगाने पड़ते हैं। मुर्गी के खाने से अंकुर नष्ट होने पर पौधा बढ़ नहीं सकता। बीज अंकुरित होकर वृक्ष बन जाये, तो उसके बाद वह मुर्गी, मनुष्य और दूसरों के लिए उपकारप्रद बनेगा। हाथी तक

को उससे बाँध सकेंगे। किंतु आज छोटी मुर्गी से भी ड़रना पड़ता है। जब तक हम अपनी शक्ति को जान न लें दुर्बल मन के हम लोगों के लिए यमनियम आवश्यक हैं।'

युवक- 'साधना में निष्ठा और अनुशासन का पालन मन को प्रिय लगना चाहिए न?'

अम्मा- 'चाहिए। हम ईश्वर को जिस प्रकार प्यार करते हैं उसी प्रकार निष्ठा को प्यार करना चाहिए। ईश्वर को प्यार करने वाले पहले निष्ठा व व्यवस्था को प्यार करेंगे। अम्मा कहती हैं कि पहले व्यवस्था को प्यार करना चाहिए।'

'नियत समय पर चाय पीने के आदी लोगों को उस समय चाय न मिले तो सिरदर्द और दूसरे शारीरिक कष्ट अनुभव होंगे। गांजा पीने के आदी लोगों को समय पर गांजा न मिले तो उन्हें बहुत अस्वस्थता होगी। कल तक जिस आदत का पोषण कर रहे थे वह आज समय होने पर उन्हें याद दिलाएगी। इसी तरह किसी भी बात में निष्ठा से बढ़ें तो हमारी एक आदत बन जायेगी। वह निश्चित समय पर हमें जगायेगी। साधना के विषय में हम निष्ठा का पालन करें तो हमारे लिए लाभकारी होगा।'

अम्मा की बातें सुनते हुए एक गृहस्थ भक्त ने उस समय अपनी समस्या पेश की- 'अम्मा, मैं रोज़ कुछ समय ध्यान करने लगाता हूँ। मगर आवश्यक लाभ नहीं होता।'

अम्मा- 'बेटे का मन नाना बातों से बंधा पड़ा है। आध्यात्मिक जीवन में अत्यधिक व्यवस्था और निष्ठा आवश्यक है। उसके बिना साधना करने पर अपेक्षित लाभ मिलना कठिन है। बेटा, साधना करता है। पर वह कैसी है जानते हो? थोड़ा-सा तेल लेकर दस बर्तनों में बारी बारी से ड़ाला। अंत में देखा तो तेल गायब। सभी बर्तनों में केवल चिपकने लायक ही रहा। उसी तरह बेटा साधना करके कई कामों में लगता हैं। मन को एकाग्र बनाकर जो शक्ति कमाई वह पूरी पूरी विभिन्न विषयों में नष्ट करता है। यदि नानात्व में एकत्व देखते तो इतना नुकसान न होता। सब को ईश्वरमय देखने पर हमारी शक्ति नष्ट न होगी।'

भक्त- 'घर पर सब मुझसे ड़रते हैं। यदि मेरी व्यवस्था के अनुसार दूसरे बर्ताव न करें तो मुझे बड़ा क्रोध आता है। तब मैं यह नहीं देखता कि किससे क्रोध कर रहा हूँ।'

अम्मा- 'बेटा, क्रोध और अहं का भाव रखते हुए साधना करने से हम उसके लाभ को जान नहीं सकते। बेटे ने एक ओर चीनी की रचना की। दूसरी तरफ चींटी रची। चींटी आकर पूरी चीनी खा रही है, बेटा यह नहीं जानता। साधना से जो मिला वह क्रोध से नष्ट कर दिया। बैटरीवाला लाइट दस बार दबाने से बैटरी की शक्ति नष्ट होती है न? उसी प्रकार हर एक रोमकूप से, आँख, नाक, मुँह और कान से एक समान शक्ति नष्ट हो जाती है। मानसिक संयम से आगे बढ़ने पर ही साधना से प्राप्त शक्ति सुरक्षित रहेगी।'

भक्त- 'क्या क्रोधी लोग साधना से प्राप्त अनुभूति को समझ नहीं सकेंगे?'

अम्मा- 'बेटा, पानी भरने के लिए कुएँ में एक बाल्टी ड़ाल दी, जिसमें छेद ही छेद हैं। पानी भरने के बाद बड़ा कष्ट उठाकर ऊपर की तरफ खींचा। मगर ऊपर पहुँचने पर बाल्टी में थोड़ा भी पानी नहीं है। छेदों से सारा पानी बह गया। बेटे की साधना उसी प्रकार की है। बेटे का मन आज काम, क्रोध आदि से बंधा है। इसलिए बड़ी कठोर साधना से जो कुछ भी आर्जित करते हो वह उसी समय रिस जाता है। साधना करने पर भी उससे प्राप्त लाभ को जानना या उसका आस्वादन करना अथवा महत्त्व समझना संभव नहीं है। बेटा, बीच बीच में एकांत में बैठकर मन को शांत बनाकर साधना करने का श्रम करो। जिस माहौल में काम-क्रोध जग सकते हैं उससे दूर रहो। तब बेटा सारी शक्तियों का स्रोत समझ सकेगा।'

भक्त- 'अम्मा, कभी कभी विकारों का संयम करने में असमर्थ होता हूँ। नियंत्रण करते करते वे बढ़ जाते हैं।'

अम्मा- 'विकारों पर काबू पाना अवश्य कठिन है। तथापि पहले नियंत्रण रखना होगा। उसके बिना मन को नियंत्रित करना संभव नहीं। गोशत, अंड़ा, मछली आदि भोज्य वस्तुएँ अधिक शुक्ल का

उत्पादन करती हैं। उससे विकार बढ़ते हैं। हमारी इंद्रियाँ उनको सफल करने के लिए प्रवृत्त होंगी। हमारी शक्ति नष्ट होगी। सात्त्विक भोज्य वस्तुएँ सीमित रूप में ग्रहण करें तो स्वास्थ्य नहीं बिगड़ेगा। अतएव साधना करते समय भोजन में संयम ज़रूरी है। जिन्हें पर्याप्त मनःशक्ति है उनके भोजन में थोड़ा सा परिवर्तन होने पर भी समस्या नहीं होगी किंतु यह दुर्बल हृदयवाले लोगों पर अधिक प्रभाव ड़ालेगा।'

युवक- 'भोजन से क्या चरित्र बदलेगा?'

अम्मा- 'बदलेगा बेटे। प्रत्येक भोज्य वस्तु की अपनी प्रकृति होती है। उसी तरह खटाई, तीखापन और मिठास का अपना प्रभाव होता है। सात्त्विक भोजन करने पर भी उसमे संयम होना चाहिए। दूध, घी आदि सात्त्विक भोजन तो हैं तो भी अधिक लेना मना है। इससे नुकसान होगा। प्रत्येक भोज्य हम पर भिन्न-भिन्न प्रभाव ड़ालेगा। मांसाहार करने से मन अधिक चंचल निकलेगा। जो लोग शक्ति आर्जित करने, साक्षात्कार पाने की तीव्र अभिलाषा से साधना करते हैं उनके लिए प्रारंभिक स्तर पर भोजन में अनुशासन अत्यावश्यक है।'

'छायादार जगह में ही बीज बोना चाहिए। बीज जब अंकुरित होकर महावृक्ष बन जाता है तो उसके बाद वह धूप को मात करने की शक्ति पाता है। दवा पीनेवालों के लिए खुराक का पथ्य जिस प्रकार ज़रूरी है उसी प्रकार साधना करनेवालों को भोजन में संयम ज़रूरी है। साधनामें प्रगति के एक स्तर के बाद भोजन के नियम उतने बाधक नहीं लगते।'

युवक- 'साधक को विनय व सादगी बहुत ज़रूरी बताई जाती है। किंतु मुझे वह कमजोरी मालूम पड़ती है।'

अम्मा- 'बेटे, दुसरों के प्रति विनय दिखाने को जो कहते है वह हममें अच्छे संस्कारों को जगाने के लिए ही है। विनय कमज़ोरी नही है। जब हम बड़े होने के अंदाज़ में दूसरों पर झल्लाते है, अहंभाव से व्यवहार करते है तब उसके अनुसार हमारी शक्ति क्षीण हो जाती है। ईश्वर हमसे दूर हो जाते हैं। किसी को विनीत होने

की इच्छा नही है। मिथ्या बात पर अभिमान करने से हममें विनय नही रहता। हम अहंकार- 'मै का भाव' से भरे हैं। हमारा शरीर अहंबुद्धि एवं कामक्रोध से मलिन है। उसे शुद्ध बनाने के लिए ही विनय व नम्रता बढ़ाने का उपदेश दिया जाता है। जब हम अहंकार से व्यवहार करते है, तब देहाभिमान बढ़ता है। अहंभाव को समाप्त करने दूसरों को प्रणाम करने तथा उनसे विनीत व्यवहार करने की मन:स्थिति हममें होनी चाहिए।'

'गंदी बाल्टी में कितना ही पानी डालो, कोई लाभ नहीं। पूरा पानी गंदा हो जाएगा। इमली और खीर मिलाकर खाओ तो खीर का स्वाद पहचान नहीं सकते। इसी तरह दंभ को मन में बनाए रखकर जब साधना करें तब ईश्वर की शरणगति पाने, साधना का फल जानने, गुण का अनुभव करने में असमर्थ रहेंगे। जब हम विनय एवं सादगी के ज़रिए अहंकार को नष्ट करते है तब हमारे अच्छे गुण बाहर आते है। हमारे भीतर के जीवात्मा को परमात्मा की तरफ विकसित करते हैं।'

'आज हम एक टेबललैंप के समान है। वह सामने रखी पुस्तक भर देखने की रोशनी ही दे सकता है। अहंकार छोड़ हम तपस्या करें तो हम सूर्य जैसे हो सकेंगे।'

गुरु के प्रति समर्पण

युवक- 'इन दिनों गुरुजनों की आज्ञा मानने की प्रवृत्ति को अनेक लोग एक कमी मानते हैं। अम्मा, ऐसे लोगों के लिए महात्माओं को प्रणाम करना तक अप्रिय बात है।'

अम्मा- 'बेटा, पुराने दिनों में घर का प्रवेशद्वार कम ऊँचा रहता था। उसका ध्येय हममें विनय बढ़ाना भी था। उस द्वार में हम सिर झुकाए प्रवेश करेंगे। क्यों? ताकि हमारा सिर चौखट से न टकराए। इसी प्रकार एक गुरु के सामने सिर झुकाने से दंभ से उत्पन्न समस्या दूर होती है और हममें आत्मबोध जगता है। आज हममें प्रत्येक व्यक्ति अष्टाहंकारों के प्रतिरूप हैं। उसको हटाकर अपना यथार्थ स्वरूप बाहर लाना हो तो एक गुरु की शिष्यता

स्वीकार करके उनकी बातों का विनय से अनुसरण करना चाहिए। आज गुरु के बताये पथ पर चलें तो कल हम सारे विश्व को अभय प्रदान कर सकेंगे। गुरु की सन्निधि से शक्ति को जगाकर साधना से उसे विकसित करना चाहिए।

युवक- 'शास्त्र बताता हैं कि ईश्वर हमारे भीतर ही हैं और हमसे भिन्न नही हैं। तब एक गुरु की आवश्यकता क्या है?'

अम्मा- 'हाँ! बेटा, ईश्वर हमारे भीतर ही हैं। हीरे और हीरे रखने की तिजोरी की चाबी हमारे अंदर ही है। किंतु हम उसे पहचाने बिना बाहर खोज रहे हैं। इतने दिनों से काम में न लाने के कारण वह चाबी जंग खाई पड़ी है। उसे ग्रीस देकर जंगसे छुड़ाना चाहिए। उसी के लिए हम गुरु के पास जाते हैं। ईश्वर को जानना हो तो एक गुरु का आश्रय लेकर अपने 'अहं' को दूर करना होगा। विनय एवं समर्पण से गुरु का अनुसरण करना चाहिए।'

'वृक्ष अनेक लोगों को फल देने में समर्थ है। लेकिन हम आज सिर्फ बीज हैं। वृक्ष नही बने हैं। गुरु तपस्या करके पूर्ण हो चुके हैं। इसलिए गुरु के समीप जाकर उनके निर्देशानुसार साधना करनी चाहिए। पहाड़ के ऊपर कुआँ खोदते हैं तो कितने ही फीट खोदने पर भी पानी शायद न मिले। किंतु नदी के किनारे छोटा सा गड्ढा खोदते ही पानी मिल जाता है। गुरु सामीप्य से हमारा लाभ इसी प्रकार का है। गुरु का सामीप्य हमारे भीतर के सद्‌गुणों को शीघ्र बाहर लाता है। साधना शीघ्र फल देती है। आज हम इंद्रियों के दास है। किंतु गुरु की इच्छा के अनुसार आगे बढ़ें तो इंद्रियाँ हमारी दास बनेंगी।'

'गुरु के साथ जो जीते हैं उन्हें केवल गुरु की कृपा के लिए प्रयत्न करना है। उनकी तपःशक्ति हममें संक्रमित होगी। करंटवाली तार को छूने से बिजली का शॉक लगता है न? गुरुओं का विधिवत आश्रय करने से वह शक्ति हममें संक्रमित होगी।'

'गुरु त्यागी होते हैं। गुरु सत्य, धर्म, दया, प्रेम आदि गुणों के स्वामी होते हैं। जब सत्य, धर्म जैसे कुछ शब्द ही सुनते हैं तब उनमें प्राण नही होते। सद्‌गुरु इन गुणों के जीवंत रूप हैं। उनसे

संसार की भलाई ही होती है। बुरे चरित्र के व्यक्ति के संग से हम भी बुरे हो जाते हैं। मित्र सच्चरित्र हो तो हमारा चरित्र भी उसी प्रकार परिवर्तित होता है। उसी प्रकार जो लोग गुरु के साथ रहते हैं वे सद्गुणों के उर्वर खेत बन जाते हैं।'

'खेत की खरपतवार काटकर सफाई किये बिना बीज बोयें तो वे घास आदि बीज को खा जायेंगे। दंभ को दूर किये बिना साधना करें तो साधना का फल नष्ट हो जायेगा। धोकर साफ की हुई गिट्टी से तैयार काँक्रीट ही मजबूत बनेगा। शुद्ध मन में ही ईश्वर चिंतन दृढ़ हो सकता है। स्वार्थ एवं दंभ को छोड़कर जब साधना की जाती है तो हमें अनुभव होगा कि हम ईश्वर हैं।'

अम्मा ने अपने अमृतभाषण को फीलहाल विराम देते हुए भक्तों से कहा- 'चौके का भाग गंदा पड़ा है। उसकी सफाई करने अम्मा आई थी। आते समय इस बच्चे को तस्वीर खींचते देखा और देखती रह गई। उस समय यह बेटा आया और बातें करते रहे। बेटा कल दर्शन के बाद ही जायेगा न? बाद में मिलेंगे।'

अम्मा ध्यानकक्ष से चौके की तरफ चलीं। बड़े गुरुजन उपदेश से बढ़कर उदाहरण के ज़रिये शिक्षा देते हैं। अम्मा के जीवन का प्रत्येक दिवस, प्रत्येक क्षण इसका उदाहरण है। अम्मा अपने बच्चों के जैसे बनने की प्रतीक्षा करती है, उसे अम्मा स्वयं दिखा देती हैं।

स्वयं आचरते यस्मात्-
तस्मादाचार्य उच्यते।

अम्मा इस लक्षण का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

7

७

१९८६ फरवरी ७, शुक्रवार

समय सुबह नौ बजे

कलरिमंड़प की पूजा और आरती के बाद ब्रह्मचारी उण्णिकृष्णन् कर्पूर आरती बाहर ले आया। मंड़प पर खड़े भक्तों ने दीप की वंदना की। कुछ लोगों ने कर्पूर की थाली से भस्म लेकर माथे पर लगा लिया।

कुछ क्षणों के बाद अम्मा कलरिमंड़प पर आकर बैठीं। वहाँ जो लोग थे वे अम्मा को प्रणाम कर पास बैठ गए। ध्यान पूरा करके आए राव, कुंजुमोन आदि ब्रह्मचारी भी अम्मा को प्रणाम करके पास बैठे।

संदेह उच्छेत्ता अम्मा

राव- 'अम्मा, अम्मा कहती हैं कि ईश्वर दर्शन के लिए व्याकुलता चाहिए। अम्मा के रूप का ध्यान करते समय व्याकुलता कैसे आये? अम्मा पास ही हैं न?'

अम्मा- 'अच्छा! ईश्वर से वियुक्त रहने का विरह अनुभव होना चाहिए। उसका दुःख होना चाहिए।'

राव- 'उत्तम गुरु के प्राप्त होने पर वे गुरु ही क्या वह

व्याकुलता नहीं देंगे?'

अम्मा- 'नमः शिवाय। गुरु का ही उत्तम होना काफी नहीं। शिष्य को भी उत्तम होना चाहिए।'

कुंजुमोन- 'अम्मा के पास पहुँचे हम लोगों को अब ड़रने की ज़रूरत नहीं, हम बच गये।'

अम्मा (हँसती हुई)- 'वह आस्था अच्छी ही है। फिर भी बच्चें बाहर दिखाई देती अम्मा पर ही अपने विचार सीमित न रखें। बच्चे क्लांत हो जायेंगे। अम्मा को तत्वतः जानने की कोशिश करो, उसी की ज़रूरत है। इस अम्मा को सबमें देखने का प्रयत्न करो। अम्मा उसमें बच्चों को मदद देने ही आई है।'

कुंजुमोन- 'कल स्राईकाड़ के एक आदमी ने हमारे आश्रम के बारे में पूछा - 'अम्मा ने किस इरादे से यह आश्रम प्रारंभ किया है?'

अम्मा- 'लोगों में ईश्वर के प्रति आस्था बढ़ाना, आस्तिक को गढ़ लेना, उनसे अच्छे काम कराना, सब को सत्य और धर्म के पथ पर चलने की प्रेरणा देना, यही हमारा ध्येय है।'

एक भक्त महिला- 'अम्मा, जो लोग ईश्वर को पुकारते हैं वे सब बड़ा दुःख झेलते दिखाई देते हैं।'

अम्मा- 'बच्चों, ईश्वर को प्रेम से पुकारते समय जो आँसू निकलते हैं वे दुःख के नहीं होते। वे आनंद के अश्रु हैं। किंतु आज लोग दुःख आने पर ही ईश्वर को पुकारते हैं। उलटे हम सुख और दुःख में हमेशा ईश्वर को पुकारने तैयार हो जावें तो बाद में दुःखित होने की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी। कोई दुःख आ भी जाये तो वह दुःख प्रतीत नही होगा। जो कुछ चाहिए भगवान कर लेंगे। यदि हम दिल खोलकर भगवान से प्रार्थना करते, ईश्वर के लिए दो आँसू बहाने में समर्थ हो जाएँ तो हम बच गये।'

पूर्वकथा

ईश्वर प्रेम की बात कहने पर अम्मा भावलीन हो गईं। वे प्रेमभक्ति में विभोर बिताये पिछले दिनों का वर्णन करने लगीं- 'अम्मा को क्या

क्या कष्ट सहना पड़ता था। हम लोगों की उपहास की सीटी सुने विना सड़क पर पहुँच नहीं सकते थे। ऐसा घोर उपहास था। कोई एक जून का खाना नहीं देता था। एक आध्यात्मिक ग्रंथ पढ़ने के लिए लालायित थी, कोई नहीं मिलता था। कोई गुरु नही थे। गुरु से रहित आध्यात्मिक जीवन माता से वंचित बच्चे के जीवन के समान है। हम लोग मातृविहीन बच्चों की तरह बड़े हुए। चारों तरफ के लोग आध्यात्मिकता पर कुछ नही जानते थे। ध्यान करने पर हमारे सिर पर पानी ड़ालते थे। शरीर पर चोट करते थे। घर से बाहर निकाल दिया। दूसरे लोगों ने 'हिस्टेरिया' कहकर हँसी उड़ायी। ये ही हमें मिला। फिर भी हमें विश्वास था कि भगवान नही छोड़ेंगे। इस विश्वास के कारण हमें कोई दुःख सही अर्थ से दुःख नही लगता था। कितना भी कष्ट सहने पर भी भगवान के नाम दुहराते समय सब भुला देते थे। दुःख होने पर केवल जगदम्बा से ही वह कहते। आँसू के ज़रिए हर सवाल पूछते।' कुछ समय मौन रहने के बाद अम्मा ने कातर भाव से गाया।

एक बूँद प्रेम जीव संतुष्टी के लिए
इस प्यासे हृदय को दे दो माँ
इस सूखती बेल को
जलती आग की खाद
क्यों ड़ालती हो? क्यों?
फूटफूटकर रोती मैंने तुम्हारे
चरणोंपर
कितने ही गरम आँसू चढ़ा दिये।
निःश्वास में सिमटकर तड़पती हृदय की
सिसकियाँ क्या सुनती नही हो?
चारों तरफ फैले उस चंदन वन से
आई आग नृत्य कर रही थी।
इस शोकाग्नि में अपनी सारी
शक्ति को नष्ट कर छितराने की
बात मत सोचो।
मैं दुर्गा दुर्गा जपती रही! हे देवी!

मेरी बुद्धि और सब रास्ते भूल गई।
मेरी दुर्गे! मुझे स्वर्ग या मोक्ष नही चाहिए।
मुझे तेरी निर्मल भक्ति ही काफी है।

अंतिम दो पंक्तियाँ अम्मा ने कई बार दुहराईं। वे नयन छलछलायें। आँसुओ को पोंछते हुए अम्मा ने आगे कहा- 'उन दिनों दुःख आने पर ये सब पंक्तियाँ अनजाने गाये जाती थी। किसी किसी समय नामावली गाते मन पर नियंत्रण खोकर ज़ोर ज़ोर से हँसती। यह देखते सुगुणच्चन सोचते कि बस लड़की पागल हो गई है। वे आकर सिर पर ठोकते। उनका विश्वास था कि ऐसे समय ठोकने पर दिमाग ठिकाने लगेगा। जब देखते कि ठोकने से बात नहीं सुधरती तब माँ को पुकारते- 'दमयंती, बच्ची पागल हो गई है। जल्दी पानी लाओ, सिर पर डालेंगे।' फिर जलधारा ही जलधारा। जब ईश्वर का नाम लेकर उनके लिए रोती, तब वे सोचते कि बीमार है और दवा लाते। मुझसे छोटी लड़कियाँ यह कहती पास आती कि दीदी क्यों रो रही हो? क्या दीदी को सिरदर्द है? वे भी रो पड़तीं। कई दिनों बाद उन लड़कियों को पता लग गया कि दीदी देवी माँ के दर्शन न मिलने के दुःख से रोती है। वे साड़ी ओढ़कर देवी माँ के भाव में पास आतीं। उन्हें देखकर अम्मा उनको गले लगाती। उस समय यह नहीं सूझता कि वे साधारण लड़कियाँ हैं। सचमुच देवी ही लगती थी। जब रुलाई बहुत तेज़ होती तब पिताजी उठाकर कंधेपर डालते। पिताजी सांत्वना देते बताते कि, 'बच्ची, रोना मत। बिटिया को अभी देवी का दर्शन करा देंगे।' उसपर विश्वास करती। पता नही कैसा, ऐसा निश्छल मन होता। पिताजी की बातों पर विश्वास करके रुलाई बंद करती।'

'उन दिनों किसी से बातचीत करना पसंद नही था। कोई बात करने आते तो धरती पर एक त्रिकोण खींचकर उसमें देवी के उपस्थित रहने की कल्पना करती और उसी को देखती रहती। वे लोग पास बैठकर कुछ देर बात करके उठकर चले जाते। जिस किसी को देखती, देवी रूप में कल्पना करती। इस वजह सड़क से जाती कन्याओ का आलिंगन करने लगती।'

राव- 'अम्मा, हमें क्यों ऐसी निश्छल भक्ति का अनुभव नहीं हो रहा है?'

अम्मा- 'तुममें भक्ति होने से ही तुम लोग घर और घरवालों को ठुकराकर यहाँ आये हो।'

राव- 'अम्मा को देखते हुए हम किसका नाम लेकर रोयेंगे?'

अम्मा ने हँसते हुए विषय बदल दिया।

'कक्षा का समय हो गया न? सब अम्मा के चारों ओर बैठ वक्त बरबाद किये बिना जाओ।' पास बैठे एक बच्चे को प्यार से उठाकर अम्मा उठीं।

'बच्चों आओ!' अम्मा आगे चलीं। उनके पीछे भक्त लोग दर्शन-पर्णशाला को लक्ष्य करके चले।

शास्त्रमयी शारदा देवी

अम्मा ओट्टूर उण्णिनंबूदिरिप्पाड़ के कमरे के सामने। अम्मा दरवाज़े की आड़ में कुछ समय खड़ी रही। कमरे के भीतर अंधःकार से कातर स्वर में कृष्ण नाम गूँज उठता है-

मुकुंद मूर्ध्ना प्रणिपत्ययाचे
भवन्तमेकान्तमियंतमर्थं
अविस्मृतस्त्वच्चरणारविन्दे
भवे भवे मेऽस्तु भवत् प्रसादात्
मुज्जन्मनः फलमिदं मधुकैटभारे
मत् प्रार्थनीयमदनुग्रह एष एव
त्वदभृत्य भृत्य परिचारक भृत्य भृत्य
त्वदभृतस्य भृत्य इति मां स्मर लोकनाथ
नारायण...नारायण ...नारायण

अम्मा का मोहनरूप सामने देखकर ओट्टूर छटपटाकर उठे। अम्मा के रोकने पर भी प्रणाम किया। खाट पर अम्मा के बैठने के पहले ही ओट्टूर ने एक छोटे बालक की आज़ादी ले उस गोद में सिर टेका। अम्मा ने कहा- 'बेटे का भक्तिपूर्वक कीर्तन अम्मा सुनते खड़ी रह गई।'

ओट्टूर- 'मेरा विचार है कि भगवान के प्रति मेरी कुछ भी भक्ति नहीं है। अगर भक्ति होती तो क्या करुणामय श्रीकृष्ण दर्शन न देते?'

यह सुनते हुए एक ब्रह्मचारी ने तब प्रश्न किया- 'अब अम्मा को देख सके न?'

ओट्टूर- "कहते हैं, शारदादेवी ने श्रीरामकृष्णदेव से कहा था-'मैं आपकी तरह लंबी अवधि तक धीरज से प्रतीक्षा नहीं कर सकती। मेरे बच्चों को कष्ट झेलते देख नहीं सकती।' मेरा विचार है कि आज उसी व्यक्ति ने मुझे दर्शन दिये हैं। शारदादेवी की तरह अम्मा भी हमेशा भक्ति की ही चर्चा करती हैं।"

अम्मा- 'अम्मा भक्ति के विषय में जो कुछ कहती है वह अम्मा के अनुभव पर आधारित है। आज अनेक विद्वान हैं, साधु-महात्मा है। अद्वैत की बात तो करते हैं परंतु उनका जीवन उसके सिद्धान्तों पर आधारित नही है। उनके हृदय रागद्वेष से भरे हैं। अद्वैत अनुभव है। वह भाषण का विषय नही है।'

'उपनिषद् में एक कहानी है। पिता ने पुत्र को शास्त्र सीखने भेजा। शास्त्र सीखकर पुत्र लौटा तो घमंड़ी लग रहा था। पिता को मालूम हो गया कि पुत्र ने सुनी बात को आत्मसात नहीं किया है। बेटे की सब बातें सुनने के बाद पिता ने पुत्र को शिक्षा देना चाहा। उन्होंने पुत्र से कहा- 'कुछ दूध और शक्कर लाओ।' बेटा ले आया। पिता के कहे अनुसार पुत्र ने दूध में शक्कर मिलाया। पिता ने पात्र के चारों ओर से कुछ कुछ दूध चम्मच में भर दिया। इसके बाद पूछा 'कैसा है?' 'मीठा है'- बेटे ने कहा। 'कितना मीठा है?' पिता ने पूछा। बेटा स्वाद का वर्णन नही कर सका। मौन रहा। तभी बेटे को बोध हुआ कि ब्रह्म अनुभूति है और वह शब्दों से नहीं बताया जा सकता। उस समय तक आत्मा के विषय में बातचीत करता, कोलाहल करता वह युवक समझ गया कि ब्रह्म को शब्दों में व्यक्त नही किया जा सकता। वह जान गया कि वह अनुभव है।'

'कोई ब्रह्म की व्याख्या नहीं कर सकते। बुद्धि से उसे नही समझ सकते। वह अनुभव है। हम कहते हैं-'मैं ब्रह्म हूँ'(अहं ब्रह्मास्मि)। किंतु हमें सारे सुख-दुःख हैं। किंतु जिन्होंने अनुभव किया है वे ऐसे नहीं हैं। उन्हें आग और पानी कुछ नही कर सकते। सीता ने अग्नि में प्रवेश किया। उसका क्या हुआ? उसको कुछ नही हुआ। कुछ लोग कहते हैं कि हम ब्रह्म है। किंतु इस ब्रह्म को पानी में ड़ाले तो वे छटपटायेंगे। आग में ड़ाले

तो जल जायेंगे। उन्हें सुख-दुःख से अतीत ब्रह्मानुभूति नही है। 'अहं ब्रह्मास्मि' इस उक्ति को अनुभव में लाने के लिए निष्ठापूर्वक साधना अनिवार्य है।'

(बगल के अहाते में चरती गाय को दिखाते हुए) 'उधर खड़ी गाय को देखा? उसके कान को दुहने से क्या दूध मिलेगा? क्या यह कहना काफी है कि उसके पूरे शरीर में दूध है। हम गाय के थन का ही दूध पी सकते हैं। सो भी गाय के दुहने पर।'

'ईश्वर सर्वव्यापी हैं। तो भी अनुभव के स्तर पर उन्हें जानने के लिए गुरु के अधीन लक्ष्य बोध के साथ एकाग्र साधना ज़रूर करनी पड़ेगी।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा कहती हैं कि अम्मा ने शास्त्र नहीं सीखे हैं। किंतु शास्त्र की बाते ही अम्मा कहती हैं।'

अम्मा- 'बेटा, अनुभव से लिखी बातें ही शास्त्र में हैं न? अम्मा अनुभव की और देखी-सुनी बातें ही बताती हैं। इसलिए वे शास्त्र में मिलेंगी ही।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा, क्या आगे कभी रामराज्य आयेगा?'

अम्मा- 'रामराज्य आयेगा। किंतु कम से कम एक रावण तो होगा। द्वारका आयेगी मगर कंस, जरासंध आदि भी होंगे।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा, कुछ लोग कहते हैं कि पुनर्जन्म होता है। क्या यह सत्य है?'

अम्मा- 'हमने गत मास मिलकर एक गीत सीखा था। पर अब वह स्मरण नही है। क्या इसलिए यह कह सकते हैं कि वह गीत नही सीखा था। कई लोग इस बात के गवाह हैं कि हमने सीखा था। हम शायद गत जन्म का स्मरण न कर सकें किंतु तपस्वी के लिए वह संभव है। मन जब साधना के द्वारा सूक्ष्म हो जाए तब हम उसे जान सकते हैं।'

अम्मा ओट्टूर और पुतुमना के साथ

समय पाँच बजे

पुतुमना दामोदरन् नंबूदिरि आदि अम्मा के दर्शन करने आये हैं। पुतुमना अम्मा की सन्निधि में पहली बार आये हैं। वे केरल के प्रसिद्ध तांत्रिकाचार्य

हैं। अम्मा ने अधिक बातें नही कीं। अधिकांश समय नेत्र बंद करके अंतर्मुखी रहीं। वे ध्यान निरत दिखाई पड़ीं।

पुतुमना ने अम्मा के बारे में अपनी रची हुई एक संस्कृत कविता स्वयं पढ़ सुनाई और अम्मा को समर्पण की। उन्होंने अम्मा से कहा- 'यह जाननेपर भी कि धन की अभिलाषा करना गलत है उसके प्रति मोह छूटता नही है। सकाम कर्म गलत है यह जानने पर भी निष्कामता आती नहीं। क्या किया जाए?'

अम्मा कोई ज़वाब दिये बिना मौन हो उनके मुख पर दृष्टि ड़ाल मुस्कुराईं। अम्मा का मौन बहुधा शब्दों से ज़्यादा सारगर्भित होता है।

पुतुमना- (अम्मा और ओट्टूर को लक्ष्य करके) 'आप दोनों को एक साथ देखनेपर बड़ी खुशी हुई। श्रीकृष्ण और सुदामा जैसे।'

ओट्टूर- 'बहुत ठीक। ऐसा दृश्य अभी तक देखा नहीं होगा। सूरज के सामने अंधेरा भाग जाता है। मगर यहाँ (अपने को लक्ष्य करके) अंधकार का घनीभूत रूप देख सकते हैं।'

यह सुन सब हँसने लगे। दीनदयाल, जगदंबा के सामने दीनता की मूर्ति होनेवाला भक्त। फिर करुणा प्रवाह में कौनसी बाधा? केवल सुकृतियों के लिए सुलभ दृश्य!

१९८६ फरवरी १६ रविवार

सत्य संकल्पा अम्मा

आलप्पुया गई अम्मा सबेरे वापस आईं। अम्मा और बच्चें पिछले शुक्रवार को आलप्पुया गये थे। वहाँ रामायण ज्ञानयज्ञ चल रहा था। ब्रह्मचारी अधिकतर रात को ही वापस आयेंगे। आज यज्ञ का समापन दिन था। आज शाम की शोभायात्रा में वे भी भाग लेंगे।

सबेरे आलप्पुया से लौटते समय अम्मा ने कुसुम से कहा- 'बेटी, आश्रम पहुँचते ही चावल पकाना।' मगर उनके आश्रम पहुँचने तक वहाँ चावल सब्ज़ी पका चुके थे। कुसुम तुरंत निर्णय कर नही सकी। अम्मा ने क्यों मुझसे खाना तैयार करने को कहा? यहाँ तो सब तैयार हो चुका है। अब दुबारा मैं तैयार करूँ तो कहीं बरबाद तो नहीं होगा? दर्शन के दिनों में आनेवाली भीड़ भी आज नही है। अम्मा की आज्ञा का

पालन न करूँ तो आज्ञा भंग होगा। जो भी हो चावल पकायेंगे। अगर अधिक हो जाये तो रात को उसका उपयोग करेंगे। कुसुम ने अम्मा के आदेश के पालन का निश्चय किया। कई लोगों ने कहा कि चावल दुबारा तैयार नही करना - फेंक देना पड़ेगा। कुसुम ने और किसी की बात को कान न दिया। दोपहर का भोजन परोसते परोसते सबको स्पष्ट मालूम हो गया कि हमारा सारा हिसाब गलत हो गया। भक्तों की भीड़ बढ़ती गई। भोजन परोसा जा चुका तो बरतनों मे कुछ बचा नहीं। सब सिर्फ ज़रूरत के लिए काफी रहा।

अम्मा के आदेश का कुसुम अनुसरण नही करती तो आये भक्तों को भोजन कराने में असमर्थ और दुःखित होना पड़ता। अम्मा का प्रत्येक शब्द सार्थक होता है। फिलहाल निरर्थक अगर लगे तो उसका कारण उन शब्दों की गहराई समझने की हमारी असमर्थता ही है।

शाम को अम्मा कमरे से कीर्तन एवं भावदर्शन के लिए कलरिमंड़प आ रही थीं। इस समय एक ब्रह्मचारी ने पूछा- 'प्रार्थना मंदिर का काम आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक पैसे अब आश्रम में नही हैं। 'मातृवाणी' में हम सहायता की प्रार्थना छापें तो कैसा रहेगा?'

अम्मा- (गंभीरता से) 'क्या बेटा यह कह रहा है? इतने दिनों तक तुमने अनुभव से कुछ नही सीखा है। ईश्वर समर्पण रखनेवालों को किसी की चिंता नही करनी चाहिए। अभिलाषा के साथ किसी के पास जाना भी नही चाहिए। वह दुःख का कारण होगा। सिर्फ भगवान पर निर्भर रहना है। वे सभी ज़रूरी चीज़ें हमे देंगे। जहाँ तपस्वी हैं वहाँ किसी भी बात के लिए भटकने की ज़रूरत नहीं है। सब आवश्यक समय पर अपने आप पहुँच जायेगा।'

'क्या हमने हाथ में पैसे रखकर काम शुरू किया था। क्या किसी को देखकर प्रारंभ किया था? यही नही, अब तक सिर्फ भगवान का भरोसा किया। इसलिए उन्होंने किसी बात में कमी नहीं छोड़ी। आगे भी भगवान देख लेंगे।'

आश्रम के सामने जो प्रार्थना मंदिर बन रहा है उसका शिलान्यास करते समय सभी लोग आश्चर्यचकित रहे। कारण यह कि आश्रम में पैसे नही थे। तिरुवण्णामलै पर आश्रम के दो घर थे। जो रमणाश्रम के बिलकुल पास थे। प्रस्ताव आया कि उन्हें बेचा जाय। अम्मा जब तिरुवण्णामलै

जाती तब उनके भक्त उनके दर्शन करने आते थे। इसलिए कुछ लोगों को वह घर बेचने में कुछ मानसिक कष्ट था। इस पर अम्मा ने कहा- 'एक आश्रम के पास हमारा आश्रम हो तो प्रतिद्वंद्विता की भावना आ सकती है। इसलिए फिलहाल हम रमणाश्रम के पास अपना आश्रम नही रखेंगे। उन्हें बेचकर उस पैसे का उपयोग यहाँ करेंगे। आश्रम ऐसी जगह होना चाहिए जहाँ हमेशा सेवा कर सकें। वहाँ रमण भगवान का मठ प्रवर्तनशील है ही। वहाँ हमारे भी आश्रम की ज़रूरत नहीं है।' तिरुवण्णमलै के आश्रम भवन बेचकर उनसे प्राप्त पैसे से परयकड़व पर प्रार्थना मंदिर के लिए शिलान्यास करने का निश्चय हुआ। उसी समय प्रार्थना मंदिरवाले अहाते के बगल की कुछ जमीन बेचने का निर्णय उसके मालिक ने किया। प्रार्थना मंदिर बनाने के लिए सुरक्षित पूरी पूँजी से बगल की ज़मीन खरीदी। उसका स्मरण कर एक ब्रह्मचारी ने कहा कि अब प्रार्थना मंदिर की आधारशिला रखने की ज़रूरत नही।

अम्माने कहा कि- 'बच्चों जो भी तय हुआ है वह चलने दो। हम किसी बात की प्रतीक्षा में कुछ न करें। सब भगवान कर लेंगे। वे सब यथोचित संभालेंगे। निश्चित समय पर अम्मा ने प्रार्थना मंदिर का शिलान्यास किया। काम शुरू हुआ। उस दिन से आज तक किसी रुकावट के बिना काम आगे बढ़ता रहा है। ज़रूरी समय पर सारी आवश्यक चीज़ें जाने कहाँ से आ जाती थी। अम्मा ने विशेष रूप से कहा है कि किसी से कुछ नही माँगना चाहिए।'

अम्मा की बातें ज़ारी रहीं- 'जब हम सबको ईश्वर की इच्छा के रूप में देखतें हैं तब हमारा सारा बोझ उतर जाता है। किसी बात में कोई कठिनाई अनुभव नही होती। एक बेटी अम्मा को बहुत प्यार करती है, माताजी पुकारती है। एक बार वह झूला झूलते नीचे गिर पड़ी। मगर कोई चोट नही लगी। जहाँ गिरी वहाँ से उठकर वह कहती है कि माताजी की शक्ति से मैं झूले मे बैठी। माताजी ने झुलाया। माताजी ने नीचे ड़ाल दिया। माताजी ने कोई चोट होने नही दिया। हमे इसी तरह रहना चाहिए। सुख आये कि दुःख उसे हम ईश्वर की इच्छा मानते हैं, तो दूसरे उसे प्रारब्ध मानते हैं।'

अपने आश्रमजीवन को ज़ारी रखने की इच्छा प्रकट करते एक युवक से अम्मा ने कहा- 'आध्यात्मिक जीवन आग की लपटों में खड़े होते हुए भी झुलसने से बचने के समान है।'

अम्मा कीर्तन के लिए कलरिमंड़प पर बैठ गईं।

गजानना हे गजानना
गजानना हे गजवदना

सभी ताल बजाते साथ गाने लगें। भक्तिगानसुधा ने आश्रम में लहराना प्रारंभ किया।

१९८६ फरवरी २५ मंगलवार

अदृश्यसूत्रधारिणी

जर्मनी से आयी एक युवती और एक अधेड़ महिला ने आकर अम्मा को प्रणाम किया। उन्होंने एक थाल पर लाये फल अम्मा के चरणों पर भेंट किये। अम्मा ने दोनों को गले लगाकर आलिंगन किया। युवती आश्रम में पहली बार आई है।

अम्मा- 'बेटी का गाँव कहाँ है?'

युवती ने कोई ज़वाब नहीं दिया। उसकी आँखें छलछला उठीं। अम्मा ने उसकी पीठ सहलाते सांत्वना दी। वह रोने के सिवा और कुछ न कर सकी। उसके साथ आयी महिला ने उसके आश्रम आने की पृष्ठभूमी का विवरण दिया।

जर्मनी में टाइपिस्ट का काम करती वह युवती शारदादेवी की भक्त थी। नियमित रूप से वह शारदादेवी के बारे में लिखी पुस्तकें पढ़ती थी। दिनों के बीतते बीतते शारदादेवी के प्रति उसकी भक्ति बढ़ती गयी। अपनी आराध्यमूर्ति शारदादेवी को प्रत्यक्ष देख न सकने का दुःख अत्यधिक बढ़ता चला। उन्हीं दिनों एक रोज़ सबेरे ध्यान करते समय उसके मन में एक स्त्री रूप प्रकट हुआ। श्वेत वस्त्र, मंदहास्यमयी मुख, वस्त्रांचल से केश ढ़क रखे हैं। उस महिला ने वह रूप चित्र में भी तब तक नही देखा था। उसे आश्चर्य हुआ। फिर भी उसके मन में

यह विचार अंकित हो गया कि यह शारदादेवी का ही अन्य रूप है। उसने शारदादेवी को प्रत्यक्ष देखने का सा तीव्र आनंद मनमें अनुभव किया। इस घटना के तीसरे दिन उसे ड़ाक से अपने एक मित्र का पत्र मिला। खोलकर देखा तो उसमें एक फोटो भी रखा था। ध्यान के समय उसकी देखी हुई वही मूर्ति! वह खुशी से उछल पड़ी। फोटो की दूसरी तरफ पता लिखा था। उसने तुरंत अपने दोस्त को विस्तृत विवरण के लिए लिखा। किंतु वह मित्र अधिक बाते नही जानता था। उसका एक दोस्त घूमने भारत गया था। भारत से उस दोस्त ने वह चित्र उसे भेजा था। उसे आध्यात्मिक बातों में रुचि नही थी। इसलिए आध्यात्मिक रुचि रखनेवाली अपनी मित्र को वह फोटो भेज दिया। युवती ने आगे विलंब नही किया। उसने भारत आने की तैयारी की। वीसा वगैरह शीघ्र मिलें। वह मुंबई के विमान में बैठी। गंतव्य स्थान के विषय में उसकी जानकारी फोटो के पीछे दिए पते से ज़्यादा नहीं थी। वह मुंबई से कोचिन के विमान में बैठी। उसने अब तक हमेशा वह फोटो ले चलने की आदत बना ली थी। विमान में बैठे हुए वह फोटो हाथ में रखे अपलक आँखों से उसी को देखती रही। उसके पास बैठी स्त्री ने इसपर ध्यान दिया। अम्मा का फोटो था। वह स्त्री अम्मा की भक्त थी। उसने उस विदेशी महिला से कुशल समाचार पूछे। युवती ने अपने गंतव्य स्थान का पता फोटो के पीछे लिखे विवरण में दिखाया। उसने कहा कि पहली बार जा रही है। रास्ता मालूम नहीं। भक्त महिला ने कहा- "मैं भी वहीं जा रही हूँ। मैं आप को वहाँ पहुँचा दूँगी।' इस तरह वह युवती किसी कठिनाई के बिना भक्त महिला के साथ आश्रम पहुँच गई।

यहाँ एक बात विचारणीय है। महात्मा लोग साधकों को आध्यात्मिक पथ पर मार्गदर्शन देने उनके संस्कार के अनुसार आकर्षित करके आगे बढ़ाते हैं। अम्मा ने श्रीकृष्ण भगवान, परमशिव, श्रीरामकृष्णदेव, काली, दुर्गा, मूकांबिका, आनन्दमयी माँ, रमण महर्षि आदियों के रूप में भक्तजनों को दर्शन दिये हैं। किसी विशेष दर्शन से अम्मा के पूर्वावतार का अनुमान करना असंभव है।

अम्मा ने उनका निवास दिखाने का दायित्व एक ब्रह्मचारिणी को सौंपा। ब्रह्मचारियों की पर्णशाला के पीछे जहाँ तहाँ कूड़ा-कचरा जमा था।

अम्मा कोई पूर्वसूचना दिये बिना आकर कचरा हटाने लगीं। ब्रह्मचारीगण झिझकते हुए दौड़े आये। आश्रम के भक्तजन भी अम्मा की मदद करने आगे बढ़े। काम के बीच में भी अम्मा ने अपने गृहस्थ भक्तों से बातचीत की। उनकी समस्याओ का समाधान बताया। कोईकोड से पिछले दिन दर्शनार्थ आया परिवार अम्मा के पीछे खड़ा था।

बच्चों का शिक्षण

एक भक्त ने अम्मा से अपनी बेटी की पढ़ाई की बात कही- 'अम्मा, यह एक अक्षर तक नही पढ़ती। अम्मा इसे उपदेश दें। (पत्नी को लक्ष्य करके) यह तो बेटी को दुलारते दुलारते बिगाड़ रही है।'

पत्नी- 'बच्ची है न अम्मा, सोचा कि माँ-बाप दोनों से उसे डाँट न मिले। इसीलिए मैं इसे कुछ नही कहती।'

एक भक्त- 'आजकल की मातायें ही बच्चों को अधिक दुलारती बिगाड़ती हैं।'

अम्मा- 'सिर्फ माताओं को क्यों दोष देते हो? बच्चों के पालन में पिता का भी दायित्व है। हमारे मातापिता बच्चों को छोटी उम्र में ही स्कूल भेजना चाहते हैं। उन्हें सिखाना है, नौकरी मिलना है, सिर्फ इसी का ध्यान है। उनकी आध्यात्मिक उन्नति, चरित्रगत उन्नति आदि पर वे बिलकुल नही सोचते। बच्चों को प्यार करनेवाले मातापिता को पहले उनके चरित्र पर ध्यान देना चाहिए। उनमें अच्छे संस्कार बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसलिए बच्चों को आध्यात्मिक बातों का उपदेश देना होगा। अच्छे तत्त्वों से भरी कहानियाँ उन्हें सुनानी चाहिए। जप और ध्यान का अभ्यास कराना चाहिए। साधना के ज़रिये प्रतिभा एवं स्मरणशक्ति का विकास होगा। वर्षभर सीखी हुई बातें पुस्तकों को एक बार पढ़कर देखने से स्मृति में चढ़ जायेगी। कोई प्रश्न सुनते ही कॉम्प्यूटर की तरह मन में उत्तर उभर आयेगा। साथ ही साथ चरित्र भी सुधर जायेगा। उनकी भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की उन्नति होगी।'

काम पूरा होने पर अम्मा पास एक नारियल के पेड़ के नीचे बैठीं।

भक्तगण भी खुशी से अम्मा के चारों ओर बैठ गये। एक पुराने भक्त ने अम्मा को एक नवागत भक्त का परिचय दिया।

भक्त- 'यह भाई मलप्पुरम से आया है। पूरा समय प्रकृति संरक्षण के कार्यक्रमों में व्यस्त रहता है। ये कुछ लोग मंदिरों के तालाब और छोटे मंदिरो की सुरक्षा का प्रयत्न कर रहे हैं।'

युवक ने विनम्रता से मुस्कुराते हुए हाथ जोड़े।

अम्मा- 'हमारे पास कायल(पश्चजल) में मिट्टी ड़ालकर पायी हुई कुछ जमीन ही है। जितनी ज़मीन है उसमें बच्चों ने केला, नारियल, फूलवाले पौधे आदि लगा भी दिये हैं।'

अम्मा एक गिलास पानी से हाथ धोने के बाद कलरिमंड़प की तरफ चलीं। भक्तजनो ने उनका अनुगमन किया।

युवक- 'सारी भौतिक संपत्ति के बावजूद लोग आज दुःखित हैं। इसका कारण क्या है, अम्मा?'

सुख कहाँ खोजना चाहिए

अम्मा- 'सही है, आज संसार में अधिकांश लोगों को शांति और चैन नही हैं। बड़ा महल बनाकर उसमे पड़े पड़े आत्महत्या करते हैं। यदि भवन, धन और ऐषाराम आनंद देनेवाले हैं तो दुःखित होकर मरने की क्या ज़रूरत? उनमें निश्चय ही आनंद नहीं है। शांति और चैन मन पर निर्भर है। वह मन क्या है? उसका उद्भव कहाँ है? जीवन का ध्येय क्या है? जीवन क्या है? कैसे जीना चाहिए? ये सब हम नहीं समझते। वह समझकर उसके अनुसार जीवन बितायें तो शांति की खोज में भटकने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। आज सभी शांति और आनंद बाहर खोज रहे हैं। अम्मा को एक कहानी याद आ रही है-'

'एक बुढ़िया आँगन भर बड़े ध्यान से कोई चीज़ ढूंढ़ रही थी। उधर से आये एक आदमी ने पूछा कि दादी क्या ढूँढ़ रही है। वह बोली- 'मेरा कर्णफूल खो गया। उसे ढूँढ़ रही हूँ।'

आगन्तुक ने दादी की मदद की। अच्छी तरह देखने पर भी वह नहीं

मिला। आगन्तुक ने दादी से पूछा- 'क्या आप जानती हैं कि कर्णफूल कहाँ गिरा?'

दादी- 'बेटा, कर्णफूल कमरे के भीतर गिरा था।'

दादी का ज़वाब सुनकर आगन्तुक व्यक्ति को क्रोध आया। 'जहाँ गिरा वहाँ देखे बिना यहाँ खोजने से कैसे मिलेगा?'

दादी- 'बेटा, कमरे के भीतर अंधेरा है। यहाँ तो रोशनी है। इसलिए यहाँ खोज रही हूँ।'

'बेटा, हम इस दादी के समान हैं। जीवन में शांति पाने के लिए उसका यथार्थ स्रोत समझकर नहीं खोजना चाहते। बाहरी दुनिया में शांति नहीं मिलेगी। शांति व्यक्ति के मन पर निर्भर करती है।'

यागों के लाभ

युवक- 'हालही में एक याग संपन्न हुआ। उसका खंड़न करते हुए अनेक लोगों ने वक्तव्य दिये थे। उनकी शिकायत थी कि ईश्वर के लिए क्यों धन बरबाद किया जाए?'

अम्मा- 'सही हैं। सुना है कि याग करते समय ईश्वर के नाम पर फालतू खर्च करने की आलोचना हुई थी। बेटा, ईश्वर को याग की ज़रूरत नहीं है। याग करने से लोगों का ही लाभ होता है। उससे अंतरिक्ष शुद्ध होता है। हम जैसे नस्य करके भीतर का कफ बाहर निकाल देते हैं, वैसे होमाग्नि से निकलता धुआँ अंतरिक्ष को शुद्ध बनाता है। अम्मा नहीं बताती कि याग आदि के लिए भारी व्यय करना चाहिए। सोना, चाँदी वगैरह होम करने की ज़रूरत नहीं किंतु उसके पीछे एक तत्त्व है। हमारे मन का बंधन करती वस्तुओं का होम करने से यही दिखाया जाता है कि हम उनसे बंधे नहीं है। सबसे उत्तम यज्ञ अपना दंभ ईश्वर प्रेम में होम करने में है। 'मैं' और 'मेरा' का भाव छोड़कर सबको एक सत्ता, ईश्वर के रूप में देखने में समर्थ होना चाहिए। जान लेना चाहिए कि अपने से अन्य कोई वस्तु नहीं। अहंकार का होम करने से हम उस पूर्णता पर पहुँचते हैं।'

'देश में जो होम संपन्न होते हैं उनके विषय में कहे तो होमकर्ताओ को ही नहीं सब को लाभ पहुँचाते हैं। होम आदि न कर सके तो औषधसस्य और वृक्ष अच्छी संख्या में लगाकर पालन करें। वे वातावरण को शुद्ध बना देते हैं। औषधसस्यों का स्पर्श करके आती हवा जब साँस में मिल जाती है तब कई रोगों से बच सकते हैं।'

'आज लोग अधीर हो गये हैं। वे एक पौधा पालने तक का धीरज नही रखते। जो पेड़ हैं उन्हें भी काटकर बेचने और धन कमाने के लिए अधीर हैं। आज 'कावु'(ग्राम मंदिर) और तालाब देखने को नही मिलते। वन को नष्ट करके कृषिभूमि बनाया। इसलिए प्रकृति के नियम ही बदल गये हैं। समय पर पानी नहीं बरसता। धूप नहीं है। पूरा अंतरिक्ष मलिन हो गया। मानव ही खुद मानव को जाने बिना जीता है। वह केवल अपने लिए जीता है। साथ ही शरीर को चैतन्य देती आत्मा को भुला देता है।'

'याग, होम आदि पर बेकार धन क्यों खर्च करना चाहिए? ईश्वर को यज्ञ और होम की क्या ज़रूरत है? ये प्रश्न पूछनेवालों को चंद्र से मुट्ठी भर मिट्टी लाने के लिए करोड़ो रुपये खर्च करने के विषय में कोई शिकायत नहीं है। यज्ञ-यागों का लाभ हमें ही होता है। घर पर परंपरागत दीपदान जलाना उपहास का विषय है। किंतु उससे निकलता धुआँ अंतरिक्ष को शुद्ध बनाता है। संध्याकाल में अंतरिक्ष में दूषित तरंगे होंगी। इसीलिए कीर्तन के लिए वह समय निर्धारित किया है। कीर्तन न करें तो भौतिक वासनाये बढ़ेंगी। संध्याकाल में भोजन करना नहीं चाहिए। वह दूषित हवा के चलने का समय है। रोगों की पीड़ा होगी। कहते हैं कि संध्याकाल हिरण्यकशिपु के वध का समय है। कारण यह कि उस समय अहंकार अधिक प्रबल रहता है। ईश्वर पर निर्भर रहने से ही अहंकार को नष्ट कर सकते हैं। मगर आज लोग संध्या समय पर टी.वी. देखते हैं या सिनेमा के गीत सुनते हैं।'

'आज कितने घरों में पूजाकक्ष हैं? पहले घर निर्माण करते समय पूजाकक्ष को महत्त्व देते थे। आज भगवान को मंजिल की सीढ़ियों के नीचे स्थान दिया जाता है। हृदयवासी ईश्वर को अपने घर का हृदय भाग देने का मन होना चाहिए। वह ईश्वर से संबंध दिखाता है। ईश्वर को इन सब की ज़रूरत नहीं।'

'भगवान हमसे कोई चीज़ नही चाहते। सूरज को क्या मोमबत्ती की ज़रूरत है? अंधेरे में पड़े हमें प्रकाश चाहिए। नदी को प्यास बुझाने पानी की क्या ज़रूरत? भगवान का आश्रय ग्रहण करने से हमारा हृदय पवित्र हो जाता है। निश्छल हृदय होने से हमेशा आनंद अनुभव होता है। भगवान के प्रति समर्पण करने से हमें शांति मिलती है। किंतु हम यों काम करते हैं मानो ईश्वर हमसे कईं चीज़े चाहते हैं।'

'प्रभु सर्वशक्तिमान हैं। सर्वव्यापी हैं। किंतु उन्हे निश्छल हृदय में ही देखा जा सकता है। मटमैले पानी में सूर्य का प्रतिबिंब दिखाई नही देता। पानी स्वच्छ हो तो प्रतिबिंब देखने में कठिनाई नही होती।'

'हम जब ईश्वरतत्त्व अपनाकर जीते हैं तब हम और दूसरे भी पवित्र जीवन बिताने में समर्थ होते हैं। जीवन में शांति का अनुभव कर सकते हैं। नदी में पानी उमड़कर बहता है तो उससे हमारा लाभ होता है। उसका पानी लेकर बाहर की गंदी मोरी को साफ कर सकते हैं। जमा हुआ गंदे तालाब को नदी से जोड़कर तालाब के पानी को स्वच्छ बना सकते हैं। भगवान से संबंध स्थापित करने से हमे विश्व मानस प्राप्त होता है। यों हम आत्मतत्त्व से घनिष्ठ बनते हैं। दूसरों का भी लाभ होता है।'

भक्तों के विविध संदेह

दूसरी भक्त महिला- 'अम्मा, यहाँ जो रहते हैं, वे क्या अम्मा के कहने से रहते हैं?'

अम्मा- 'अम्मा ने किसी से यहाँ रहने को नही कहा। एक गृहस्थाश्रमी को एक परिवार की बात ही देखनी पड़ती है। संन्यासी को पूरे संसार का बोझ उठाना पड़ता है। जब कोई संन्यास स्वीकार करने की इच्छा प्रकट करके यहाँ आता है तब उसे तुरंत स्वीकार करें तो आगे क्या क्या झंझटे होंगी? हमें सभी बातों पर ध्यान देना चाहिए न? प्रारंभ का विराग आगे ज़ारी रखना अधिकांश लोगों के लिए संभव नहीं है।'

'अम्मा ने सभी बच्चों से यही कहा है कि यहाँ नही ठहरायेंगे। फिर भी कुछ लोग जाने को राज़ी नहीं हुए। आखिर कहा कि घर का अनुमतिपत्र लाने पर यहाँ रखेंगे। कईं बच्चें घरवालों की अनुमति लेकर

आ गये। इसी क्रम से अभी तक अधिकांश लोगों को ठहराया है। उनमें वह विराग भावना देख पड़ती है। कुछ लोगों को घर की अनुमति नही मिली। घर पर सवाल उठे। घरवालों ने अदालत मे मुकद्दमा दिया। पुलिसवालों को लेकर आये और बच्चों को लेकर पागलों के अस्पताल तक ले गये। (हँसते हुए) जानते हो क्यों? पिछले दिन तक जो बच्चा शराब पीता था वह अम्मा के दर्शन के बाद शराब नहीं पीता। माता-पिता का हठ है कि बच्चे को कब्र में भले ही पहुँचा दें पर लोकोपकार के लिए संन्यासी होने नही देंगे।'

युवक- 'आश्रम जीवन चुनने की बात सोचकर क्या कोई बाद में पछताते हैं।'

अम्मा- 'जिन्हें सही लक्ष्यचेतना है वे कभी दुःखित नही होते। उनकी यात्रा आनंदभरी है। उन्हें मृत्यु का भी ड़र नहीं है। बल्ब फ्यूस हो जाने पर बिजली नष्ट नहीं होती न? शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा नष्ट नही होती। यह बात उन्हें मालूम है। उनका जीवन ईश्वर को समर्पित है। अतीत के विषय में उन्हें चिंता नहीं है। भविष्य के बारे में भी चिंता नहीं। दुःखित भी नहीं होते। वे नौकरी की खोज में इंटरव्यूह के लिए जानेवालों के समान नही हैं, नौकरी पर लगे लोगों के समान हैं। इंटरव्यूह के लिए जानेवालों को हमेशा चिंता है कि नौकरी मिलेगी या नहीं। जिन्हें नौकरी मिल जाती है वे शांति से जाते हैं। अधिकांश बच्चों को विश्वास है कि गुरु हमें लक्ष्य तक पहुँचा देंगे।'

युवक- 'अम्मा, एक आध्यात्मिक जीव की प्रार्थना कैसी होनी चाहिए?'

अम्मा- 'अनेक लोग दुःखी हैं। प्रभु, उन्हें प्यार करने की शक्ति देना। उन्हें निष्काम हो प्यार करने का मन देना।' यही आध्यात्मिक जीव की प्रार्थना होनी चाहिए। वे दूसरों की रक्षा की शक्ति पाने तप करते हैं। तपस्वी स्वयं जलकर दूसरों को सुगंध देनेवाली अगरबत्ती के समान हैं। खुद कटने पर भी काटनेवालों को छाया देते वृक्ष के समान हैं। कोई क्रोध करे तब भी बदले में प्यार और दया बरसाने में ही आध्यात्मिक जीव संतोष पाता है।'

'मोमबत्ती स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश देती है। वैसे ही सच्चे तपस्वी स्वयं त्याग सहन करते हुए दूसरों की मदद करना चाहते हैं। अपनी कठिनाइयाँ भुलाकर दूसरों को आनंद देने का मन पाना- वही उनका ध्येय है। वे उसीके लिए प्रार्थना करते हैं। अम्मा ऐसे लोगों की प्रतीक्षा में हैं। ऐसे भाव से तपस्वी के हृदय का ईश्वरप्रेम जगता है। मुक्ति ऐसे लोगों की खोज में स्वयं आयेगी। मुक्ति एक दासी की तरह उनके पीछे खड़ी रहेगी। जैसे हवा के आँधी बनने पर सूखे पत्ते आदि उसके पीछे उड़ते जाते हैं वैसे ही। उलटे ऐसी विशालता जिसमे न आ जाये वह कितनी भी तपस्या करे साक्षात्कार नहीं मिलेगा। यह अपनी मुक्ति चाहनेवालों की जगह नहीं हैं।'

'बच्चों, प्रार्थना केवल कीर्तन नहीं है। मधुर शब्द, दूसरों की तरफ मुस्कुराता मुखमंड्ल, उनसे करुणा, विनय, ये सभी प्रार्थना के अंतर्गत आते हैं। एक हाथ के कटने पर जैसे दूसरा हाथ सहलाने दौड़ा आता है वैसे ही दूसरों की गलती को क्षमा कर करुणा बरसाते मन का विकास करना चाहिए। मन विशाल हो जाये तो हम कितने ही लोगों को राहत दे सकते हैं। वह निस्स्वार्थता हमारे भीतर की शांति और आनंद का अनुभव करने की शक्ति देगी। अम्मा छोटी उम्र में यही प्रार्थना करती थी- 'प्रभो, आप का हृदय, सिर्फ हृदय मुझे दो। आप जैसे निःस्वार्थ भाव से संसार की सेवा करते हैं वैसे ही सब को निःस्वार्थ भाव से प्यार करनेवाला मन दें। अम्मा वही बच्चों से भी कहती हैं।' अम्मा अचानक मौन हो गईं। आँखें बंद हो गईं। कुछ क्षण बाद आँखे खोलकर एक ब्रह्मचारी से भजन गाने को कहा। ब्रह्मचारी ने गाया। भक्त लोगों ने उसके साथ गाया।

आओ अंबिके, माते मनोहरी
तावक दर्शन दो!
मेरे संचित सौभग चित्तपद्म में
तुम्हारा सुंदर रूप विराजमान हो
मेरे मन में भक्ति को जगाता
धन्य उषःकाल किस दिन जागेगा?.....

अम्मा ने दोनों हाथ ऊपर की तरफ उठायें भावमग्न हो कीर्तन आगे गाया-

नाम जपते संतृप्त होकर मैं
किस दिन आनंदबाष्प बरसा सकूँ?
वह दिन कब आयेगा?
जिस दिन मेरे चित्त और आत्मा
विशुद्ध बने रहेंगे
क्या वह दिन आयेगा
जब मैं अभिमान, लज्जा, क्लेश
सबको ठुकरा सकूँ?
भक्ति का मधु मनभर पीकर मैं
कब प्रेम से मस्त बनूँ?
दिल खोलकर हँसते
आनंद मग्न हो
कब मैं आँसू बहाते रो पड़ूँ?

अम्मा ने कई पंक्तियाँ दुहराईं। कीर्तन की समाप्ति पर भी अम्मा भावमग्न थीं। आँखों से अश्रुकण टपक पड़ें। सबने दोनों हाथ जोड़कर अम्मा को मन से प्रणाम किया।

कीर्तन प्रारंभ करने का समय हो गया। सब कलरि मंड़प पहुँचे। कीर्तन ज़ारी रहा-

मेरा मानस रो रहा है अम्मा!
क्या तुम्हें सुनने के लिए कान नहीं अम्मा?
मेरा मानस रो रहा है
तड़पते हृदय से तुम्हारी खोज में
चारो ओर मैं भटकती रही!
मेरे सामने आने में इतनी देर क्यों?
मैंने क्या अपराध किया अम्मा.... अम्मा
अशक्त मेरी इतनी उपेक्षा करने
मैंने कौन सा अपराध किया?
गरम आँसुओ से मैं

तुम्हारे चरणों को धोऊँगी रोज़
मेरी अम्मा...
इस दुःसह प्रारब्ध भार से
मैं बहुत परेशान हूँ अम्मा...
थके हुए इस भक्त को
अवलंब देने में विलंब न
करना अम्मा...

थोड़ी देर पहले जो अम्मा सेवा को भक्ति का पर्याय बता रही थीं वें अब जगदंबा के सामने पड़ी हुई विलपती भक्त बन गईं हैं। बारी बारी से विभिन्न भावों की यह स्थिति देखने पर कोई भी मन में सोचेगा-

दुरुह और आश्चर्यजनक हैं अम्मा
आपके विभिन्न भाव!

१९८५ फरवरी २६ बुधवार

दंड़नीतिस्था

कुछ दिनों से अम्मा के समीप रहने का सौभाग्य न पायी मंजू नामक कन्या स्कूल गये बिना खड़ी है। अम्मा ने उसके स्कूल न जाने का कारण पूछा। अंत में बेंत दिखाकर उसे ड़ाँटा और घाट तक पहुँचाया। उसके बाद अम्मा भक्तों को दर्शन देने पर्णशाला में वापस आईं।

वहाँ अम्मा का स्वागत एक बालक ने किया। वह बालक आश्रम में रहने के लोभ से पिता को हठकर ले आया था।

बालक के पिता- 'यह अम्मा को देखने का हठ करता है। वह स्कूल भी नही गया। इसे यहाँ ले आना पड़ा। रविवार को छुट्टी के दिन आने की बात कहने पर भी यह मानता नहीं।'

अम्मा- (हँसते हुए) 'आज अभी एक व्यक्ति को भगाया है। क्यों बेटा? स्कूल नहीं जाना है?'

बालक- 'नहीं, अम्मा के पास रहना मेरे लिए काफी है।'

भक्त- 'वह कहता है कि यहाँ रहकर सीख लेगा। रोज़ यह कहते

हुए रोता है।'

अम्मा- (हँसते हुए) 'यहाँ रहने पर अम्मा का व्यवहार एकदम बदलेगा। सामने मेहंदी के पेड़ की ड़ाली है। बच्चों को पीटने के लिए ही यह पेड़ लगाया है। (बालक से) इसलिए बेटा स्कूल जाना न छोड़ना। अम्मा का बेटा है न? बेटा परीक्षा पास हो के आना। यहाँ रहेंगे।'

संन्यास धीर के लिए

अम्मा के वात्सल्य में बालक घुल गया। अम्मा के ओठों ने उसके गाल पर जो प्यार का प्रतीक लगाया, उसमें सब कुछ भूल गया।

एक भक्त ने आकर अम्मा को प्रणाम किया। उनके एक दोस्त ने घर छोड़ा है। दोस्त की पत्नी और दो बच्चे हैं। खास आमदनी न होने पर भी वे ठाटबाठ की ज़िन्दगी बिताते थे। इससे वह आदमी बड़ा कर्ज़दार हो गया। जिन्होंने कर्ज़ दिया वे घर पर आकर हल्ला मचाने लगे और कोई उपाय नहीं दिख पड़ा तो संन्यास के नाम पर घर छोड़ा। दोस्त के इस व्यवहार को लक्ष्य करके भक्त ने अम्मा से कहा- 'कई लोगों के लिए आश्रमजीवन जीवन से पलायन है। कठिन समस्यायें और तकलीफें आती हैं तो उनसे जूझने में असमर्थ होकर कुछ लोग संन्यासी बन जाते हैं।'

अम्मा- 'बेटे, ऐसे लोग संन्यास में स्थायी रूप से नही रह सकते। आध्यात्मिक यात्रा ज़ारी नही रख सकते। आध्यात्मिक जीवन समर्थ एवं धीर व्यक्तियों के लिए है।'

'जीवन का सही मूल्यांकन किये बिना कुछ लोग एकाएक सर्वस्व त्यागकर गेरुआ कपड़े पहनते हैं। उनका जीवन निराशापूर्ण निकलेगा। एक गृहस्थ को एक पत्नी और दो संतानों की ज़रूरतों पर ही ध्यान देना पड़ता है। लेकिन आध्यात्मिक व्यक्ति को पूरे विश्व का भार वहन करना पड़ता है। उसे किसी भी परिस्थिति में विचलित नहीं होना चाहिए। अपने विषय में दृढ़ रहना चाहिए। कोई उसे पीटे या कोई स्त्री उससे जबरदस्ती लिपट जाये तब भी उसे ज़रा भी चंचल नहीं होना चाहिए। उसका जीवन दूसरे के वाक्य या काम पर निर्भर नही रहता। किंतु आज हम ऐसे

नही हैं। कोई द्वेषपूर्ण भाव से दो शब्द कहे बस! उसे जान से मार डालने उतारू हो जाते हैं। अगर तुरंत कुछ कर नही सके तो आगे उसको मटियामेट करने की धुन सवार हो जाती है। हमारी ज़िन्दगी का तराज़ू दूसरों के ओठों के दो शब्दों पर निर्भर रहता है। परंतु आध्यात्मिक जीव ऐसा नहीं रहता। वह अपने ऊपर निर्भर रहने का अभ्यास करता है। वह यथार्थ जीवन का अध्ययन करता है। सही विवेक एवं विराग के बिना आध्यात्मिक जीवन संभव नहीं है।'

अम्मा आगे बोलीं- 'एक जगह एक दंपती थे। पति मेहनत करके कितना भी कमा लाता, पर पत्नी उससे संतुष्ट न होती। वह प्रतिदिन पति को गाली देती। पत्नी से हमेशा 'और और' की टेक ही सुनने को मिलती थी। पत्नी की इस प्रवृत्ति के कारण पति ज़िन्दगी से ऊब गये। आत्महत्या करने का साहस नहीं था। इसलिए वे संन्यास स्वीकार करने घर से चल पड़े। कुछ दूर यात्रा करके गुरु का पता लगाया। गुरु ने शिष्य रूप में स्वीकार करने के पहले उनसे पूछा- तुम क्या घर से झगड़ा कर संन्यासी होने निकले हो या सच्चे विराग के कारण संन्यासी होना चाहते हो?'

उन्होंने कहा- 'संन्यास की इच्छा से ही घर छोड़ा है।'

गुरु ने पूछा- 'क्या तुम्हें किसी बात की इच्छा नहीं? किसी चीज़ की इच्छा नहीं है? क्या धनदौलत, मानसम्मान तुम्हें नहीं चाहिए?'

'मुझे कुछ नहीं चाहिए। किसी बात का शोक या इच्छा नहीं है।'

'क्या तुम त्यागी बनने आये हो?'

'हाँ, मैं त्यागी बनने आया हूँ।'

कुछ बातें पूछने के बाद गुरुदेव ने घर से झगड़ा करके आये उस आदमी को शिष्य के रूप में स्वीकार किया। उन्हें एक कमंड़लु और योगदंड़ दिया।

कुछ दिनों के बाद दोनों तीर्थयात्रा पर निकले। चलते चलते थक गये तो गुरु और शिष्य दोनों ने नदीतट पर विश्राम किया। शिष्य कमंडलु और योगदंड नदी किनारे रखकर स्नानार्थ पानी में उतरा। स्नान के बाद आया तो कमंडलु गायब! कई जगह खोजा। कमंडलु न मिलने के दुःख

और क्रोध से वह क्षुब्ध हो गया।

गुरु ने पूछा- 'तुम्हें किसी चीज़ की इच्छा तो नहीं है। फिर भी कमंड़लु के पीछे इतना हल्ला कर रहे हो। जो गया सो गया। हम आगे चलें।'

शिष्य- 'कमंडलु के बिना मैं पानी कैसे पी सकता हूँ? पानी पीने या सुरक्षित रखने के लिए मेरे पास और कोई पात्र नहीं है।'

गुरु- 'तुम्हें तो कोई अभिलाषा नहीं है। फिर यह छोटी अभिलाषा क्यों लिये चलते हो? सब को ईश्वर की इच्छा समझो।'

शिष्य बड़ा दुःखित हुआ। शिष्य की चिंता देख गुरु ने कमंडलु वापस दिया। उन्होंने शिष्य को जाँचने के लिए कमंडलु छिपा रखा था।

दोनों की यात्रा ज़ारी रही। दोपहर के भोजन का समय आया। शिष्य को भूख तेज़ से लगी। गुरुदेव कुछ नहीं दे रहे थे। भूख बरदाश्त करने में असमर्थ शिष्य शिकायत करने लगा।

गुरुदेव ने कहा- 'आध्यात्मिक जीव को धीरज और सहनशीलता चाहिए। क्या एक दिन भोजन न मिलने पर भूख सहन करना सीखना नहीं चाहिए? तुम बारह बजे ही थक जाओ तो क्या होगा? आध्यात्मिक जीवन बितानेवालों को सब से पहले भोजन की लालसा छोड़नी चाहिए। आध्यात्मिक जीवन में पहले पेट काटना चाहिए।'

फिर भी गुरु ने थोड़ी देर बाद शिष्य को भूख कम करने का थोड़ा सा चूर्ण दिया। मगर वह इतना कड़ुआ था कि शिष्य खा नहीं सका। वह वमन करने लगा। शिष्य संन्यासी जीवन को उचट गया। किसी तरह घर वापस जाने की इच्छा हुई। उसने गुरुदेव से इसकी अनुमति माँगी।

गुरु ने पूछा- 'तुम क्या सोचकर संन्यास स्वीकार करने चल पड़े?'

शिष्य ने कहा- 'मैंने नहीं सोचा कि संन्यास का मतलब ऐसा जीवन है। स्नानकर तिलक धारे कहीं आँख बंद करके बैठना होगा। सभी प्रणाम करने आयेंगे। भिक्षा मिलेगी। ठीक समय पर अच्छा भोजन मिलेगा और कोई काम करना नहीं पड़ेगा। यही मैंने सोचा था।'

शिष्य ने सोचा कि इस ज़िंदगी से पत्नी की गाली बहतर है। वह घर लौटा। अम्मा ने कहानी समाप्त की।

सही विराग के बिना दूसरों से झगड़ा टंटा करके संन्यास के लिए निकल पड़ें तो यही परिणाम रहेगा।

अम्मा आगे बोलीं- 'नित्य और अनित्य का विवेचन करके पूर्ण विराग पाये बिना आध्यात्मिक जीव होने के लिए प्रस्थान नहीं करना चाहिए। गरीबी और रोग के कारण क्लेश सहन करते लोगों की व्यथायें समझकर उन गरीबों की निष्काम सेवा करने का मन विकसित कर लेने के लिए ही आध्यात्मिक जीवन होना चाहिए। आध्यात्मिक जीव हर साँस में संसार का दुःख स्मरण कर वह व्यथा अनुभव करेगा। अपने सुख का स्मरण नही करेगा। 'हे प्रभो! तुम कहाँ, तुम कहाँ' की खोज के कारण उसका मन सदा शक्ति प्राप्त करता रहेगा। साधारण व्यक्ति जब एक मोमबत्ती की तरह चमकता है, तब वह सूर्य की तरह जाज्वल्यमान रहेगा। हज़ारों को प्रकाश देगा। वह अपनी मुक्ति नहीं चाहता। साधना के ज़रिये प्राप्त शक्ति को विश्व को समर्पण करने की प्रवृत्ती ही त्याग है। वही उसका ध्येय है। आध्यात्मिक जीव केवल त्याग पसंद करता है।'

'यहाँ आये बच्चों को कई प्रकार से जाँचने के बाद ठहरने की अनुमति दी है। सिर्फ एक बार का खाना। वह भी स्वादहीन दिया। नमक, मिर्च, इमली के बिना भोजन। सब को उन्होंने खुशी से स्वीकार किया। उनमें वह संयम है। यह देखना है कि आगे कभी सेवा के लिए जब चल पड़ें तब क्या ये भोजन की स्वाद के पीछे चोरी करेंगे। देखा कि क्या ये ध्यान के नाम पर काम किये बिना आलसी रहते हैं? कितना भी तप करे यहाँ बाहरी काम करना पड़ेगा। ऐसी मानसिकता न हो तो वह सुस्त एवं देशद्रोही निकलेगा।'

'अम्मा ने कहा है कि अगर कोई काम नहीं मिला तो दो नारियल के पेड़ की सेवा करो। उन्होंने सारे काम किये। किसी भी ढ़ंग से देखने पर वे हारे नहीं। अभी तक जितने बच्चे आये हैं उन सब में ऐसी श्रद्धा मिलती है। जिनमें वह नहीं है वे आश्रम में रह नहीं पायेंगे। कोई भी हो धीरे धीरे वापस जाना पड़ेगा।'

तीन बजे तक अम्मा कमरे में गईं।

१९८६ फरवरी २८ शुक्रवार

अहिंसातत्व

समय अपराह्न तीन बजे। कल 'मातृवाणी' पत्रिका ड़ाक से भेजने का दिन है। अम्मा और ब्रह्मचारी मिलकर ध्यान मंदिर के बरामदे पर बैठकर पत्रिका लिफाफे में ड़ालते व स्टैंप लगाते है। हालैंड़वाला पीटर वहाँ आया। उसने क्रोध से अंग्रेज़ी में नीलू से कहा- 'किसके कहने से गुलाब के पौधे को कीड़े की दवा छिड़कते हैं? अहिंसा की बात करनेवालों को बेज़बान प्राणियों की यों हत्या नहीं करनी चाहिए।'

नीलू ने अनुवाद करके अम्मा को पीटर के शब्दों का भाव समझाया। मगर अम्मा ने कुछ भी कहे बिना अपना काम ज़ारी रखा। पीटर की ओर सिर्फ एक बार देखा।

पीटर दुःखी होकर दूर खड़ा रहा। थोड़ी देर बाद अम्मा ने पीटर को पास बुलाकर कहा- 'पीटर बेटे, गायत्री से कहकर अम्मा को पीने के लिए कुछ जल लाना।' पानी लाते समय भी पीटर का चेहरा उदास था। अम्मा ने पानी अपने हाथ में लेकर कहा- 'यह उबाला हुआ पानी है न? क्या अम्मा के लिए सादा पानी काफी नहीं था?'

पीटर- 'तो फिल्टर पानी ले आऊँगा या नारियल का पानी।'

अम्मा- 'अम्मा के लिए सादा पानी काफी है।'

पीटर- 'सादा पानी मत पीजिएगा। तबीयत खराब होगी।'

अम्मा- 'मगर पानी उबालते समय कितने ही कीटाणु नष्ट होते हैं? क्या वह पाप नहीं है पीटर?'

पीटर के पास ज़वाब नही था।

अम्मा- 'हमारे चलते समय कितने ही प्राणी पैरोंतलें पड़कर मर जाते हैं। हमारे साँस लेते समय वे मरते हैं। क्या इस सबसे बचा जा सकता है?'

पीटर- 'किंतु पौधे को कीड़े की दवा छिड़कना टाल सकते हैं। बाकी हमारे बस की बात नही हैं। मान लिया।'

अम्मा- 'ठीक है। बेटे की बच्ची को या माँ को रोग आये तो

बेटा क्या दवा पीने का आग्रह नहीं करेगा?'

पीटर- 'और क्या? रोग से मुक्ति ही मुख्य है।'

अम्मा- 'दवा पीते समय कितने लाख रोगाणु नष्ट होते हैं।'

पीटर- 'वह....' पीटर आगे कुछ नहीं कह सका।

अम्मा- 'तो रोगाणुओ से हमदर्दी करने से काम नहीं चलेगा हैं न? इस गुलाब के पौधे पर जब कीड़े धावा करते हैं तब पौधा किससे अपनी तकलीफ कहेगा? जो उसे पालते हैं, उन्हीं को उसकी रक्षा करना चाहिए न?'

पीटर के मुखमंडल की उदासी दूर हो गई।

कुछ युवक अम्मा को देखने आये। वे दूर खड़े रहकर अम्मा को देखते रहे। कुछ समय बाद उन्होंने भी काम में हाथ बँटाया। उन्हें अम्मा से कुछ बातें पूछने की इच्छा है। पर कोई कारण उन्हें रोक रहा है। उनमें से एक युवक ने माथे पर काफी भस्म लगाया है। उसके बीच में चंदन का बड़ा तिलक, उसके मध्य में कुंकुम का छोटा तिलक। उसने दूसरे से कहा- 'देखो जी, अम्मा ने भी भस्म लगाया है।'

अम्मा ने पूछा- 'क्या बता रहे हो?'

युवक- 'अम्मा, जब मैं भस्म या कुंकुम का टीका लगाकर चलता हूँ, तब ये सब मेरी हँसी उड़ाते हैं।'

दूसरे युवकों के चेहरे पर फीकापन है। उनमें से एक व्यक्ति ने पूछा- 'माथे पर भस्म, चंदन आदि क्यों लगाते हैं? उसका क्या मतलब है?'

भक्ति के बहिरांग

अम्मा- 'बेटे, हम सब चंदन, भस्म आदि धारण करते हैं। किंतु उसके आंतरिक तत्त्व के विषय में हम नहीं सोचते। भस्म धारण करने जब हम अपनी हथेली में लेते हैं तब हमें सोचना चाहिए कि संसार नश्वर है। आज नहीं तो कल हम सब मरकर मुट्ठी भर राख हो जायेंगें। इसी बोध की प्राप्ति के लिए भस्म धारण करना चाहिए। प्रेयसी का साड़ी का आँचल देखने पर उसकी स्मृति जैसे जगती है वैसे ही चंदन, कुंकुम, रुद्राक्ष आदि ईश्वर का आँचल है।

आत्मस्मरण जगाते हैं। चाहे बड़ा हो कि छोटा, सब किसी भी क्षण मर सकते हैं। इसीलिए किसी से बंधन पाले बिना केवल ईश्वर से संबंध जोड़कर आगे बढ़ना चाहिए। हम जिन लोगों से बंधन में बंधे हैं वे हमारे साथ नहीं आयेंगें।'

एक युवक ने पूछा- 'तो चंदन क्यों लगाते हैं?'

अम्मा- 'चंदन में औषधीय गुण हैं। विशेष अंगो पर चंदन लगाने से शरीर व नब्ज़ें ठंडी होती हैं। उनका स्वास्थ्य बढ़ता है। उसके अलावा चंदन धारण करने के पीछे और एक तत्त्व है। चंदन में सुगंध है। वह सुगंध उसी का है, बाहरी नहीं है। उसी तरह आनंद हमारे ही भीतर है। हमें वह समझकर जीना चाहिए। यही तत्त्व है। चंदन की लकड़ी कीचड़ में पड़ी रही, तो उसका बाहरी हिस्सा सड़ जायेगा, बदबूदार लगेगा। किंतु उसे धोकर साफ करके घिसे, तो कितनी अच्छी सुगंध आयेगी। उसी प्रकार सड़ी-गली भौतिक बातों में लीन हम फालतू इंद्रिय सुख के लिए अपने जीव चैतन्य को नष्ट करते हैं। इस शरीर का ध्येय आत्मसाक्षात्कार है। यह तथ्य समझे बिना क्षणिक सुख के लिए हम इंद्रियों को- शरीर को भी बरबाद करते हैं। चंदन हमें तत्त्व सिखाता है। यदि हम इस जीवन को आत्मा को समझने के काम में लावें तो हमेशा आनंद से जी सकेंगे।'

युवक- 'रुद्राक्ष क्यों धारण किया जाता है?'

अम्मा- 'रुद्राक्ष शरणागति का तत्त्व है। रुद्राक्ष के दानों को माला का आकार धागे ने दिया है। उस धागे से दाने पिरोये हैं। उसी प्रकार हममें से प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा के धागे के दाने हैं। यह तत्त्व समझकर भगवान की पूर्ण शरणागति स्वीकार करना ही रुद्राक्ष सिखाता है।'

मंदिर की मूर्तिपूजा

युवक- 'अम्मा, जब हमने कहा कि आश्रम जा रहे हैं तब कई लोगों ने हँसी उड़ाना शुरू किया। कहते हैं कि मंदिर और आश्रम

बूढ़ों के लिए हैं।'

अम्मा- 'मंदिर मानव में आध्यात्मिक चिंतन बढ़ाने के लिए बने है। आज अनेक लोग मंदिर को दोष देते हैं। राजनीतिक दलवालों को झंड़ा लिये जाते देखते हैं न? कोई बाहरी व्यक्ति उनके झंडे को फाड़े या जलाये और उसमें थूकने की चेष्टा करे! तब सब मिलकर उसकी मरम्मत कर ड़ालेंगे। असल में झंड़े में क्या है? कपड़े का एक टुकड़ा भर है। एक नष्ट हो जाय तो कितने ही खरीदने को मिल सकते हैं। मगर बात वह नही। वह झंड़ा उनके आदर्श का प्रतीक है। उनके दल का प्रतीक है। वे उसका तिरस्कार देखकर चुप नही रह सकते। उसी प्रकार मंदिर ईश्वरतत्त्व का प्रतीक है। उसके ज़रिए हम ईश्वर को देखते हैं। मंदिर जाकर दर्शन करते समय हमारे भीतर पवित्र विचार जगते हैं। सही आदर्श का स्मरण हम करते हैं। मंदिर का वातावरण कसाई की दूकान व शराब की भट्टी का वातावरण नहीं है। मंदिर में भगवान के पवित्र विचारों से निर्मल वातावरण होता है। चिलचिलाती धूप में वृक्ष की छाँव की तरह, ठिठुरती सर्दी में कंबल की तरह, मंदिर मानसिक कष्ट झेलनेवालों को सांत्वना देते है। मंदिर के अच्छे संस्कार अपनाकर वहाँ बैठे प्रभु का भजन करने के ज़रिए आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सकते हैं।'

एक युवक- 'आज मंदिर केवल व्यापार केंद्र जैसे हो गये हैं। यह भी बताना पड़ता है।'

अम्मा- आँखे मूँदकर मंदिरों की आलोचना करना निरर्थक है। यह ठीक है कि कई मंदिरों की व्यवस्था आज सही नहीं है। उनकी आलोचना के बजाय हमें उनसे जुड़कर वहाँ की गलतियाँ सुधारने की कोशिश करनी चाहिए। एक ड़ाक्टर के गलती करने से क्या हम पूरे अस्पताल को दोषी ठहरा सकते है?

एक गाँव में कम से कम एक मंदिर होना चाहिए। आज सब लोगों में स्वार्थी विचार समाये हैं। मंदिर उन दूषित तरंगों को दूर कर सकते हैं। वहाँ पहुँचनेवाले दो क्षण एकाग्रता रखें। इससे वातावरण पवित्र हो जायेगा।

आप लोग पूछेंगे कि क्या ईश्वर मूर्ति में हैं? क्या मूर्ति के निर्माता

शिल्पी की पूजा नहीं करनी चाहिए? जब हम अपने पिता का तैलचित्र देखते हैं तब रंग या चित्रकार को नही देखते। ईश्वर सर्वव्यापी हैं। उन्हें हम अपने इन भौतिक नेत्रों से देख नही सकते। किंतु मंदिर की मूर्ति को देखने पर हमारे मन में ईश्वर का चिंतन उभर आता है। वह ईश्वरचिंतन मन को स्वच्छता एवं पवित्रता देता है।

एक युवक- अम्मा, हम मन में जो संदेह लिये चलते थे, उन्हें अम्मा ने आज दूर किया। मैं यद्यपि चंदन का टीका माथे पर लगाता हूँ तो भी उसका उद्देश मुझे मालूम नहीं था। मातापिता चंदन लगाते है। हम भी उनका अनुकरण करते हैं। इतना ही। हमारे मित्रों के प्रश्नों के सामने हम निरुत्तर रह गये थे। बचपन में आस्तिक रहे कई लोग आज नास्तिक हैं। आज वे सिगरेट और शराब के गुलाम हैं। यदि कोई तर्कसहित समझाते तो वे तबाह न होते। मैं भी बहक जाता। किसी अज्ञात कारण से बहका नही। आगे एक दिन अपने पुराने दोस्तों को लेकर आऊँगा। अम्मा के प्रयत्न से ही उन्हें अच्छे रास्ते पर लाया जा सकता है।

अम्मा- 'नमः शिवाय। (हँसती है) बेटा, जो सही रूप में ईश्वर पर आस्था रखता है, उस आदर्श के अनुसार जीवन बिताता है, वह बुरी आदतों का गुलाम नहीं हो सकता। कारण वह ईश्वर पर निर्भर होकर जीता है। वह बाहर आनंद नही खोजता। भीतर ही खोजता है। वह अपने भीतर बसे ईश्वर को देख हर्षित होता है। कोई बाहरी बंधन उसे बाँध नही सकता। अम्मा हठ नहीं करती कि सभी ईश्वर को स्वीकार करें। किंतु बुरी आदतों का गुलाम क्यों बनें? सिगरेट, शराब और फिजूल खर्ची आज फैशन हैं। राजनैतिक लोग या दूसरे लोग युवकों को इससे छुड़ाने की कोशिश भी नही करते। वही सबसे दुःखजनक बात है। स्वयं आचरण करके न दिखा दें तो दूसरे कैसे शिक्षा ग्रहण करेंगे, आदर्श को कैसे अपनायँगे?'

अम्मा ने पत्रिका की एक प्रति खोली। उसमें एक पृष्ठ कुछ मुड़ा हुआ है। जिसमें छपाई पूरी नही है।

अम्मा- 'बच्चो, पत्रिका लिफाफे में ड़ालने के पहले उलट-पलट कर देख लेना चाहिए। आश्रमवासी को सारी बातों में श्रद्धा चाहिए न?'

एक ब्रह्मचारी ने थाल पर भस्म और मिठाई सजाकर अम्मा के पास ला दिया। अम्मा ने नये आये युवकों को पास बुलाया। 'आओ बच्चो!'

आगंतुक युवक अपने मन को चिरकाल से मथन करती शंकाओं का समाधान पाकर धन्यता से अम्मा के करकमलों से प्रसाद लेकर बिदा हुए।

१९८६ मार्च १० सोमवार

गुरु की सन्निधि में साधना

आश्रम को पानी देनेवाली पाइप लाइन टूट पड़ी है। पूरी मरम्मत में कई दिन लगेंगे। आश्रम की ज़रूरत का पानी आश्रमवासी रात को लाते हैं। वे नाव में बड़े बड़े बर्तन लेकर दूसरे पार जाते हैं। वहाँ एक ही नल है। दिन में गाँववाले उससे पानी लेते हैं। इसीलिए आश्रमवासी रात को जाते हैं। कायल के किनारे से आश्रम को पानी देकर चलने के काम में अम्मा भी हाथ बँटाती हैं। सामान्यतः सबेरे चार-पाँच बजे तक यह काम चलता है।

एक बारी पानी ला चुके। दूसरी बारी के लिए ब्रह्मचारी गये हैं। समय रात के बारह बजे। अम्मा कायल किनारे रेत पर लेटी हैं। दरी बिछा दी पर उस पर लेटे बिना अम्मा रेत पर लेट पड़ी हैं। मच्छर बहुत हैं। उन्हें भगाने के लिए पुआल और कचरा इकट्ठा करके थोड़ी दूरी पर धुआँ उठा रहे हैं।

ब्रह्मचारिणियाँ अम्मा के चारों ओर बैठी ध्यान कर रही हैं। एक नाव में सारे बर्तनों में पानी भरके लाने में कम से कम दो घंटे लगते हैं। नल से इतना कम पानी ही निकलता है। कुछ समय बाद अम्मा उठ बैठीं। पुआल कचरा आग पर काफी मात्रा में डाल दिया। आग धधकने लगी।

अम्मा- 'सारे बच्चे इस अग्निज्वाला में अपने इष्टदेव के खड़े होने की कल्पना करके ध्यान करें।'

एक ब्रह्मचारी आग को बराबर जलाये रखने की कोशिश में व्यस्त था।

निश्चल कायल के जल वितान पर चाँदनी की छटा झलक रही है। कायल और किनारा मानों ज़रीदार चादर ओढ़े हुए खड़े हैं। दूसरे पार

से कुछ कुत्तों के भोंकने की आवाज!

वे ध्वनियाँ छीजकर केवल प्रतिध्वनि के रूप में सुनाई देती हैं। उसको छोड़ शेष सब जगह शांति ही शांति है।

अंबिके देवी जगन्नायिके नमस्कार...

अम्मा के मधुर कंठ से नादधारा निकलने लगी।

अंबिके देवी जगन्नायिके नमस्कार!
शर्मदायिके! शिवे! संतत नमस्कार!
शांतिरूपिणी सर्वव्यापिनी महामाये
अन्तादिहीने आत्मरूपिणी नमस्कार
सब की शरण हैं अम्मा, सब का अवलंब हैं
पावनी दुर्गे भक्तवत्सले नमस्कार...
अंबिके! तुम बुद्धि हो, ज्ञान हो, शब्द हो
चित्त का संचालन भी तुम ही करती हो
मंगलात्मिके, यही सत्य है, फिर
कैसे हम प्रशंसा करें!
ईश्वरी! नमस्कार!
तुम पर सदा चित्त धारण किये
हुए भक्तों पर हे अंबा,
तुम बड़ी दया शीघ्र बरसाती!
सेवनोचित बीजमंत्र मैं नहीं जानती
भवदीय प्रभाव कल्पना के परे है।

कीर्तन समाप्त करने पर अम्मा ने तीन बार ओंकार दुहराया। सबके कंठों से प्रणवनाद गूँज उठा।

अम्मा- 'बच्चों, हृदय या भ्रूमध्य में अग्नि की ज्वाला की कल्पना करना। ध्यान के लिए रात का समय सबसे उत्तम है।'

नाव पानी सहित घाट पर लगी तो काम फिर से ज़ारी हुआ। नाव फिर से खाली बर्तन लिये पानी भरने दूसरे पार की तरफ बढ़ी। अब उसके

लौटने तक अम्मा ने ध्यान करने का निर्देश दिया। ध्यान व कार्य में रात बीती। काम के पूरा होते होते सवेरे के पाँच बज गये। आज दर्शन का दिन है। सवेरे से भक्तों की भीड़ आयेगी। अम्मा अब थोड़ा सा विश्राम करें? क्या अम्मा के शब्दकोश में विश्राम नामक शब्द भी नहीं।

8

८

१९८६ मार्च १२ बुधवार

श्रद्धा सहित कर्म ध्यान है

आश्रम के एक एक काम का दायित्व अलग अलग ब्रह्मचारी को सौंपा गया है। बीच बीच में काम में परिवर्तन किया जाता है। ब्रह्मचारियों को किसी में पिछड़ना नहीं चाहिए। सारे काम जानना चाहिए। यह अम्मा का कथन है।

अम्मा सबेरे सात बजे आश्रम का अहाता पैदल टहलकर देखती हैं। जहाँ-तहाँ पड़े कागज और मिठाई के रैपर आदि उठाकर हटाती हैं। आश्रम के दर्शनार्थी आज बहुत कम हैं। अम्मा आश्रम के उत्तरी भाग में गोशाला के पास पहुँचीं। पागुर करती गायों ने सिर उठाकर अम्मा को देखा। एक माता जैसे अपने बच्चे को प्यार से दुलारती है, वैसे अम्मा उन गायों के मूर्धा को सहलाती रहीं। गाय के सामने खली बिखरी पड़ी है। गाय की उलटाई वालटी आँगन में पड़ी है। अम्मा ने बाल्टी साफ की। उसमें जल लेकर अम्मा ने फर्श धोकर साफ की। पास खड़ी ब्रह्मचारिणी मदद देने आगे बढ़ी तो भी अम्मा ने उसकी अनुमति नहीं दी। उनकी मुखाकृति बता

रही थी कि श्रद्धा से गाय को सानी ना पिलाने से अम्मा दुःखी हैं। अम्मा गोशाला से सीधे गाय की सेवा के ज़िम्मेवाले ब्रह्मचारी की पर्णशाला में पहुँची।

'बेटे, तुम ही गाय को सवेरे सानी-पानी देते हो न?' अम्मा के प्रश्न से ब्रह्मचारी को मालूम हो गया कि उससे कोई गलती हुई है। किंतु यह विदित नहीं हो पाया कि गलती क्या है? वह मौन खड़ा रहा। अम्मा आगे बोलीं- 'बेटा, एक साधक के लिए आवश्यक सबसे प्रथम गुण श्रद्धा है। क्या इसी तरह गाय को खली तैयार कर देते हैं? बालटी की पूरी खली गाय ने पैर से ठोकर देकर उलट दी है। अश्रद्धा से ही ऐसा हुआ न? गाय को सानी-पानी देते समय उसका पूरे पी जाने तक उसके पास ही खड़ा रहना चाहिए, ऐसा पहले ही बताया है। ऐसा न करने से ही गाय ने बालटी उलट दी है न? गाय के पी जाने तक उसके पास खड़े रहने में बेटे को एतराज़ हो, तो अम्मा वह काम करेगी। गाय को माता के रूप में देखना चाहिए। गाय की सेवा ईश्वर पूजा है। बेटे की असावधानी से गाय भूखी रह गई। उसे वहाँ छोड़ आने से पुरी खली भी बरबाद हो गई।' ब्रह्मचारी को अपनी गलती मालूम हो गई।

ब्रह्मचारी ने अपने शीघ्र आने का कारण बताने की कोशिश की- 'ध्यान का समय हो जाने से शीघ्र आ गया।'

ब्रह्मचारी के उत्तर से अम्मा संतुष्ट नहीं हुई। 'ध्यान में उतनी निष्ठा जो होती तो तुम कुछ पहले से जाकर गाय को सानी-पानी देते। फिर ध्यान के लिए जाते। ध्यान के नाम पर मूकजीवों को भूखा रखना पाप है। ध्यान का मतलब क्या है? क्या सिर्फ आँखे बंद किये बैठा रहना ही ध्यान है? मंत्रजप के साथ, ईश्वरस्मरण युक्त कर्म करना भी ध्यान ही है। अपने को सौंपे काम में जो समर्पित भाव दिखाया जाता है वही उसके लक्ष्य-समर्पण को दिखाता है। काम से बचने के लिए ध्यान, ध्यान से छूटने के लिए काम ऐसा नही होना चाहिए।'

ब्रह्मचारी- 'गत दिवस दो ब्रह्मचारी देर से ध्यान के लिए आये। इस कारण अम्मा ने दो दिन निर्जल उपवास किया। सोचा कि मेरे कारण ऐसा न हो।'

ब्रह्मचारी की आँखे सजल हो उठीं। अम्मा ने बेटे के आँसू पोंछे। उसे सांत्वना देते हुए अम्मा ने कहा- 'बेटे, मैंने क्या कहा, जो बेटा इतना दुःखी हो रहा है? अम्मा कुछ गंभीर हो गईं तो इसलिए कि बेटा आगे सावधान रहे। वे जानबूझकर ध्यान के लिए नही आयें। लिखने पढ़ने का काम बाद में भी हो सकता था। मगर बेटे की बात ऐसी नही। एक काम कर रहे हो। वह भी अम्मा ने सौंपा है। वह ध्यान से भिन्न नही है। सौंपे काम के प्रति समर्पण ही ध्यान है। जो काम जिस समय करना है, वह वक्त पर किये बिना समय बरबाद करने से अम्मा को कष्ट होता है।'

'आश्रम की व्यवस्था में कोई भूलचूक देखने पर अम्मा से नही रहा जाता। सब के लिए समय की पाबंदी है। ध्यान, संस्कृत और दर्शन आदि के वर्ग में अनुपस्थिति, किसी में कोई असावधानी क्षम्य नही है। अगर समय की पाबंदी में भंग होने की सूचना मिली तो अम्मा ब्रह्मचारियों को एक या दो बार डाँटतीं, बस। उसके बाद अम्मा स्वयं अपने को दंड देतीं। भोजन नहीं करतीं। कभी तो निर्जल उपवास करतीं। उन्हें मिलनेवाला सबसे कठोर दंड अम्मा का उपवास है।'

अम्मा उस ब्रह्मचारी को लेकर ध्यानमंडप पर पहुँचीं। सारे ब्रह्मचारी ध्यान में लीन हैं। अम्मा पश्चिमी भाग में दीवार से पीठ टेके पूर्वदिशा की तरफ देखती पद्मासन में बैठ गईं। साथ आया ब्रह्मचारी भी अम्मा के पास बैठा।

ध्यान समय के बाद ब्रह्मचारियों ने आकर एक एक कर अम्मा को साष्टांग प्रणाम किया। सब धीरे धीरे अम्मा के चारों तरफ जमा हो गये। अम्मा ने आँखें खोलीं तो एक ब्रह्मचारी ने अपनी कठिनाई निवेदन की- 'अम्मा ध्यान में एकाग्रता नहीं मिलती। बड़ी कठिनाई अनुभव हो रही है।'

एकाग्रता

अम्मा मुस्कुराई। फिर बोलने लगीं- 'बेटे, एकाग्रता आसानी से नहीं मिलती, उसके लिए निरंतर प्रयत्न करना पड़ता है। किंतु

एकाग्रता न मिलने की बात सोचकर साधना में भंग नहीं करना। एकाग्रता चाहिए, तो साधना में समय की पाबंदी होनी चाहिए। स्थिरोत्साह चाहिए। यह विचार नहीं त्यागना चाहिए कि मैं आध्यात्मिक जीव हूँ। प्रतिक्षण सावधानी से आगे बढ़ना होगा।'

'एक दिन एक आदमी मछली पकड़ने कायल में उतरा। एक झाड़ के पास बड़ी मछलियाँ देखीं तो उसके चारो ओर मिट्टी की मेंड़ बनाकर पानी सुखाने का प्रयत्न शुरू किया। हाथ में बर्तन नहीं थे। दोनों हाथों से हथेली बनाकर उससे पानी निकालने लगा। बीच में मेंड़ टूटती चली। फिर भी वह पीछे नही हटा। उसने और किसी बात पर ध्यान दिये बिना धीरज और आस्था से किसी रागविराग के बिना अपना काम जारी रखा। शाम होते होते पानी सूख गया। उसे काफी मछलियाँ मिली। धीरज, समर्पण और अड़िग आस्था से जो मेहनत की वह सफल निकली। वह खुशी खुशी घर लौटा।'

'बेटे, यह सोचकर व्यथित न हो कि बड़ा यत्न करने पर भी कोई फल नही मिलता। जो जप करते हो उसका फल होता है। हम नहीं जानते कि प्रत्येक मंत्र का हम पर कैसा प्रभाव होता है। इतनी ही बात है। उसी तरह एकाग्रता न मिलने पर भी नियत समय पर ध्यान से लाभ है। निरंतर जप से हमारे मन की मलिनता हमारे पहचाने बिना ही दूर हो जाएगी। उससे ध्यान की एकाग्रता बढ़ेगी।'

अम्मा की बातें जारी थीं- 'हमे अपने माता, पिता, बंधुगण या मित्रों के बारे में, प्रिय खाद्य वस्तुओ के बारे में सोचने में कोई कठिनाई नहीं। सोचते ही वे मन में उभर आते हैं। जितना समय चाहें, उनसे मानसिक संपर्क बनाये रख सकते हैं। इतने दिनों का संबंध ही उसका कारण है। मन उनमें लीन हो चुका। इसी प्रकार ईश्वर से हमारी घनिष्ठता होनी चाहिए। जप, ध्यान, सत्संग आदि उसके लिए हैं। निरंतर अभ्यास चाहिए। ऐसा करने पर जैसे विषय विचार मन में उभर आते हैं, वैसे ही इष्टदेवता का रूप और मंत्र भी हमारे मन में उभर आयेंगे। हम जो भी देखें, सोचें, ईश्वर के माध्यम से देखें व सोचें। ईश्वर को छोड़ और कोई संसार नहीं रहेगा।'

थोड़ी देर के मौन के पश्चात अम्मा की बातें जारी थीं।- 'बेटे, प्रारंभ में एकाग्रता न मिलने की बात सोचकर निराश न होना।

निरंतर प्रयत्न से विजय अवश्य मिलेगी। 'एक ईश्वर ही नित्य हैं। उनको न जान सके तो यह जीवन व्यर्थ है। शीघ्र से शीघ्र उनके दर्शन करना है।' यह विचार मन में हो तो एकाग्रता अपने आप आ जायेगी। बेटे, जिसे लक्ष्य का बोध हो जाय उसे कोई अड़चन नहीं होगी। सारी परिस्थिति उसके अनुकूल निकलेगी।'

ब्रह्मचारी- 'प्रभात में ध्यान करते समय नींद बाधा ड़ालती है।'

अम्मा- 'बेटा, ध्यान के समय नींद आये तो ओठ हिलाते मंत्र जपना चाहिए। सुमिरनी हो तो छाती से सटाये जपना चाहिए। जाग्रत रहने में यह मदद करेगा। ध्यान के लिए जब बैठते हैं तब रीढ़ सीधी ही रहे। आलस से ही रीढ़ झुकती है। इतना करने पर भी नींद आवे तो खड़े होकर जप करें। खड़े रहते समय किसी दीवार से पीठ टेककर खड़े न हो। ऐसा करने पर मन उसमें सुख पायेगा। जाग्रता नष्ट होगी। इस पर भी नींद दूर न हो तो कुछ दूर दौड़े। उसके बाद लौटकर ध्यान में लग जावें।'

'रज से तम को दूर करना चाहिए। योगाभ्यास करना भी अच्छा है। उचित लक्ष्यबोध होने पर ही नींद को दूर कर सकते हैं। कुछ लोग कंपनी में रात की पारी में काम करते हैं। कभी कभी दो-तीन दिनों तक सोये नही होंगे। फिर भी मशीन के सामने खड़े होकर जो काम करते हैं तो नहीं सोते। कारण यह कि ज़रा सी लापरवाही हो तो हाथ मशीन के भीतर! हाथ खो बैठेंगे। नौकरी भी। सो उन्हें मालूम है। इसलिए नींद कितनी ही ज़ोर से तंग करे, वे उसे दूर भगा देंगे। इतनी सावधानी और श्रद्धा ध्यान के समय भी होनी चाहिए। यह विचार मन में हो कि ध्यान का समय निद्रा से नष्ट करूँ, तो मेरा जन्म व्यर्थ होगा। ऐसे लोग सो नही सकेंगे।'

लौकिक संबंध स्वार्थपूर्ण होते हैं

कुछ भक्तगण अम्मा की प्रतीक्षा में खड़े थे। इसलिए अम्मा ध्यानकक्ष से बाहर आईं। भक्तों ने अम्मा को प्रणाम किया। अम्मा उन्हें लेकर कलरिमंड़प चलीं।

एक भक्त थाल में फल समर्पण कर प्रणाम करने के बाद अम्मा के समीप बैठा।

अम्मा- 'बेटा, अब कैसा है?'

भक्त खामोश रहकर सिर झुकाये बैठा रहा। उनका घर कोट्टयम के पास है। उनकी पत्नी और एक पुरुष के साथ चली गई। उसकी चोट ने उन्हें शराबी बना दिया। उनके एक दोस्त ने उन्हें चार मास पहले अम्मा के पास पहुँचा दिया। अम्मा को देखने आते समय भी पिये हुए थे। होश में ही नही थे।

अम्मा ने उन्हें तुरंत वापस नही भेजा। उन्हें आश्रम में तीन दिन ठहराया। अम्मा को देखकर लौटने के बाद शराब एकदम छोड़ दिया। अब वे काम के बाद फुरसत मिलने पर आश्रम आकर अम्मा का दर्शन करते हैं। मगर अब भी पत्नी के छोड़ जाने से हलकी निराशा है।

अम्मा आगे बोली- 'बेटा, कोई किसी को अपने से बढ़कर प्यार नही करता। सब के प्यार के पीछे अपना सुख और स्वार्थ होता है। जब स्वार्थ सिद्ध नही होता, तब दोस्त दुश्मन बनता है। वही संसार में आज दिखाई देता हैं। भगवान ही निःस्वार्थ भाव से हमें प्यार करते है। हम उनको प्यार करने के माध्यम से ही किसी को निःस्वार्थ प्रेम दे सकते हैं, सेवा कर सकते हैं। भगवान के संसार में ही स्वार्थ हीनता है। इसलिए हमारा प्रेम व संबंध आदि सिर्फ उनके प्रति होना चाहिए। तब किसी के छोड़ जाने के विचार से या किसी के गाली देने से दुःखित और पराजित नहीं होना पड़ेगा। बेटा, भगवान का आसरा लो। वही काफी है। बीती बातें सोचकर क्यों व्यथित होते हो? दुःख क्यों करते हो?'

भक्त- 'अम्मा, मुझे अब पहले जितना क्लेश नहीं है। मेरी हर कठिनाई में अम्मा मेरे साथ हैं। जब कभी दुःख आता है तब अम्मा के मंत्र का आसरा लेता हूँ।'

अम्मा ने उन्हें भस्म दिया। वे प्रसाद स्वीकार कर उठें और चलने तैयार हुए। भक्त के जाने के बाद अम्मा ने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा- 'देखा, लोगों का अनुभव? ये सब हमारे ग्रहण करने योग्य शिक्षा देते हैं। एक पुरुष पत्नी को प्यार करता है तो क्या वह

वस्तुतः उनके प्रति प्रेम से यों करता है? पत्नी का पति के प्रति प्यार क्या वास्तविक प्रेम है? वह अपने बच्चों को क्यों प्यार करती है? वे अपने खून और बीज से पैदा हुए, सिर्फ इसलिए। वरना क्या हम सब बच्चों को एक ही तरह प्यार न करते?'

'बच्चों, पत्नी या पति के लिए मरने तैयार लोग आज कितने मिलेंगे? वह बेटा अपनी पत्नी के उसे त्यागने पर मरने तैयार होता है तो वह पत्नी के प्रति प्रेम के कारण नहीं, अपने प्रति प्रेम के कारण है। अपना सुख नष्ट हो जाने की निराशा ही कारण है। यदि उसे अपनी पत्नी से हार्दिक प्रेम हो और वह स्त्री और एक पुरुष को प्यार करने में अधिक खुशी पावे तो उसे स्वीकार करना चाहिए था। पत्नी के आनंद को अपने लिए स्वागत योग्य मानना चाहिए था। वही निःस्वार्थ प्रेम है। यदि पत्नी के मन में हार्दिक प्रेम होता तो अन्य पुरुष की तरफ़ आँख उठाकर भी नहीं देखती। कहते हैं कि बच्चों के प्रति प्रेम है। अपने बच्चे को पानी में डूबते देखकर कितने लोग अपनी जान की बाज़ी लगाकर उसे बचाने तैयार होंगे? एक बेटी ने अम्मा से कहा- उसकी बच्ची सत्रह सीढ़ीयोंवाले कुएँ में गिरी। माँ ने बच्ची को गिरते देखा। वह कुछ नही कर सकी। पास खड़े कोई गोताखोर को ले आये। मगर तब तक बच्ची मर गई थी। उस माँ को कुएँ में उतरकर बच्ची को निकालने की बात क्यों नही सूझी? निन्यानवे प्रतिशत लोग ऐसे हैं। अधिकांश लोग अपनी जान देकर दूसरे के प्राण बचाने तैयार नही हैं। इसीलिए अम्मा कहती है कि ईश्वर ही हार्दिक प्रेम करते हैं।'

'उस ईश्वर का सहारा दृढ़ता से लेना। इसका मतलब यह नही कि दूसरों को प्यार नही करना चाहिए। उनमें ईश्वर को देख उस ईश्वर को प्यार करें। तब व्यक्ति के नाराज़ होने पर भी हमें व्यथित होने की ज़रूरत नही पड़ेगी।'

एक युवक अम्मा की बातें ध्यान से सुनते हुए सब के पीछे बैठा है। वह पहली बार आया है। उसके चेहरे पर ज़रा भी सम्मान नही है। अम्मा के बात खतम करते ही युवक ने कलरिमंड़प पर रखे अम्मा के कृष्णभाव के चित्र को लक्ष्य करके किसी भूमिका के बिना पूछा- 'वह मोरपंख और मुकुट अम्मा ने पहने हैं न? इस वेष के

लिए क्या यह कोई नाटक है?' पीछे से अचानक यह सवाल उठा तो भक्तों ने मुड़कर देखा। अम्मा ने अपनी बातों के उसी क्रम में कहा-

समाज के लिए वेष धारण

'बेटे, बेटा को कैसे यकीन है कि यह विश्व ही नाटक नहीं है? सारे लोग अनजाने एक नाटक खेल रहे हैं। उस नाटक से लोगों का ध्यान असली बात की ओर मोड़ने के लिए ही यह दूसरा नाटक है। दूसरों का अज्ञान दूर करने का नाटक।'

कुछ रुककर अम्मा ने युवक से पूछा- 'बेटा नंगा ही पैदा हुआ न? अपनी प्रकृती को नग्न जानते हुए भी काहे को कपड़े पहनते हों?'

युवक- 'मैं एक सामाजिक जीव हूँ। समाज के शिष्टाचार का पालन करना ही पड़ेगा। नही तो समाज आक्षेप लेगा।'

अम्मा- 'तो बेटा, समाज के लिए कपड़ा पहनता है। अम्मा का वेष भी उसी समाज के लिए है। बेटा, ज्ञानमार्ग से ध्येय पर पहुँचनेवाले विरले ही मिलते हैं। शेष लोगों को अम्मा ठुकरा नहीं सकती। उन्हें भक्ति से ही लाभ होता है। अद्वैती श्री शंकराचार्य ने मंदिर की स्थापना की थी न? उन्होंने बताया कि ईश्वर चैतन्य है। उन्होंने ही मामूली पत्थर को ईश्वर के रूप में दिखाया। उन्होंने देवी के रूप का वर्णन करती सौंदर्यलहरी रची। ब्रह्मसूत्र के रचयिता वेदव्यास ने क्या भागवत नहीं लिखा? उन्होंने देखा कि सामान्य बुद्धि के लोगों के दिमाग में अद्वैत व वेदान्त नहीं उतरेंगे। इसलिए उन्होंने जनसमाज में भक्ति के विकास का प्रयत्न किया।'

'बेटे, अम्मा खुद का स्वरूप, प्रवृत्ति आदि अच्छी तरह जानती हैं। मगर आज के लोगों को उस तत्त्व तक पहुँचने के लिए उपाधियाँ आवश्यक हैं। उनमें विश्वास और भक्ति बढ़ाने के लिए ईश्वर रूपों की ज़रूरत हैं। मुर्गी को पकड़ने के लिए मुर्गी के पीछे दौड़ने से बढ़कर कुछ अनाज दिखाना ही बेहतर है। अनाज देखने पर मुर्गी पास आयेगी। तब उसे पकड़ सकते हैं।'

'सामान्य लोगों को आध्यात्मिक स्तर तक उठाने के लिए हमें उनके स्तर तक उतरकर चलना पड़ता है। उनका मन नाम व रूप पर निर्भर करता है। उनके मन को वेषभूषा से ही ऊपर उठा सकते हैं। बेटा वकील और पुलीस की अलग अलग वर्दी होती है। पुलीस का सिपाही अपनी वर्दी में आकर खड़ा रहे, बस जनता में अनुशासन अपने आप आएगा। मामूली कपड़ों में वही आए तो क्या स्थिति रहेगी? यही वेषभूषा की खासियत है।'

'जो लोग मूर्ति में पत्थर, बालियों में सोना और कुर्सी में बेंत को देख लेते हैं उन्हें इन सब की ज़रूरत शायद नही होगी। उन्हें अद्वैत दृष्टि प्राप्त हो चुकी है। परंतु सब उस स्थिति पर नहीं पहुँचे हैं। उन्हें वहाँ पहुँचने के लिए यह वेषभूषा आवश्यक है।'

युवक ने आगे कुछ नही पूछा। ऐसा महसूस हुआ कि अम्मा के उत्तर ने युवक को संतुष्ट कर दिया। अम्मा आँखे बंद कर ध्यानलीन हो गईं। कुछ क्षणों के बाद उन्होंने नयन खोले।

कर्मयोग का रहस्य

एक भक्त- 'जो कर्मयोगी लोकसेवा के लिए कर्म करते हैं उनके कर्म आध्यात्मिक उन्नति की वेला में क्या अंत में झड़ जायेंगे?'

अम्मा- 'कर्मो के झड़ जाने की ज़रूरत नहीं। कर्म अंत तक बने रह सकते हैं।'

भक्त- 'अम्मा, भक्तियोग अधिक श्रेष्ठ है या कर्मयोग?'

अम्मा- 'बेटा, यह कहना संभव नहीं कि भक्तियोग तथा कर्मयोग भिन्न भिन्न हैं। यथार्थ कर्मयोगी यथार्थ भक्त भी है। यों यथार्थ भक्त यथार्थ कर्मयोगी भी है। किंतु सारे कर्म कर्मयोग नहीं होते। निष्काम एवं ईश्वरार्पण के रूप में जो कर्म किया जाता है वही कर्मयोग होता है। उसी प्रकार मंदिर जाकर तीन बार परिक्रमा करना या हाथ जोड़कर प्रणाम करना भक्ति नहीं होती। मन ईश्वर पर अर्पित होना चाहिए। हम जो कोई कर्म करें वह भगवान की पूजा के रूप में करना चाहिए। सब में अपने इष्टदेव के दर्शन करके उनको प्यार करना और उनकी सेवा करना चाहिए। प्रभु के प्रति प्रेम व

समर्पण आवश्यक हैं। तभी भक्ति होगी।'

'जो व्यक्ति कोई भी काम करते समय मन को ईश्वरार्पण करता है, वही कर्मयोगी है। सभी ईश्वर की देन है ऐसा भाव होना चाहिए। वही भक्ति हो गयी। उलटे पूजा के समय भी यदि मन बाहरी बातों का चिंतन करता है तो उस पूजा को भक्तियोग बताया नही जा सकता। वह एक बाह्य क्रिया भर है। उसे ईश्वर पूजा नहीं कह सकते। किंतु उसी समय भंगी का काम करते हुए भी ईश्वर का नाम जपते हुए सब ईश्वरार्पण के रूप में करें तो वह भक्तियोग है, कर्मयोग है।

एक जगह एक गरीब औरत थी। वह कोई भी काम करते वक्त 'कृष्णार्पणमस्तु' कहती ही करती थी। आँगन पर झाड़ू लगाना, बच्चे को नहलाना सभी 'कृष्णार्पणमस्तु' हैं। उसके घर के बिलकुल पास एक मंदिर है। उस औरत की 'कृष्णार्पणमस्तु' वाली आदत मंदिर के पुजारी को बिलकुल पसंद नहीं थी। कूड़ाकरकट फेंकते समय 'कृष्णार्पणमस्तु' पुजारी को बहुत अखरता था। वह इस पर उस औरत को गाली देता था। किंतु वह औरत कोई प्रतिक्रिया प्रकट नहीं करती थी।

एक दिन उस औरत ने अपने आँगन में पड़ा गोबर उठाकर अहाते की ओर फेंका। तब भी वह 'कृष्णार्पणमस्तु' कहना भूली नहीं। वह गोबर दुर्भाग्य से मंदिर के आँगन में जा गिरा। पुजारी वह देख रहा था। वह क्रोध से काँप उठा। वह उस स्त्री को बलपूर्वक खींच ले आया, उसी से गोबर उठवाकर फिंकवाया और फिर उसे मंदिर से भगाया।

दूसरे दिन प्रभात में पुजारी हाथ हिल नहीं पा रहा था। लकवा सा मार गया। वह ईश्वर के नाम लेकर बहुत रोया। उस रात्रि को ईश्वर ने सपने में आकर पुजारी से कहा- 'तुम्हारे समर्पित खीर से मेरी भक्त का दिया गोबर मुझे अधिक प्रिय है। तुम जो पूजा करते हो वह पूजा नहीं। मगर उसका हर काम पूजा है। ऐसी भक्त महिला के मनको दुखाओगे तो मैं क्षमा नहीं कर सकता। मेरी भक्त के पैर पकड़कर क्षमा माँगो। तभी तुम्हारा शारीरिक कष्ट दूर होगा। पुजारी को अपनी गलती विदित हो गई। उस स्त्री से क्षमा माँगी। कष्ट भी दूर हुआ।

साधना अभी

भक्त- 'काम बहुत है। इसलिए ध्यान के लिए फुरसत नहीं मिलती। जप के लिए एकाग्रता भी नही मिलती। इसलिए सोचता हूँ कि इन व्यस्तताओं के बाद कुछ शांति मिले, तब जप और ध्यान करेंगे।'

अम्मा- बेटे, काम से फुरसत पाकर या भौतिक जीवन से संतुष्ट होने के बाद ईश्वर को पुकारने की बात सोचोगे तो वह संभव नहीं। अतएव अभी प्रतिकूल परिस्थितियों में रहते हुए ही ईश्वर को पुकारना चाहिए। भगवान हमें रास्ता ज़रूर दिखायेंगे।'

अम्मा एक उदाहरण सुनाती हैं।

'मानसिक शिकायतवाली एक कन्या सयानी हो गई। एक युवक शादी का प्रस्ताव ले आया। रोग की बात जानने पर उसने कहा- कन्या का रोग दूर हो जाय तभी विवाह करूँगा। किंतु डाक्टर का कथन है कि विवाह करने से ही रोग दूर होगा। रोग दूर होने के बाद विवाह कराने की बात सोचना मुमकिन नहीं। पानी कहता है- तुम तैरना सीखकर मेरे पास आओ। वह कैसे संभव है? पानी में ही तैरना संभव है। उसी तरह हम ईश्वर से ही अपने मन को पवित्र बना सकते हैं। ईश्वर को पुकारने पर ही हमारे रोग दूर हो सकते हैं। ईश्वर स्मरण करते हुए काम करें तो वे काम अच्छी तरह कर सकेंगे। अड़चने दूर होंगी। सबसे बढ़कर हमारा मन शुद्ध होगा।'

'यदि हम सोचें कि सारी झंझटों के खतम होने पर ईश्वर को पुकारेंगे तो कभी ईश्वर के पास पहुँच नहीं पायेंगे। हमारे सुधरने की प्रतीक्षा करना भी बेकार है। कठोर परिश्रम ही सुधरने का उपाय है। वरना हमारी आयु, स्वास्थ्य और बुद्धि सब नष्ट हो जायेंगे। अतएव अभी हम ईश्वर के पथ का अनुगमन करें, प्रयत्न जारी रखे। वही कर्तव्य है।'

एक दर्शक- 'अम्मा, यहाँ अनेक युवक घर और गाँव छोड़ ईश्वर चिंतन के लिए बसे हैं। यह जीवन का सुख अनुभव करने की उम्र है न? ईश्वर चिंतन एवं संन्यास क्या कुछ वर्षो के बाद काफी नहीं है?'

अम्मा- 'बेटा, यह मानव शरीर ईश्वर साक्षात्कार के लिए उसका उपयोग करने के ध्येय से प्राप्त हुआ है। ज्यों ज्यों दिन बीतते हैं त्यों त्यों हम मृत्यु के अधिक निकट पहुँचते जाते हैं। भौतिक सुखों के ज़रिए हमारी शक्ति नष्ट होती जा रही है। किंतु ईश्वर चिंतन निरंतर करने से हमारी शक्ति बढ़ती है। हममें शुभ संस्कार बढ़ते हैं। उससे हम मृत्यु तक को पराजित कर सकते हैं। अतएव स्वास्थ्य और आयु के रहते ही हमें अपनी कमजोरियों को जीतने का प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा करने पर हमें कल की बात सोचकर ड्रने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। आज की बात पर सोचकर भी ड्रना नहीं है। अम्मा को एक कहानी याद आती है।'

'एक देश के नागरिकों में कोई भी राजा हो सकता है। मगर वे पाँच वर्ष तक ही शासन कर सकेंगे। उसके बाद उन्हें समीपवाले द्वीप को भेजा जायेगा। वहाँ आबादी बिलकुल नहीं है। हिंसक जानवर वहाँ रहते हैं। जानवर तुरंत खाकर भुख मिटायेंगे। यह जानते हुए भी कई लोग राजकीय जीवन का सुख और सत्ता का अनुभव करने राजा होने आगे बढ़ते थे। सिंहासन पर बैठते समय सब हर्षित होते। किंतु उसके बाद वे हमेशा दुःखी रहते। पाँच वर्षों के बाद जानवरों का भोजन बनने का निरन्तर भय। उनके मुख पर सदा विषाद छाया रहता था। अच्छा भोजन और ऐषाराम के साधन हैं, सेवक हैं, नर्तकियों का नृत्य है। पर उन्हें किसी का शौक नहीं हैं। राजा हो जाने के क्षण से लेकर वे सामने अपनी मौत का दृश्य देखते रहते हैं। सुख की अभिलाषा से राजमहल में पहुँचे उन्हें सदा दुःख ही होता है। हृदय खोलकर किसी में मस्त भी नहीं हो पाते हैं। दसवें राजा को भी शासन की अवधि के बाद द्वीप पहुँचाया। वे जानवरों का भक्ष्य बन गये। आगे एक युवक राजा बनने आया। वे दूसरों की तरह नहीं थे। पिछले राजाओ की तरह वे दुःखी भी नहीं रहे। वे सब के साथ आनंद में मग्न रहे। नाचते थे। शिकार करते। लोगों का कुशलक्षेम पूछते हुए सैर सपाटे करते सदा प्रसन्न रहते। उनका भी शासनकाल समाप्ति पर आ गया। परंतु राजा के मुखमंड्ल पर कोई उदासी नहीं थी। सबको आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा-

महाराज, आप के द्वीप जाने की तारीख नज़दीक आ रही है। मगर आप ज़रा भी दु:खी दिखायी नहीं देते। पहले राजा ऐसे नहीं थे। वे सिंहासन पर बैठते ही मृत्यु की चिंता से व्यथित रहते थे। आप तो सदा खुश हैं।'

राजा ने कहा– 'मैं दु:खित क्यों होऊँ? मैं द्वीप जाने तैयार बैठा हूँ। वहाँ मुझे खाने के लिए कोई हिंसक जीव जिन्दा नहीं है। मैंने राजा होने के बाद सब से पहले शिकार करना सीखा। उसके बाद फौज के साथ उस द्वीप में गया और सारे हिंसक जीवों की शिकार कर उन्हें मार ड़ाला। जंगल की सफाई कराके खेत बनायें। कुएँ खोदे और मकान बनवाये। मुझे वहाँ जाकर रहना ही बाकी है। गद्दी छोड़ने पर भी मैं वहाँ राजा का सा जीवन बिता सकूँगा। मेरे लिए ज़रूरी सारे प्रबंध कर दिये हैं।'

'बेटा, हमें इस राजा जैसा व्यवहार करना चाहिए। इस भौतिक लोक में रहते हुए आनंद लोक का पता कर लेना चाहिए। किंतु आज हम प्रारंभिक राजाओं की तरह हैं। कल की बात सोचकर क्लेश व संघर्ष मन को हमेशा सताते हैं। इस कारण आज का कर्तव्य भी उचित रूप में हम कर नहीं सकते। आज भी दु:ख है, कल भी। जीवन के अंत तक आँसू सूखते नहीं। उलटे यदि हम आज के हर क्षण को ध्यान से बितावें तो कल दु:खित होने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। वे आनंद के दिन होंगे।'

'बेटे, यह नहीं सोचना कि भौतिक सुखों की लालसा खत्म होने दो बाद में ईश्वर की बात देखेंगे। भौतिक वस्तुओं से हमें कभी भी पूर्ण संतृप्ति नहीं मिलेगी। खीर पीते समय लगेगा, बस्। परंतु कुछ समय बाद दुगुना पीने की इच्छा होती है। इसलिए कभी भौतिक सुख भोगने के बाद ईश्वर को पुकारने की बात मत सोचो। भौतिक सुख-भोग से मन को पूर्ण संतोष देने की बात कभी संभव नहीं।'

'अभिलाषाएँ ऐसे वैसे नष्ट नहीं होती। जो कामनाओं का परित्याग करता है, वही पूर्ण होता है। बेटे, भगवान पर समर्पित मन से कर्म करते रहें तो हम मृत्यु को भी जीत सकते हैं। सदा आनंदित रह सकते हैं।'

१९८६ अप्रैल १६ बुधवार

वर्त एव च कर्मणि

प्रार्थना मंदिर का काँक्रीट का काम सबेरे ही शुरू हुआ है। सब ने कहा कि काँक्रीट का काम होने से अम्मा के आने की ज़रूरत नहीं है।

ब्रह्मचारी बालू- 'अम्मा, काँक्रीट है। सीमेंट, गिट्टी सब शरीर पर गिरेगा। सीमेंट शरीर पर गिरे तो शरीर झुलसेगा।'

अम्मा- 'क्या सिर्फ अम्मा का शरीर झुलसेगा? बच्चों का नहीं झुलसेगा?'

बालू- 'वह बात नहीं। अम्मा न आना। काम करने हम सब हैं न?'

अम्मा- 'बेटे, काम करने में अम्मा को कोई तकलीफ नहीं है। अम्मा कमरे में बैठी बड़ी नहीं हुई है। मेहनत की आदत है।'

उन वात्सल्यपूर्ण शब्दों के आगे सब हार गये। सीमेंट भरे तसले उठाकर देनेवाले लोगों के साथ अम्मा भी खड़ी हो गईं।

काँक्रीट भरे तसले एक दूसरे के हाथ देते समय पास खड़े ब्रह्मचारी के हाथ से तसला नीचे गिर पड़ा। तुरंत पीछे हटने से पैर बच गया। तसले से बिखरी सीमेंट ने अम्मा के चेहरें पर दाग बनाये। अम्मा ने एक ब्रह्मचारी का दिया गमछा लेकर चेहरा पोंछा और वह गमछा अपने सिर पर पगड़ी सा बाँधा। अम्मा की वह स्थिति मेहनत की घड़ियों में भी आनंद की हँसी का कारण बनी।

धूप कड़ी होती गयी। अम्मा के माथे से पसीना टपकता रहा। अम्मा को धूप में खड़ी देख व्यथित एक भक्त छाता ले आया। मगर अम्मा ने छाता खोलने नहीं दिया- 'मेरे इतने बच्चे जब धूप में कष्ट ठाते हैं तब क्या सिर्फ अम्मा छाते के नीचे सुख मनाती रहे?'

काम के बीच में अम्मा ने स्मरण कराया- 'बच्चो, पास खड़े लोगों को इष्टमूर्ति के रूप में देखना। तसला देते समय यही कल्पना करना कि इष्टमूर्ति के करकमलों में दे रहा हूँ। तब हमारा समय बरबाद नहीं होगा।'

अम्मा की हँसी और बातचीत में लीन होने से काम की कठिनाई या समय का बहाव किसी ने नहीं पहचाना। अम्मा जब देखती कि बच्चों के मन से मंत्र छूट रहा है तब नामावली जपने का सुझाव देती।

ॐ नमः शिवाय ॐ नमः शिवाय ॐ नमः शिवाय।

काम शाम तक जारी रहा। सीमेंट का काम करने का अभ्यास न होने के कारण अधिकांश ब्रह्मचारियों की हथेलियों पर फफोले थे।

काम के बाद थकान दूर करने का समय किसी को नहीं मिला। तिरुवनंतपुरम पर कीर्तन है। स्नान करने के बाद तुरंत ही सब निकले।

एक ब्रह्मचारी सबेरे से आश्रम के काम में भाग लिये बिना संस्कृत के अध्ययन में व्यस्त रहा था। वह घाट पर मिला। ब्रह्मचारी के पास जाकर अम्मा ने कहा- 'बेटा, जिसे दूसरों के दुःख में करुणा न हो वह आध्यात्मिक जीव नहीं है। उसे ईश्वर दर्शन कभी मिल नहीं सकते। अम्मा बच्चों को काम करते देखकर चुप नहीं रह सकती। केवल बच्चों के काम करने की बात सोचने पर अम्मा का शरीर शिथिल हो जाता है। किंतु उनके साथ रहने पर सारी थकान भूल जाती हैं। बड़ी कमज़ोरी में भी वहाँ जाकर खड़ी रहेगी। सोचती कि वहाँ रहने से अम्मा कम से कम उनकी थकान तो ले सकती है।'

'बेटा, तुम कैसे यों निष्ठुर निकले? इतने लोग जब काम कर रहे थे तब बेटा कैसे हटकर आराम करने की मानसिक शक्ति पा सका?'

ब्रह्मचारी के पास कोई ज़वाब नहीं था। वह सिर झुकाये व्यथित खड़ा था। अम्मा ने उससे आगे कहा- 'बेटा, बेटे को दुःखित करने के इरादे से नहीं कहा। इसलिए कहा कि अगली बार ध्यान रहे। सब सीखकर मस्तिष्क में जमा करने से ही लाभ नहीं। हृदय भी उदार होना चाहिए। बुद्धि के साथ हृदय भी विकसित हो। साधना का ध्येय वही है। हृदय में कारुण्य के बिना वह अनुभूति नहीं मिलेगी।'

नाव आ गई। अम्मा और ब्रह्मचारी दूसरे पार पहुँचे। तब तक ब्रह्मचारी रामकृष्णन् गाड़ी लेकर आ गया।

रामकृष्णन् सबेरे आश्रम की गाड़ी की मरम्मत कराने कोल्लम गया

था। अभी वापस आ सका। दोपहर को भोजन नहीं किया था। उसकी फुरसत नहीं मिली। गाड़ी लेकर यहाँ पहुँचा। तब तक अम्मा आ गईं। तुरंत चलें भी। अम्मा ने रामकृष्णन् को अपने पास बैठने बुलाया।

रामकृष्णन्- 'मैं पसीने से बुरी तरह गंदा रहा हूँ। कपड़े मैले हो गये है। पास बैठने पर बदबू आएगी। अम्मा के कपड़ों पर मैल लगेगी।'

अम्मा- 'वह सब मेरे लिए कोई समस्या नहीं है। तुम आओ बेटे, अम्मा ने बुलाया है। मेरे बच्चे का पसीना है न? तिस पर मेहनत का पसीना! वह अम्मा के लिये गुलाबजल जैसा है।'

अम्मा के हठ के कारण रामकृष्णन् अम्मा के पास आकर बैठ गया। ब्रह्मचारी पै ने गाड़ी चलाई। रास्ते में अम्मा एक भक्त महिला के घर से रामकृष्णन् को भोजन दिलाना भी नहीं भूलीं।

यात्रा के बीच सत्संग

अम्मा के साथ यात्रा में भाग लेने एक नवागत युवक भी है। वह पहली बार आश्रम आया है। अम्मा और अम्मा के ही आयु के बच्चे यात्रा कर रहे हैं। हँसते, मज़ाक करते शोर मचाते हैं। यह दृश्य नवागत विस्मय से उन्मीलित नेत्रों से देख रहा था।

'बेटे, इधर आओ।' अम्मा ने अपनी सीट के पास ही युवक को जगह दी। यों सिकुड़कर बैठे यात्रा करने में बेटे को कोई कठिनाई नहीं है न?

'नहीं अम्मा, कॉलेज में फुटबोर्ड पर पैर की उँगली जमाकर ही यात्रा करता था। यह कोई बडी बात नहीं है।'

'शुरु शुरु में अम्मा भी बस में ही कीर्तन के लिए भक्तों के घरों में जाया करती थी। फिर बच्चों की संख्या बढ़ती गयी। सब एक साथ बस में चढ़ नहीं पाते थे। तबला, हार्मोनियम वगैरह ले जाना कठिन रहा। समय पर पहुँच जाना भी असंभव होता था। ऐसी हालत में सब ने हठ किया और अम्मा ने गाड़ी खरीदने की अनुमति दी। अब गाड़ी की कीमत से अधिक पैसे मरम्मत में खर्च हुए होंगे, हैं न रामकृष्णन्?' (सभी हँसते है।)

पीछे बातचीत ऊँचे स्वर में सुनाई दे रही थी। अम्मा पीछे मुड़ी।

'बालू बेटे!'

'जी अम्मा?'

'एक कीर्तन गाओ न?'

श्रीकुमार ने गोद में हार्मोनियम रखकर खोला।

'मानस भज रे गुरुचरणम्...'

और भी कई गीत अम्मा और ब्रह्मचारियों ने मिलकर गाये। थोड़ी देर मौन। गायी नामावली की मिठास का अनुभव करने कुछ क्षणों का अवकाश!

अम्मा अर्धनिमीलित नेत्रों से गायत्री के कंधे पर सिर रखे लेटी हैं। अम्मा को अपनी तरफ मुस्कुराते देखते पाकर नवागत युवक एक संदेह दूर करने तैयार हुआ- 'अम्मा, सामान्यतः कहा जाता है कि साधकों के लिए स्त्रियों का संग वर्जित है। फिर स्त्री ही उनका गुरु के रूप में कैसे पथप्रदर्शन कर सकती है?'

अम्मा- 'बेटे, क्या सत्य के स्तर पर स्त्री और पुरुष का अंतर है? पुरुष को गुरु के रूप में पाने से स्त्री को गुरु के रूप में पाना कई गुना बेहतर है। इस मामलें में मेरे बच्चे बड़भागे हैं। जिनके गुरु पुरुष हैं, उन्हें अन्य स्त्रियों पर विजय पाना पड़ता है। लेकिन जो स्त्रियों को गुरु के रूप में पाते हैं, वे एक स्त्री पर विजय पाने के ज़रिए विश्व की सारी स्त्रियों पर विजय पाते हैं।'

युवक- 'श्रीरामकृष्णदेव ने कामिनी व कांचन के विषय में नियंत्रण पर ज़ोर दिया है।'

अम्मा- 'वह ठीक है। उन्होंने बिलकुल ठीक ही कहा है। साधक को स्त्री का चित्र तक नहीं देखना चाहिए। किंतु जिन्हें एक गुरु मिल जाते हैं उन्हें सही पथ बताने और उस पथ पर ले चलनेवाले व्यक्ति मिल जाते हैं। उनके लिए गुरु के बताये पथ से चलना पर्याप्त है।'

'साँप का ज़हर लगे तो आदमी मर जाएगा। लेकिन साँप का गहरा अध्ययन जिसने किया है वह उसी ज़हर से ज़हर की दवा तैयार करता है न? सही गुरु शिष्य के पथ पर बहुत सारी बाधाएँ खड़ी करेंगे। तभी शिष्य को उन पर विजय पाने की शक्ति मिलेगी।

लेकिन गुरु का प्रत्यक्ष पथप्रदर्शन न हो तो अत्यंत सावधानी आवश्यक हो जाती है। अत्यधिक श्रद्धा की आवश्यकता है।'

'अरे पै बेटे, आगे देखकर गाड़ी चलाओ।'

अम्मा हँस पड़ी। धीमी आवाज में आगे बोलीं- 'वह आइने में अम्मा को देखते हुए गाड़ी चला रहा है।'

युवक- 'आज अम्मा सबेरे से क्षण भर भी विश्राम किये बिना काम करती रहीं। क्या थकावट महसूस नहीं होती? हमें शरीर दुःखभांड़ सा लगता है।'

अम्मा- 'शरीर को दुःखभांड़ कहा क़रते हैं। मगर सत्य का अनुभव किए हुए ऋषियों का कथन है कि यह आनंद का संसार है। अज्ञान में जो रहते हैं उनके लिए यह अवश्य दुःखभांड़ है। परंतु निरंतर अभ्यास से उस प्रतीति को दूर कर सकते हैं।'

'नित्य और अनित्य को पहचानकर आगे बढ़ें, तो दुःख दूर कर सकेंगे। जो जीवन-लक्ष्य समझकर उसके लिए प्रयत्नशील हों वे दुःख पर विजय पा सकेंगे। कई सफेद बगुलों के बीच में एक काला कौआ बैठा है। उस काले रंग से ही सफेद रंग की खूबसूरती व्यक्त होती है। काला रंग होने से ही सफेद का सौंदर्य समझ में आता है। उसी प्रकार दुःख सुख का महत्त्व बतलाता है। एक बार दुःख होने पर हम आगे ध्यान देंगे।'

'एक व्यक्ति अंधेरे में चल रहा था तो उसके तलुवें में काँटा चुभ गया। आगे वह सावधानी से चला। इस तरह वह समीपवाले गड्ढे में गिरने से बच गया। जो काँटा न चुभता तो उतना ध्यान न देता। गड्ढे में गिरता भी। बच्चो, छोटा दुःख हमे बड़ी विपदा से बचाता है। जो सही सावधानी से चलते हैं वे सारे दुःख पर विजय पाकर नित्य आनंद प्राप्त करते हैं। जो नित्य को समझ गये, सत्य का साक्षात्कार कर गये उन्हें दुःख नहीं होता। उन्हें आनंद ही होता है। दुःख तभी है जब हम शरीर को 'मैं' समझते हैं। उसी शरीर को हम नित्यानंद के संसार को ले जाने का मार्ग समझें तो फिर समस्या नहीं होती।'

युवक- 'इस जीवन को बड़ा आनंददायक भले ही कहें, पर प्रत्यक्ष में यह दुःखदायी ही है।'

अम्मा- 'बेटे, जानबूझकर क्यों गढ्ढे में गिरें? दुःख से छूटने का रास्ता जब है तब क्यों दुःख में ही जिएँ? सूर्य के ताप और जल की शीतलता के समान सुख व दुःख जीवन की प्रकृति हैं। फिर क्यों दुःखित हों? बिना मजदूरी के नौकरी क्यों करें? दुःखित होने से कोई लाभ हो तो दुःखित होओ। शरीर पर घाव लगे तो रोते रहना नहीं। तुरंत दवा लगानी चाहिए, नहीं तो घाव विषाक्त बनेगा। हमें खाट पकड़नी पड़ेगी। उसी प्रकार आध्यात्मिक तत्त्व समझ जाने से मामूली बातों से व्यथित होते हार जाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।'

'अगर हम जान जाएँ कि मेले के मैदान में पटाके फूटने वाले हैं तो धमाका सुनकर नहीं चौकेंगे। यदि अचेत खड़े हों तो पटाके का धमाका सुन चौकेंगे। डर के मारे बीमार पड़ जाएँगे। आत्मा पर ध्यान देकर आगे बढ़ना ही दुःख को छुड़ाने का उपाय है। एक सेकेंड में मन पर काबू पाना नामुमकिन है। वह ठीक है कि समुद्र को पार करना बड़ा कठिन है। लेकिन जो उपाय समझकर प्रयत्न करता है वह क्या सफल नहीं होता? इस भवसागर के पार पहुँचने का उपाय भी महात्माओ ने सिखाया है। वे ही शास्त्र हैं। उनके अनुसार आगे बढ़ना काफी है। शास्त्राध्ययन करते, सत्संग सुनते ही सही तत्त्व अपनाना चाहिए। यदि महात्माओ की सन्निधि मिले तो उसे कभी व्यर्थ न गँवा दें। उनके दिये उपदेशों को जीवन में अमल में लाना चाहिए। नियमित रूप से साधना करनी चाहिए। शास्त्राध्ययन, सत्संग, साधना, गुरु के प्रति समर्पण सब चाहिए। जो श्रद्धापूर्वक आगे बढ़े उसके सारे दुःख दूर हो जायेंगे।'

गाड़ी ज़ोर से झूम गयी। गलत साइड से आयी एक लॉरी से टकराये बिना गाड़ी को बचाया था।

'बेटा, ध्यान से गाड़ी चलाओ।'

'वह लॉरी गलत साइड से आयी अम्मा।'

गाड़ी की खिड़की हाथ से थामे बैठे एक ब्रह्मचारी के हाथ पर लगे चोट पर पट्टी बँधी थी। अम्मा ने वह अपनी हथेली में लिया।

'हथेली फट गयी है न बेटा? क्या बड़ा दर्द है?'

'ज़रा सी चमड़ी छिल गयी है। धूल न जमने के वास्ते प्लास्टर

लगायी है।'

अम्मा ने मेहनत के उस निशान पर अपना वात्सल्य चुंबन लगाया।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

रात को ढ़ाई बजे वापसी यात्रा। गाड़ी के भीतर सोये सिर एक दूसरे से टकराते हैं। गायत्री की गोद में सिर रखे अम्मा लेटी हैं। अधमुँदे नयन। ठंड़ी हवा अर्धचंद्राकार माथे पर पड़ी अलकों को सहला रही है। झपकते सड़क के दीपकों के प्रकाश में धरती पर गिरे नक्षत्र की तरह मुखमंड़ल पर नथुनी प्रकाश फैला रही है।

१९८६ अप्रैल १९ शनिवार

न्याय की खोज करते न्यायवेत्ता

समय चार बजे। अम्मा दर्शन की पर्णशाला से अभी उठी नहीं हैं। आश्रम में नियमित रूप से आते एक वकील और उनके मित्र अम्मा के दर्शनार्थ पहुँचे। दोनों युवक अम्मा को प्रणाम कर फर्श पर बिछी शीतलपाटी पर बैठे। वकील के मित्र पहली बार आये थे।

वकील- (मित्र को लक्ष्य करके) 'अम्मा ये मेरे साथ प्रॅक्टीस कर रहे हैं। घर पर कई समस्याएँ हैं। पत्नी को छोड़ने का ठाना है। मगर वह जाने को राजी नहीं। पति से भरणपोषण की राशि माँगते हुए मुकदमा देने का इरादा रखती है। एक बच्चा भी है।'

अम्मा- (युवक से) 'बेटा, उस बेटी को तलाक क्यों देना चाहता हो?'

मित्र- 'उसका चरित्र अच्छा नहीं है। मुझे प्रत्यक्षतः उसके कई दुर्व्यवहार देखने पड़े।'

अम्मा- 'क्या बेटे ने प्रत्यक्ष देखा?'

मित्र- 'देखा।'

अम्मा- 'प्रत्यक्ष देखे बिना बेटे को कुछ नहीं करना चाहिए। वह बड़ा पाप है। निरपराध लोगों के आँसू बहाने से जो पाप होता है वह कठोर अभिचार से भी हानिकारक है। बेटा उसका त्याग करे तो बच्चे पितृविहिन हो जायेंगे। वह युवती दूसरी शादी करे तो बच्चे माँ को भी खो बैठेंगे। बच्चे को जन्म देने के बाद उस बेकसूर को गहरे दुःख में धकेल देना बड़ा अन्याय है। यदि क्षमा करने लायक अपराध हो तो क्षमा करके किसी तरह साथ साथ रहना बेहतर है न?'

मित्र- 'अम्मा, वह मुमकिन नही है। अब इस जन्म में वह संभव नही है। उसके बारे में सोचने भर से मन खिन्न होता है। उसमें विश्वास पूरी तरह नष्ट हो चुका है।'

अम्मा- -बेटा, मनुष्य का सबसे बड़ा बल विश्वास है, अगर विश्वास नष्ट हो गया तो सब नष्ट हो गया। बेटा, सोच विचारकर निर्णय करो। अम्मा हठ नहीं करती। बेटे ने उस युवती का दुश्चरित्र अपनी आँखो से देखा। बेटा कहता है कि आगे कभी उसके साथ जीना संभव नहीं है। इसीलिए अम्मा यों कहती हैं। किसी तरह मिलकर रह सकते तो वही बेहतर होता। तलाक देने पर भी पत्नी के भरणपोषण के लिए कुछ न कुछ देना ही पड़ेगा। ऐसे मामले लेकर अनेक लोग यहाँ आते हैं। उनमें पत्नी प्रायः बेकसूर होती है। पति की शक की प्रवृत्ति ही सारी समस्याओ का कारण होती है।'

मित्र- 'मैंने कई बार माफ किया अम्मा। आगे संभव नहीं होगा। आत्महत्या करने तक का विचार किया।'

अम्मा- 'वह नहीं करना चाहिए। क्या हमारा जीवन दूसरे किसी के शब्द या कर्म पर निर्भर हैं? सारी समस्याओं का कारण यह है कि हम अपने पर निर्भर नहीं करते। फुरसत पाने पर तरह तरह की दुश्चिंताओं में सिर धुनने के बदले बेटा आध्यात्मिक ग्रंथ पढ़ो। आध्यात्मिक तत्त्व समझ में आये तो दुःख से छूट सकेंगे।'

मित्र- 'घर पर हाल ही में एक प्रश्नपरीक्षा करायी। ज्योतिषी का प्रस्ताव है कि जप से कोई हानि नहीं, पर ध्यान न करना। ध्यान

बड़ा हानिकारक है।'

अम्मा- (हँसते हुए) 'शाबास! क्या ध्यान नही करना चाहिए? एक बात ज़रूर है। नई गाड़ी खरीदने पर प्रारंभ में उसे बड़ी तेज़ी से नही चलाना चाहिए। कुछ दूर चलाने के बाद उसे आराम देना होगा। नहीं तो एंजिन गरम हो जायेगा। उसी तरह प्रारंभ में अधिक समय ध्यान करना मना है। शरीर गरम हो जायेगा। कुछ लोग प्रारंभ में विराग भाव से अधिक ध्यान करेंगे। यह अच्छा नहीं है। जप कर रहे हो तो एकाग्रता से करने का श्रम करें। मंत्र जपते समय उस मंत्र में या तो इष्टदेव को देखना चाहिए या अक्षरों पर ध्यान करना चाहिए। ध्यान करने से कोई हानि नहीं होगी। रूप मन में स्पष्ट दिखाई देने के बाद रूप पर ध्यान देना काफी है। एकाग्रता नहीं हो तो कोई उपाय काम नहीं देता।'

मित्र- 'ज्योतिषी ने ग्रहदोषों की शांति के लिए रत्नजड़ित अंगूठी पहनने का उपदेश दिया।'

अम्मा- 'भिन्न भिन्न ग्रहों के लिए अलग अलग रत्न की बात कहते है। किंतु ध्यान से जो लाभ सिद्ध हो वह और किसी से प्राप्त नहीं होता। कोई बात ध्यान से अधिक सफल नहीं है। बेटा मंत्र जपता है न? वह बेटे को कवच की तरह सारी विपदाओं से बचाएगा।'

वे दोनों अम्मा को नमस्कार कर उठे। वकील ने मित्र से कहा- 'तुम क्षणभर बाहर ठहरो। मैं अभी आता हूँ।'

फिर अम्मा से एकान्त में निवेदन किया- 'मेरे आग्रह करने से ही वह आया है। उनकी बेटी का स्मरण करने पर बड़ी इच्छा हो रही हैं कि परिवार टूटने न पावें। अम्मा ही कोई उपाय ढूँढ़ना। अम्मा उन्हें सद्‌बुद्धि दो।'

अम्मा- 'उस बेटे के मन में अभी उस बेटी पर भारी क्रोध ही है। अब कुछ भी कहूँ तो वह उसे नहीं अपनाएगा। रहने दो, अम्मा संकल्प करेंगी।'

'अम्मा संकल्प करेगी' कथन की अर्थव्याप्ति पर अनुभवी वकील को पूरा भरोसा था। उनके चेहरे पर राहत की चमक देख पड़ी।

मानों बड़ा बोझ सिर से उतर गया।

वे दोस्त मिलकर दूर जा रहे थे तो अम्मा की करुणामयी दृष्टि मंद पवन की तरह उनका अनुगमन कर रही थी।

१९८६ मई १० शनिवार

अप्रतीक्षित परीक्षाएँ

प्रार्थना मंदिर की बुनियाद के लिए मिट्टी ढ़ोने का काम चल रहा था। ब्रह्मचारियों के साथ कई भक्त भी अम्मा के साथ मेहनत करते हैं। वे अम्मा के साथ काम करने और अम्मा का प्रसाद ग्रहण करने के दुर्लभ प्रसंग का अधिकाधिक लाभ उठा रहे हैं।

समय रात के दो बजे। अम्मा कीर्तन के बाद काम में शामिल होने आई तो कई लोगों ने मना किया था। मगर वे सफल नहीं हुए।

अम्मा– 'सिर्फ बच्चों को काम करते कैसे देखूँ? तब तो बोझ दुगुना होगा। अम्मा पहले प्रार्थना किया करती थी कि भक्तों की सेवा करने का मौका मिले। भगवान निःस्वार्थ सेवा करनेवालों के दास हैं।' अम्मा यों कहती काम में लगीं।

'अब हम काम रोकेंगे। बच्चे सबेरे से काम कर रहे हैं न?' ऐसा कहते हुए अम्मा ने गायत्री को बुलाया। गायत्री आ गयी।

अम्मा– 'बेटी, बच्चों को देने क्या वड़ा रखा है?'

गायत्री ने आसमान की तरफ देखा। 'तारे देखकर हँस रहे हैं। इस ढ़लती रात में कहाँ से वड़ा लायें?'

'तुम जल्दी जाकर दाल पीसकर लाओ। हम शीघ्र वड़ा तल लेंगे।' अम्मा के कहते ही चूल्हा भी तैयार हो गया। गायत्री आ गयीं। अम्मा स्वयं वड़ा तैयार करने लगीं। उन्होंने वड़ा तलकर एक बरतन में जमा किये। पास खड़े एक ब्रह्मचारी को सौंपकर अम्मा ने कहा– 'बेटा, ले जाओ सब को बराबर देकर आओ।'

ब्रह्मचारी पास खड़े सब लोगों को वड़ा देने के बाद दूर खड़े लोगों को देने चला। अम्माने पास खड़े लोगों को एक एक वड़ा

दुबारा दिया। सब को वड़ा देने गया ब्रह्मचारी अम्मा के पास लौटा। अपने हिस्से का एक वड़ा लिया। उसके बाद भी एक वड़ा बचा।

अम्मा- (ब्रह्मचारी से)'जो है उसे समान रूप से देने को कहा था न?'

ब्रह्मचारी- 'सब को एक एक दिया तो एक शेष है। यह फिर काटकर दूँगा।'

अम्मा- 'नहीं, वह बेटा ले लेना। यहाँ लोगों को अम्मा ने दुबारा दिया। तुम्हें एक ही मिला न? अम्मा देख रही थी कि तुम यह सोचकर की एक ही बाकी है उसे वापस लाये बिना कहीं स्वयं खा तो नहीं लेते।'

'जो भी वस्तु मिले उसे स्वार्थ छोड़ सबमें बाँटना ही साधक का गुण है। यो अप्रतीक्षित घड़ियों की परीक्षा में विजयी निकलने में हमारी दक्षता उभरती है। पाठशाला में समय समय पर बिना पूर्व सूचना के टेस्टपेपर देते हैं। छात्रों के वर्ग में पहुँचने के बाद ही उसकी सूचना दी जाती है। ऐसी परीक्षा में सफल होने में ही होशियारी है। दूसरी परीक्षाओं की तारीख पहले से जानते हैं। सीखकर लिखने की फुरसत भी मिलती है। उसी प्रकार अम्मा तुम लोगों को जाँचने की बात पहले से बताकर जाँचें तो उसमें कोई बात नहीं। अचानक होनेवाली परीक्षा में विजयी निकलना होगा। वही उसकी मनःशक्ति है। तभी पता लगता है कि श्रद्धा कितनी गहरी है। दूसरी बात तो पहले से सीखकर अभिनय करने समान है।'

'साधक का हर शब्द व हर काम श्रद्धापूर्ण व सावधान रहेगा। वह कोई फालतू शब्द नहीं कहेगा। कोई काम लापरवाही से नहीं करेगा। उत्तम शिष्य गुरु के शब्दों का प्रतिवाद नहीं करेगा। वह गुरु का कोई भी आदेश सहर्ष स्वीकार करेगा। उसे मालूम है कि गुरु का प्रत्येक शब्द उसकी भलाई के लिए है। गुरु के हर शब्द का अनुसरण करने में आनंद पाना चाहिए। कोई भी काम करने तैयार होना चाहिए। हमें समझना चाहिए कि वह हमें लक्ष्य की ओर ले जाता है।'

अम्मा के शब्द को जीवन में उतारने का दृढ़ संकल्प सबके

मानस में अंकुरीत हुआ। अपने जीवन में नवप्रभात का उदय कराने और क्या उपाय है?

उस समय ब्रह्मचारिणी लीला ने एक संदेह प्रस्तुत किया- 'अम्मा, क्या रावण सचमुच जीवित व्यक्ति था या केवल किसी तत्व का प्रतीक है?'

एक ब्रह्मचारी- 'रावण जीवित नहीं थे। केवल अर्थवादपरक तत्त्व मानें तो श्रीराम भी जीवित नहीं थे, श्रीराम को भी संकल्पना कहना पड़ेगा।'

अम्मा- 'राम, रावण सब जीवित व्यक्ति ही थे। किंतु रावण के शरीरवर्णन से दस इंद्रियों के दास बने मानव को दिखाते हैं।

ब्रह्मचारी शक्तिप्रसाद- 'अगर दो सिरवाली बकरी और बालक जन्म ले सकते हैं तो दस सिरवाले रावण क्यों नहीं हो सकते?

अम्मा- 'ईश्वर का संकल्प हो तो असंभव कुछ भी नहीं है।' अम्मा ने संवाद नहीं बढ़ाया- 'बच्चो, तुम सो जाओ, सवेरे उठना है न?'

१९८६ मई १८ रविवार

रविवार को सामान्यतः आश्रम में भीड़ रहती है। दूसरा दिन छुट्टी का दिन हो तो कहना ही नहीं। अम्मा के दर्शन की पर्णशाला में बिलकुल जगह नहीं। बिजली चले जाने से भीतर गरमी बढ़ी है। आज की भीड़ ने अम्मा को हर्षित किया है। अम्मा ने कहा कि अम्मा को पंखा देने की जगह आये लोगों को पंखा करें। वृद्ध या रोगी हों तो उनके लिए कुरसी ड़ाल दें। पानी माँगें तो पानी भी दिया जाए। पर्णशाला के बाहर बहुत से लोग धूप में खड़े थे। इससे अम्मा को अधिक तकलीफ होती थी। भीड़ का दिन होने के कारण भक्तजनों की तकलीफें व समस्याएँ विस्तार से सुनकर ज़वाब देना मुश्किल था। कई लोगों की समस्याएँ सुनने के पहले ही अम्मा ने उनके हृदय के भावों को जानकर ज़रूरी समाधान सुझाया। आशीर्वाद और सांत्वना देकर भेजा।

'बच्चो, नमस्कार करने के लिए खड़े न रहना। जल्दी-जल्दी

आओ।' पर्णशाला के भीतर बैठे लोगों के बाहर निकलने पर ही धूप में खड़े लोग अंदर प्रवेश कर सकते थे।

गरीबों के हृदय की धड़कन

उस बीच एक भक्त महिला ने आँसू बहाते हुए अपना दुःख अम्मा से निवेदन किया– 'अम्मा गाँव में सारी मुर्गियों को बीमारी लग गई है। मेरे घर की मुर्गी को भी बीमारी शुरू हुई है। अम्मा उसे बचाना।'

समीप खड़े ब्रह्मचारी को यह पसंद नहीं आया। इतनी भीड़ के दिन में जल्दी अम्मा को प्रणाम करके जाना चाहिए था। उसके बदले ऐसी मामूली बातें बताकर अम्मा को कष्ट देती है। यह सोचकर उस औरत से नफरत भी हुई। किंतु दूसरे क्षण अम्मा की कुछ गंभीर सी दृष्टी अपनी तरफ देखकर वह घबरा गया। अम्मा ने प्रेम से उस स्त्री को मनाकर मुर्गी पर लगाने के लिए भस्म दिया। वह खुशी से चली गयी।

दर्शन के बाद अम्मा ने उस ब्रह्मचारी को पास बुलाया।

'बेटे, तुम्हें उसकी तकलीफ समझ में नहीं आयेगी। क्या तुम जानते हो कि संसार में भिन्न-भिन्न लोग कैसी कैसी कठिनाईयाँ झेलते हैं? अगर समझते तो तुम उसकी तरफ उपहास की नज़र न ड़ालते। भगवान की कृपा से तुम्हारे पास सारी ज़रूरी चीज़ें हैं। बिना किसी व्यथा के जी सकते हो। उस स्त्री की कुल आमदनी उस मुर्गी के अंड़ों से आती है। मुर्गी के मरने पर घर भूखा रहेगा। मुर्गी परिवार को रोटी देती है। उनकी जिंदगी के बारे में सोचते वक्त अम्मा उनका दुःख मामूली नहीं समझती। अंड़े बेचकर कमाये पैसे से कुछ बचाकर उसी से यहाँ आती है। उनकी तकलीफ जानने के कारण अम्मा ने किसी किसी दिन उन्हें गाड़ी भाड़े के पैसे दिये हैं। इतनी तकलीफ के बीच भी उनका समर्पण भाव देखा? उसका स्मरण करने पर आँखें सजल हो जाती हैं। बेटा, जो भरपेट खाकर बैठा है वह भूखे आदमी की परेशानी नहीं पहचानता। भूख को पहचाननेवाला ही भूखे की समस्या पहचानेगा। इसलिए बेटा, हर किसी की बात बड़े ध्यान से

सुननी चाहिए। दूसरों से उनकी तुलना नहीं करनी चाहिए। हमें उनके स्तर पर उतरकर सोचना चाहिए। तभी उनकी तकलीफ समझ सकेंगे। तभी हम उन्हें उनके योग्य उत्तर दे सकेंगे, सांत्वना दे सकेंगे।'

एक युवक पर्णशाला में प्रवेश करने के क्षण से अपलक आँखों से देखता खड़ा है। नागपुर का निवासी है। कॉलेज में अध्यापक है। जिस दिन आया उस दिन उसने कहा कि अम्मा को देखने के बाद तुरंत जाएगा, गाँव में बहुत ज़रूरी काम है। परंतु उसे आये कई दिन हो चुके। अम्मा ने पर्णशाला में बैठे लोगों से कहा- 'यह बेटा कई दिन पहले आया है। इसे कई बार बताया- बेटा, जाओ और बाद में आना। मगर सुनता नहीं, अभी तक नहीं गया।'

वह समझ नहीं सका कि अम्मा ने क्या कहा। जब सब उस पर ध्यान देने लगे तब मालूम हुआ कि उसीकी चर्चा हो रही है। पास बैठे एक आदमी ने अनुवाद करके सुनाया।

जब अम्मा की बातें समझ में आई तब युवक ने कहा- 'मैं जाऊँगा ही नहीं। दुबारा आने की बात कैसे उठे?'

अम्मा- (हँसती हैं) 'भगाने का उपाय भी अम्मा के पास है।' अम्मा का ज़वाब सुनकर सब हँस पड़ते हैं।

अम्मा रसोईघर में

दोपहर के भोजन की घंटी काफी समय पहले बज चुकी। बहुत लोगों ने खाना नहीं खाया है। अम्मा का सामीप्य छोड़ने की अनिच्छा ही कारण है। समय काफी हो गया। एक अंतेवासी ने आकर अम्मा से कहा कि भोजन परोसनेवाले प्रतीक्षा कर रहे हैं। अम्मा के आग्रहपूर्वक कहने से और कुछ दोपहर के भोजन के लिए चल पड़े।

कई लोग अम्मा के उठे बिना पर्णशाला से जाने तैयार नहीं। उनके लिए भोजन कोई समस्या नहीं है। अम्मा को देखते रहने के जितने क्षण मिलते हैं उन्हें हाथ से छूटने न देने में ही वे धन्यता मानते हैं। इसकी कठिनाई अंतेवासियों को झेलनी पड़ती है। तीन-चार बजे तक भोजन कराते भक्तों की प्रतीक्षा करते रहना पड़ता है।

भिक्षांदेहि माता

समय तीन बजे

अम्मा पर्णशाला से उठीं। सभी प्रणाम करने की व्यग्रता में हैं। वे अम्मा को आगे बढ़ने नहीं देते। अम्मा उनमें कई लोगों को पकड़कर उठाती किसी किसी की पीठ सहलाती रसोईघर में पहुँचीं।

अम्मा के पहुँचने पर खाना परोसनेवाले बड़े व्यग्र दिखाई दिये। जैसे दर्शन दिनों में करते हैं वैसे आज भी साधारण से अधिक भोजन तैयार किया। मगर वह बहुत जल्दी खतम हो गया। दूसरी बार चावल पकाया, वह भी शीघ्र खतम। दोपहर होने पर भी पूर्वसूचना दिये बिना अनेक नये लोग आ रहे थे। फिर से खाना तैयार। वह भी समाप्त। भोजन के लिए अब भी भक्तजन हैं। चावल पकाना पुनः प्रारंभ हो गया। मगर सब्जी खतम। इसी असमंजस में पड़े परोसनेवाले। तभी अम्मा पहुँचीं।

अम्मा ज़रा भी विचलित नहीं हुईं। अम्मा ने रसोईघर के कई बंद ड़ब्बे खोलकर देखे। इमली, सरसों, कढ़ीपत्ता, इत्यादि लिया। कुछ क्षणों में रसम् तैयार। एक बड़े बर्तन में दही भरा है। सबेरे एक भक्त महिला लाई थी। उसमें प्याज, टमाटर और हरी मिर्च छीलकर ड़ाल दिया, नमक ड़ाला। परोसने तैयार! तब तक चावल भी हाज़िर। अम्मा ने स्वयं परोस दिया। लोगों ने अम्मा के करकमलों से परोसा प्रसाद षड्रस व्यंजन से युक्त प्रीतीभोज से बढ़कर स्वाद से, संतोष से ग्रहण किया। भक्तों की एक पारी और भोजनार्थ रह गई। अम्मा ने उन्हें भी परोसा। अम्मा के गृहस्थ भक्तों के भोजन करने की पक्की सूचना पाने के बाद आश्रम के अंतेवासी भोजनार्थ बैठे। उनके लिए सिर्फ चावल व रसम् था। तीन ब्रह्मचारियों ने अब भी भोजन नहीं किया है। चावल भी खतम हो गया। क्योंकि वे चावल परोसने, आदि काम कर रहे थे। वे दूसरों के साथ बैठ नहीं सके।

चार बज गये। अपने तीन बच्चे तीन-चार घंटे लगातार काम करने के बाद भूखे खड़े थे। यह देख अम्मा से नहीं रहा गया। अब सिर्फ तीन लोगों के लिए चावल पकाने में समय लगेगा। सब्जी भी कुछ नहीं है।

ब्रह्मचारियों ने देखा कि बच्चों की बात सोचकर अम्मा परेशान हैं। उन्होंने दृढ़ता से कहा कि भूख नहीं है, कुछ नहीं चाहिए। मगर अम्माने नहीं माना। 'बच्चों दस मिनिट इंतजार करो। अम्मा अभी आयी।' इतना कहकर अम्मा एक बर्तन लेकर बाहर निकलीं। शायद सुगुणच्चन के घर को गई होंगीं। अम्मा के कमरे में भक्तों की भेंट की हुई खाद्य वस्तुएँ हो तो वह शायद ले आयेंगी। ब्रह्मचारियों ने रसोईघर की सफाई करके बर्तन माँज-धोकर रख दिए।

तब तक अम्मा पहुँचीं। चाँदनी सी मुस्कुराहट बिखेरती आ रही हैं। बच्चों को देने के लिए कुछ मिला होगा। जिज्ञासा तीव्र थी, बर्तन के तरफ देखा। बर्तन चावल से भरा है। उसना, उबला सब तरह का चावल एक ही बर्तन में!

एक ब्रह्मचारी अनजाने पुकार उठा- 'अम्मा!'

आँखें सजल हो गईं। बच्चों के लिए अम्मा पड़ोस की झोपड़ीयों से भिक्षा माँग लायी हैं! चेहरे पर उसकी खुशी है।

चारों तरफ मछुआरे रहते हैं। वे समुद्र से मछली पकड़कर जीवन गुज़ारते हैं। वे एक जून का खाना मुश्किल से पाते हैं। वह जानती अम्माने प्रत्येक घर से केवल एक मुट्ठी चावल लिया था। ब्रह्मचारी की आँखें भिक्षाटन करते श्रीपरमेश्वर और सिंहासनारूढ़ होकर भिक्षा देती अन्नपूर्णा के चित्र पर जम गयी। यहाँ देवी स्वयं बच्चों के लिए भिक्षा पात्र लिये मछुआरों की झोंपड़ी पर याचना करती हैं। बाहरी दरवाज़े बंदकर अम्मा जमीन पर बैठीं। चारों तरफ बेटे भी। लाया चावल और उसमें पड़ा सांबार मिलाकर कौर बनाया और बच्चों को खिलाया।

'एक कौर और', अम्मा ने कहा।

'नहीं, अब अम्मा के लिए कुछ नहीं होगा।'

बच्चों का पेट भरने पर अम्मा की भूख मिटेगी। बेटे को हठपूर्वक और एक कौर खिलाया। अब मुश्किल से दो कौर का चावल बचा था। सांबार में से आलू की एक फाँक शेष है। अम्मा ने दोनों मिलाकर खा लिया। पूर्ण संतुष्ट अम्मा उठीं।

अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकरप्राणवल्लभे।

ज्ञान वैराग्य सिद्ध्यर्थं भिक्षां देहि च पार्वति ॥

१९८६ मई २९ बृहस्पतिवार

ब्रह्मचारी रामकृष्णन् बुखार से बिस्तर पर पड़ा है। एक ब्रह्मचारी तुलसी, काली मिर्च व सौंठ मिलाकर बना काढ़ा लेकर उस कमरे में पहुँचा। अम्मा बच्चों के पास ही बैठी हैं। दीवार पर अम्मा की एक पुरानी फोटो- रंगीन साड़ी-ब्लौज पहनकर खड़ी अम्मा। वह देख अम्मा ने कहा- 'पहले दमयंती अम्मा हठपूर्वक साड़ी पहनाती थीं। एक दफे कहीं जाते समय साड़ी न पहनने के कारण खूब पिटाई हुई। आखिर दुसरे ड्रेस के उपर ही साड़ी ओढ ली। नाव में चढ़ने के बाद साड़ी उतारकर समेट हाथ में ले लिया। (अम्मा हँसने लगीं)

एक अन्नप्राशन

एक भक्त महिला अपने बच्चे को लिए अम्मा के दर्शनार्थ आई हैं। वर्षों से वह निःसंतान थी। उसने अम्मा के दर्शन कर प्रार्थना की तो अम्मा के संकल्प करने से एक पुत्र हुआ। उसके अन्नप्राशन के लिए वह बंधुजनों के साथ आई है। अन्नप्राशन के बाद उन्हें तुरंत जाना है।

उसने अम्मा से कहा- 'अम्मा, बच्चे को अभी अन्नप्राशन करा दीजिए। बच्चे को लेकर रात को ठहरना मुश्किल है। वह पालने के बिना नहीं सोयेगा। उसे देने दूध भी नहीं लायी। अन्नप्राशन के बाद अभी निकलूँ तो हम शाम होते होते घर पहुँचेंगे।'

अम्मा- 'बेटी, ऐसा मत कहो। तुम्हारा बच्चा ईश्वर की कृपा से प्राप्त हुआ है। तुम ईश्वरीय स्थान पर खड़े हो। ऐसी जगह पहुँचने पर ही सब लोग उतावले होते है। मंदिर या आश्रम में पहुँचने पर सब तुरंत लौटना चाहते हैं। बीमार हो अस्पताल जाने पर क्या डॉक्टर से कहते हैं कि मुझे जल्दी भेजिये। बच्चे को लेकर जावें तो क्या बताते हो कि डॉक्टर बच्चे के लिए दूध और पालना नहीं लिया है। बच्चे को नींद आ रही है। शीघ्र देखकर भेजिये।

मंदिरो व गुरुकुलों में जाने पर हममें समर्पण की भावना होनी चाहिए। बच्चों, सत्कर्म करने, मंदिर और आश्रमों में जाकर ईश्वर भजन करने से कितना ही दुःखजंजाल दूर हो जाता है। यह बात तुम क्यों नहीं सोचती?'

'तुम शीघ्रता से जाते हो। रास्ते में बस अगर खराब हो गई तो किससे शिकायत करोगी? वर्षोंसे तुम अम्मा के पास आती हो। तुमने इस प्रकार कहा तो अम्मा को बड़ा दुःख हुआ। बेटी कभी ऐसा न कहना। 'ईश्वरेच्छा के अनुसार चलें।' ऐसा सोचना। क्यों नहीं सोचा कि अम्मा जब चाहे तब अन्नप्राशन करा दें। वही समर्पण है। तुम लोग अभी जाओ तो रास्ते में पड़े कष्ट भुगतोगे। इसीलिए नहीं भेजा।'

वह महिला अम्मा के मुँह से इतनी गंभीर बातें पहली बार सुन रही थी। उसका चेहरा फीका पड़ गया। अम्मा ने उसे पास बुलाकर कहा- 'अम्मा को बेटी से जो आत्मीयता है उसी के कारण कहा। बुरा न मानना।'

इतना सुनने पर उस महिला का चेहरा खिल उठा। अम्मा ने कहा तो ज़रूर, मगर यों अन्नप्राशन कराया कि वे शाम तक घर पहुँच सकें।

१९८६ मई ३० शुक्रवार

मध्याह्न का समय। अम्मा पर्णशाला में बैठकर भक्तों से बात कर रही हैं। किडुङन्नूर विजयानंदाश्रम का एक ब्रह्मचारी भी है। अम्मा ने उस ब्रह्मचारी से कहा- 'बेटा, अपने हाथ की चोट के लिए दवा लेने जाना और दूसरे की चोट के दर्द के प्रति सहानुभूति से उस के लिए दवा लेने जाना- दोनों में अंतर है। दूसरे में विशालता है। एक साधक में यही होना चाहिए। यह उदारता लाने के लिए साधना की जाती है। साधना अपने मोक्ष के लिए नहीं होनी चाहिए। संसार का दुःख दूर करने एक उदार हृदय पाने के लिए हो। यों ही आँख बंद करके बैठे रहने में कोई सार नहीं है। ऐसा विशाल हृदय होना चाहिए जो स्वार्थ छोड़कर दूसरों के दुःख को अपना दुःख मानकर कार्य कर सके।'

अम्मा की चिकित्सा

सबेरे से अम्मा को ज़ोर की खाँसी है। एक भक्त ने अम्मा से पूछा कि क्या कोई गोली लायी जाए? एक ब्रह्मचारी डॉक्टर लीला को बुलाने गया।

गत शुक्रवार को एक भक्त आश्रम में आया। वह खाँसी से बहुत परेशान था। उसकी खाँसी की आवाज़ हमेशा आश्रम में गूँजती थी। वह कलरिमंड़प में अम्मा को प्रणाम करते समय भी खाँस रहा था। मगर वह अम्मा का दर्शन करके लौटने के बाद बिलकुल खाँसता नहीं था। अम्मा का दिया तीर्थ पीने पर खाँसी रुक गई। वह बेचारा आज सबेरे बड़ी खुशी से गाँव लौटा।

'पहले एक दफे तिरुवण्णमलै पर अम्मा की तबीयत कुछ बिगड़ गई। ब्रह्मचारी नीलू ने तय किया कि तुरंत डॉक्टर को दिखाना चाहिए। हठ करके अम्मा को एक डॉक्टर के पास ले गए। तिरुवण्णमलै में कई डॉक्टर अम्मा के भक्त हैं। तथापि उस दिन एक नये डॉक्टर के पास गये। अम्मा किसी की अनुमति की प्रतीक्षा किये बिना सीधे डॉक्टर के कमरे में चली गयीं। क्रुद्ध डॉक्टर ने कहा- निकल जाओ।' यह बात बताती अम्मा हँसती है।

'उस डॉक्टर को दोष न देना। वे किसी को जाँच रही थीं। उसी समय अम्मा एकाएक दरवाज़ा खोल अंदर दाखिल हुई। उनका ध्यान नष्ट हो जायेगा न? अम्मा के निकल जाने पर वे पीछे से बुला रही थीं, उन्हें पता नहीं था कि कौन आया है और किसलिए आया है। उस दिन अम्मा ने कहा कि ऐसी बातों के लिए अम्मा आगे डॉक्टर के पास नहीं जायेगी। यदि देखना भी पड़े तो किसी डॉक्टर को आश्रम में आना होगा।'

विश्वप्रकृति ने अम्मा का वचन सत्य बना दिया। आश्रम में प्रथम स्थायी निवास करती डॉक्टर ब्रह्मचारिणी लीला हैं। वे तिरुवनंतपुरम में रामकृष्णाश्रम अस्पताल में सेवा कर रही थीं। उन्हीं दिनों उन्होंने अम्मा में अपना जीवनलक्ष्य पाया। शीघ्र ही वे नौकरी छोड़कर आश्रम में स्थायी रूप से रहने आ गई। ब्रह्मचारिणी लीला ही अम्मा का इलाज करती हैं। उन्हें मालूम था कि अम्मा में जो

रोग नज़र आते हैं, वे सिर्फ दवा से दूर नहीं होते। इसलिए अम्मा को बड़े शारीरिक कष्ट में देखने पर भी उन्हें कोई हैरानी नहीं होती। लीला अम्मा के शारीरिक कष्टों को श्रीपरमेश्वर की कामिनी के लीलाविनोद के रूप में देखती है।

लीलाजी अम्मा के पास आई, पूछा- 'क्या गोली लाना है, अम्मा?' उन्होंने अम्मा के माथे पर हाथ रखकर परीक्षा की। 'बुखार नहीं है। कुछ समय बाद ठीक हो जायेगा।'

अम्मा ने हँसते हुए कहा- 'मर पड़ी तो भी लीला बेटी स्पर्श कर देखेगी और कहेगी कि कोई बात नहीं। कुछ देर बाद आराम हो जायेगा।' (सब हँसते हैं।)

१९८६ मई ३१ शनिवार

ईश्वर की भक्ति हृदयंगम हो

एक ब्रह्मचारी अम्मा के पास आकर साधना के व्यावहारिक निर्देश माँग रहा है। ब्रह्मचारी को ध्यान के लिए आवश्यक निर्देश देते हुए अम्मा ने कहा- 'बेटा, भ्रूमध्य पर ध्यान केंद्रित करना। आइने में जैसे परछाई को देखते हैं वैसे ही भ्रूमध्य में इष्टदेव को देखना। यहाँ (ब्रह्मचारी के भ्रूमध्य का स्पर्श करती हुई।) एक मंदिर की कल्पना करके उसमें भगवान के रहने की कल्पना करना। जो समयसारणी के अनुसार ड्यूटी के नाम पर ध्यान करते हैं उन्हें भगवान नहीं मिलते। भोजन व निद्रा त्याग रात-दिन ईश्वर दर्शनार्थ विलाप करना होगा। ऐसे लोगों को ही अनुभव हुआ है। उतना विराग होना चाहिए। शरीर पर लाल मिर्च लगाने पर जैसे छटपटाते हैं वैसे ईश्वर दर्शन के लिए व्याकुलता होनी चाहिए। एक भी क्षण गँवाये बिना सिसकते हुए सदा भगवान के दर्शनार्थ विलाप करना चाहिए। तभी निद्रा में सब भूल जाने की तरह सब को भूलकर अनुभूति स्तर पर पहुँच सकेंगे।'

'समुद्र में जब बड़ी नाव उतारते हैं तब लहर को काटकर आगे बढ़ने के लिए मछुवारे आँखें बंद किये ज़ोर से शोर करते हुए पूरी ताकत से आगे धकेलते हैं। लहर के पार पहुँचने तक शोर करते रहेंगे। नाव पर सवार लोग बिना रुके डाँड़ ज़ोर से चलाते हैं।

लहर को पार करने के बाद डाँड़ नीचे झुकाकर आराम करते हैं। दोनों समुद्र हैं। मगर एक तरफ लहर, दूसरी तरफ निश्चल! इसी तरह अब हम लहर के बीच में पड़े हैं। क्षणभर भी विश्राम नहीं कर सकते। उतनी सावधानी बरतें। श्रद्धा से प्रयत्न करना चाहिए। तभी हम उस निश्चल दशा तक पहुँच सकेंगे।'

'तोतापुरी में अद्वैत भाव था। फिर भी वे चारों तरफ अग्नि जलाकर बीच में खड़े तप करते थे। श्रीरामकृष्णदेव ने निरंतर ईश्वरचिंतन करके साक्षात्कार पाया। यदि ईश्वर साक्षात्कार चाहते हो तो सदा उनका विचार मन में करना चाहिए। यथार्थ साधक केवल घड़ी देखकर जप एवं ध्यान नहीं करता। उसका ईश्वर प्रेम सारी पाबंदियों के परे है। प्रारंभ में साधक को अनुशासन के प्रति प्रेम होना चाहिए। मगर वह केवल ड्यूटी न रहे। ईश्वर के लिए रोते रोते प्रार्थना करनी चाहिए। भगवान के लिए विलाप करना कमज़ोरी नहीं है। असल में भगवान के लिए ही रोना चाहिए। श्रीरामकृष्णदेव कैसे थे, संत मीराबाई कैसी थी?

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति

ब्रह्मचारी- 'श्रीकृष्ण का ध्यान करनेवाले अगर देवी मंत्र या देवी सहस्रनाम का पाठ करें तो क्या इसमें कोई गलती है?'

अम्मा- 'उसमें कोई आपत्ति नहीं। मंत्र कोई भी जपें, नाम कोई भी रटें, पर इष्टदेव का स्मरण करना चाहिए।'

ब्रह्मचारी- 'वह कैसे ठीक हो सकता है? प्रत्येक देवता के अलग बीजाक्षर होते हैं। उनको बदलकर जपना क्या ठीक है?'

अम्मा- 'देवता कहो, कुछ भी कहो- दिव्य शक्ति एक ही है। 'नारियल' कहो या 'कोकोनट' चीज़ बदलती नहीं है न? उसी प्रकार हर एक व्यक्ति के संस्कार के अनुसार वे ईश्वर को अलग अलग ढ़ंग से अपनाते हैं। कई नामों से वे जाने जाते हैं। किंतु सर्वव्यापी आत्मचैतन्य सारे नामों के परे हैं। ईश्वर सिर्फ आवाज़ सुनकर मुड़कर नहीं देखते। वे हमारे हृदय में विराजते हैं, हमारा

हृदय जानते हैं। उनके नाम अनंत हैं। कोई भी नाम उनका नाम है। कई जगह पानी के लिए कुआँ खोदने के बदले एक ही जगह गहराई में खोदने से जल्दी पानी मिलेगा। फिर कई जगह खोदकर समय क्यों बरबाद किया जाए?'

'पानी पेड़ की ऊपरी डाल पर नहीं ड़ालते। जड़ पर ड़ालते हैं। तभी पानी सारी डालों तक पहुँचेगा। उसी तरह हम ईश्वर को प्यार करने के माध्यम से सारे जीवों को प्यार करते हैं। कारण यह कि भगवान सारे जीवों के हृदय में रहते हैं। इसलिए हमें सब के आधारभूत ईश्वर का आश्रय ग्रहण करना चाहिए।'

'पूजा करते समय देवता व मंत्र के अनुसार पूजा करनी चाहिए। किंतु आत्मलाभ के लिए पूजा करते समय सबको परमात्मा के रूप में कल्पना करनी चाहिए। यह जानना चाहिए कि सब एक ही में हैं। उस एक सत्य को सब में देखना भी चाहिए। तब समस्या नहीं है। एक ही चैतन्य सब जगह व्याप्त है। वह हम में भी भरा हुआ है।'

शाम का कीर्तन संपन्न हो गया। बड़ी संख्या में भक्तजन आये हैं। रात का भोजन ड़ोसा है। अप्रत्याशित रूप से अनेक भक्तजन आ गये। इसलिए रात को साढ़े दस बजे के बाद भी ड़ोसा बनाने का काम पूरा नहीं हुआ। ड़ोसा तैयार होता जाता है, उधर भक्तों को दिया जाता है। अम्मा भी रसोईघर में हैं। अम्मा ने सुगुणच्चन्न के यहाँ से तवा मँगाया। एक ब्रह्मचारी तवा ले आया। एक चूल्हे पर तवा रखकर अम्मा भी ड़ोसा तैयार करने लगीं। कहते हैं कि भूखे के सामने भगवान रोटी के रूप में प्रत्यक्ष होते हैं। वह भूख भौतिक हो या आध्यात्मिक!

कर्म को आराधना बना दो

रात को भोजन के बाद अम्मा भी ब्रह्मचारियों के साथ काँक्रीट की गिट्टी तैयार करने के काम में व्यस्त हो गई। पूर्वाश्रम में ये ब्रह्मचारी अपने कपड़े धोने में भी झिझकते थे। वे इस परिश्रम के महोत्सव में अम्मा के साथ शामिल हो गये। आध्यात्मिकता के

व्यावहारिक पाठ!

काम करने के बीच अम्मा ने कहा- 'बच्चो, यह भी साधना है। काम करते समय भी चिंतन ईश्वर के विषय में होना चाहिए। ईश्वर का चिंतन करते हुए हम जो भी काम करें वह कर्मयोग है। बच्चों, जब गिट्टी देते हैं, तब कल्पना करें कि इष्टमूर्ति के करों में दे रहे हैं। लेते समय कल्पना करें कि इष्टमूर्ति के हाथ से ले रहे हैं।'

अम्मा ने एक कीर्तन गाया। सब ने उसे दुहराते हुए अपना काम जारी रखा।

आपकी दिव्य कथा गाऊँगा
एक वर देना।
दिव्य कथा गाते समय
मेरे दिल में आना।
एक वर देना, मेरे दिल में आना।
दुर्गति को दूर कर दो
दुर्गा भगवती काली!
त्वद्रूप देखने के लिए
प्रार्थना यह रोज करता है
ध्यान का मार्ग विदित नहीं
गीत की श्रुति नहीं!
मोद में लीन होने
वेदसार! तुम कृपा करो
गायत्री कीर्ति मूर्ति
कात्यायनी हैमवती
मोक्षात्मिका मेरी अम्मा
दाक्षायणि शरणं शरणं
तत्त्वों का कथन करने
शक्ति देना देवी!
विश्वमयी! तुम न हो तो
शिव नहीं, सो जानता हूँ।

रात ढलती गयी। एक बजा। भीगी चाँदनी, नारियल के पत्तों के आँचल में चाँदी के धागों से कालीन बुनती है। रात की नीरव

बहीनों में आत्मा एवं बच्चों कल हजारों का अभ्युदय होने योग्य शांतिमंदिर के निर्माण में व्यस्त हैं।

'या निशा सर्व भूतानां तस्यां जागर्ति संयमी' गीतामृत हृदय में उभर रहा है। प्रत्यक्षतः भी यह सही है। जब सारे लोग सो रहे हैं, तब लोकमाता उदयास्त से रहित निःस्व प्रकाश का लोक खड़ा करते पसीना बहा रही हैं। युग-परिवर्तन के महाशिल्पी के साथ एकांत में बिताये जानेवाले ये क्षण। एक जीवन को धन्य करती स्मृति के अनमोल रत्न।

9

९

१९८६ जून ९ सोमवार

सबेरे अनीश के ब्रह्मचर्य दीक्षा से अनुबंधित पूजापाठ प्रारंभ हुआ। आलप्पुया के एक पंडित दीक्षा के लिए आवश्यक होमादि कर्म करने आये हैं। कलरिमंडप पर होमाग्नि की ज्वाला धधक उठी। वेदमंत्र ध्वनि गूँज उठी। अम्मा के दिव्य सान्निध्य ने सब में आनंद की अनुभूति कराई।

अम्मा में बालभाव भरा अनुभव हुआ। अम्मा के प्रत्येक शब्द व कर्म ने वहाँ इकट्ठे लोगों में आनंद फैलाया। केश मुंड़ाकर चोटी धारण किए पीत वस्त्र स्वीकार करने उपस्थित अनीश को देखकर अम्मा को कुतुहल हुआ। उन्होंने वहाँ पड़ा गुड़हल का फूल उठाकर अनीश की चोटी में बाँध दिया। यह दृश्य देख लोग हँसी रोक नहीं सकें।

थोड़ी ही देर बाद एकाएक अम्मा के हावभाव बदल गये। उस मुखमंड़ल पर गंभीरता थी। वातावरण मौन। वेदमंत्रों की ध्वनि, होमाग्नि में जलती समिधा, बीच-बीच में चटक उठने की ध्वनि ही शेष रही। वहाँ उपस्थित लोगों की मुखाकृति बता रही थी कि उनके मन उन्नत अलौकिक भाव में पहुँचे हैं।

अम्मा ने बेटे को दीक्षानाम दिया- सत्यात्म चैतन्य। दीक्षा के बाद भिक्षाग्रहण करने अम्मा को प्रणाम करके सत्यात्म चैतन्य पर्णशाला से बाहर निकला।

एक मुस्लिम भक्त परिवार अम्मा का दर्शन करने आया है। आज रमज़ान है। वे पवित्र दिन अम्मा के साथ बिताने आये हैं। दीक्षा का पूजापाठ पूरा करने के बाद उठी अम्मा उस भक्त परिवार को लेकर पर्णशाला में आ बैठीं। कुछ समय उनके साथ बातें करने के बाद ही अम्मा अपने कमरे को चलीं।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

समय शाम के पाँच बजे। अम्मा खुली छत पर बैठी हैं। कुछ ब्रह्मचारी उनके समीप हैं। अम्मा और ब्रह्मचारियों का एक सम्मिलित फोटो लेने का कार्यक्रम है। ब्रह्मचारी कई दिनों से अम्मा से अनुमति माँगते रहे हैं। अम्मा मानती नहीं हैं। फोटो अम्मा की जीवनी में देने के लिए है।

एक ब्रह्मचारी ने अम्मा की सेवा में फिर से प्रस्ताव रखा। 'अम्मा कई महात्माओं के विषय में सुना है। मगर उनमें कई लोगों के चित्र नहीं मिलते। उनका एक चित्र तक न देखने का गहरा दुःख हमें है। अम्मा का फोटो सुरक्षित न रखें तो वह अगली पीढ़ी को धोखा देना होगा। कम से कम इस कारण फोटो लेने की अनुमति दीजिये।'

अम्मा बोलीं- 'आज फोटो लेने की अनुमति दी जाये तो आगे तुम लोगों का पूरा ध्यान इन बातों पर केंद्रित होगा। तुम्हारी साधना के लिए वह हानिकारक रहेगा। और तुम जैसा कहोगे वैसे वेशभूषा धरना मेरे लिए असंभव होगा। वह मेरा पथ भी नहीं। फोटो के लिए मैं बैठ नहीं सकती।' अम्मा की विमुखता और गंभीर उत्तर सुन ब्रह्मचारी विषण्ण व मौन रहें।

अम्मा अपने बच्चों की व्यथा कितनी देर देखती रहेगी? अम्मा ने कहा- 'जाओ, सभी बच्चों को बुला लाओ।'

बादलों के छंट जाने पर चाँदनी रात के समान ब्रह्मचारियों के चेहरे पर रोशनी छा गयी। सब दौड़ पड़े। आश्रम में उस समय जितनी भी ब्रह्मचारिणीयाँ और ब्रह्मचारी उपस्थित थे वे सब एक एक

कर आ गये। सब से बुजुर्ग ब्रह्मचारी ओट्टूर उण्णिनंबूदिरिप्पाड़ हैं!

फोटो लेने के पश्चात् अम्मा ने ओट्टूर से बच्चों के लिए कुछ सत्संग सुनाने को कहा। कृष्णार्पित मानस ओट्टूर के मुँह से गोकुल के नन्दलाल की लीलाओं का वर्णन प्रवाहित होने लगा। भावविभोर अम्मा माखनचोर की नित्यनूतन कथाएँ श्रद्धापूर्वक सुनती रहीं।

ओट्टूर ने हठ किया- 'अब हम अम्मा का सत्संग सुनेगें।'

अम्मा- 'अम्मा को सत्संग सुनाना नहीं आता। कोई कुछ पूछता है तो मुँह में आई कोई बकवास सुनाती हूँ। बस् इतना ही।'

ओट्टूर- 'बकवास ही सही, हमें वही सुनना पसंद है। अम्मा की वाणी में जो भक्तिभावना है, वह हम लोगों को नहीं मिलती। हम क्या करें?' अम्मा ओट्टूर के चेहरे पर दृष्टि ड़ाल सिर्फ मुस्कुराईं। अम्मा की गोद में सिर टेके ओट्टूर को अम्मा ने 'उण्णिकण्णा' पुकारते आश्लेष किया।

अपनी साधना ही काफी नहीं है

कल भावदर्शन का दिन था। इसलिए भक्तजनों की भीड़ अधिक थी। दोपहर का भोजन परोसने के ज़िम्मेदार ब्रह्मचारी ने मदद के लिए अपनी पर्णशाला में साथ ठहरे ब्रह्मचारी को बुलाया। वह ध्यान कर रहा था, सो मदद करने नहीं गया। अम्मा को इसकी खबर मिली। यह जानकर वह ब्रह्मचारी सबेरे से अम्मा की नज़र से बचता चल रहा था। अब अम्मा के पीछे बैठा था। रह रहकर अम्मा पीछे मुड़कर देखती थीं। अम्मा को सिर उठाकर देखने में असमर्थ ब्रह्मचारी सिर झुकाये बैठा है। उसकी मानसिक स्थिति समझकर अम्मा बोलीं-

अम्मा- 'बच्चो, अम्मा को तुम लोगों से कैसी-कैसी उम्मींदें हैं, जानते हो? तुम्हें सूर्य बनना है न कि जुगनू। जुगनू सिर्फ अपनी ज़रूरत के लिए रोशनी फैलाता है, ऐसे न होना। केवल निःस्वार्थ भाव की अभिलाषा तुम्हें करना चाहिए। मरते समय भी तुम्हें दूसरों का उपकार करने तैयार रहना चाहिए।'

'बच्चे इस पर ध्यान दें कि जो कोई भी काम करें वह दूसरों

के लिए भी सहायक हो। अगर यह संभव नहीं हो तो इसका खयाल रखें कि हमारे काम कम से कम दूसरों के लिए असुविधाजनक न हो। अपना हर चिंतन, वचन और कर्म दूसरों को कष्टदायक न होकर लाभदायक हो, इसके लिए प्रभु से की जानेवाली प्रार्थना ही यथार्थ प्रार्थना है। हमें अपनी उन्नति से बढ़कर दूसरों की उन्नति के लिए प्रार्थना करने में समर्थ होना चाहिए। ऐसे मन का स्वामी हो जाना ही सबसे बड़ी उन्नति है। अन्य के दुःख को अपना दुःख और सुख को अपना सुख समझना ही यथार्थ भगवद्भजन है। ऐसा भजन करनेवाले अपने को सबमें देखते हैं। शांति व समाधान का संसार उन्हीं के लिए होता है।'

अम्मा मौन हो गयी। वह दृष्टि अनंतता में जमी रही। कीर्तन का समय हो गया। अम्मा बच्चों को लेकर कलरिमंडप पर पहुँचीं। गृहस्थ भक्त रामकृष्णन् नायर ने एक कीर्तन रचकर समर्पण किया था। अम्मा वह कीर्तन गाने लगीं। एक ब्रह्मचारी ने कलरिमंडप के भीतर रखा तानपूरा लाकर अम्मा के पास रख दिया। अम्मा ने उसमें सुर मिलायी। सभी ने अम्मा के साथ कीर्तन गाया। अम्मा की सन्निधि में सभी सबकुछ भूल गये।

कर्णों के कर्ण हो, मन के मन हो
नेत्रों के नेत्र हो विराजती अम्मा!
प्राणों के प्राण तुम ही हो
जीवन का जीवन तुम्हारी अन्तःसत्ता है।
आत्मा के आत्मा, लहरों के लिए जैसे सागर
पराविद्या की परागति स्वरूपिणि अम्मा
अमृतात्मा मौक्तिक! आनन्द सत्ते!
श्रीमहामाये! ब्रह्म भी तुम हो।
तुम्हारे सामने अम्मा
नयन स्थिर हो जाते हैं
मन निश्चल हो जाता है
शब्द मौन हो जाते हैं।
जो विचार करता है कि

उसने तुम्हें देखा है वह तुम्हें नहीं देखता।
बुद्धि से परे हो विराजती महेशी।
सूर्य स्वयं न ज्वलित हो, चंद्रतारे भी
अम्मा, तुम्हारे तेज से सब ज्वलित होते।
एक धीर विवेकात्मबोध से ही
परमतत्त्व विश्रांतिमार्ग पर चलेगा।

कीर्तन संपन्न हो गया। रात्रि के भोजन के कुछ समय पहले कुछ क्षण ध्यान। ध्यान के क्षणों में भी अम्माकी ऊँगलियों से छिड़ी तानपूरे की ध्वनि मन में गूँज रही हैं।

सिर्फ एक धीर को प्राप्त करने योग्य वह कैवल्यधाम! क्या हंसो की चाल से चले कौवे के समान ही हमारा प्रयत्न निकलेगा? अंतरात्मा से अम्मा का दृढ़ स्वर सांत्वना दे रहा था।

"बच्चों के लिए अम्मा है न?"

१९८६ जून ११ बुधवार

शरणागत परित्राण परायणा

समय रात के दो बजे। एक ब्रह्मचारी कलरिमंडप पर यों ही जलती बत्तियाँ बुझाकर, अपने हाथ में लिये बैठने का आसन और चद्दर बरामदे पर रखकर रात को समुद्र तट पर गया और वहाँ ध्यान के बाद लौटा आ रहा है। सोने के पहले कलरिमंडप के उत्तरी भाग में बाहरी बरामदे पर सोये हरिकुमार पै को जगाना है। उन्होंने बताया था कि उन्हें दो बजें ध्यान के लिए जगाना। चार बजे सब को जगाने की घंटी बजाने का दायित्व भी 'पै' का है। पर्णशाला को चलते ब्रह्मचारी ने देखा कि वेदान्त विद्यालय के बरामदे पर दो आदमी बैठे हैं।

उन्होंने उठकर विनय से कहा- 'अम्मा का दर्शन करने आये हैं।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा बारह बजे ही अपने कमरे में गयी हैं। मैं समुद्रतट को जाने लगा तो अम्मा सीढ़ीयाँ चढ़ रही थीं।'

आगत- 'हम जब यहाँ पहुँचे तब बारह बज चुके थे।'

पीछे पैरों की आहट सुन उन्होंने मुड़कर देखा। अम्मा हँसती हुई पास आ रही थीं। दोनों आगंतुकों ने आश्चर्य और आदर से अम्मा के चरणों पर साष्टांग प्रणाम किया।

अम्मा- 'बच्चे कब पहुँचे?'

भक्त- 'अम्मा के कमरे में जाने के कुछ क्षण बाद हम पहुँचे। बहुत व्यथित थे कि आज अम्मा को देख नहीं पायेंगे।'

अम्मा- 'आँखों में नींद ने प्रवेश किया ही था कि एकाएक बच्चे सामने खड़े प्रतीत हुए। जल्दी उठकर आ गयीं। क्यों बेटा, बच्ची की तबीयत ठीक है न?'

भक्त- 'परसो उसका ऑपरेशन तय हुआ है। कुछ उलझन हैं। अम्मा के अनुग्रह का ही आसरा है। हम उसी के लिए आये हैं।'

अम्मा- 'बच्चों ने इतनी देर कैसे की? क्या गाड़ी खराब हो गयी?'

आगत लोग- 'हाँ अम्मा। दोपहर को निकले थे। रास्ते में गाड़ी खराब हो गयी। उसको ठीक कराते देर हो गयी। इसीलिए विलंब हुआ। वरना अधिक से अधिक आठ बजे हम यहाँ पहुँचते।'

अम्मा- 'बेटा चिंतित न हो। बैठो बच्चों।' अम्मा उनका हाथ लिए कलरि के बरामदे पर बैठ गयीं। वे उनके साथ वहीं देर तक बातें करती रहीं। उसके बाद उठकर कलरि के भीतर गयीं और कुछ भस्म लेकर उन्हें प्रसाद दिया। 'बेटी को बताना कि चिंतित न हो। अम्मा साथ हैं।' दोनों ने अम्मा को और एक बार प्रणाम किया।

चार बजे की घंटी गूँज उठी।

अम्मा- 'बेटे, अब चलें तो पाँच बजे की गाड़ी मिलेगी।'

अम्मा उन्हें दूसरे पार पहुँचाने का दायित्व एक ब्रह्मचारी को सौंपकर अपने कमरे की तरफ चलीं।

आगत लोगों ने आश्रम के प्रांगण से बाहर कदम रखते हुए सजल आँखों से मुड़कर देखा। सीढ़ीयाँ चढ़ते हुए अम्मा ने अचानक मुड़कर देखा और अभयदायक मंदहास किया।

शीतल प्रभाती पवन चला। वे बाहर और भीतर शीतलता का अनुभव करते हुए घाट की तरफ चले। प्रभाततारा कायल के जल-वितान पर ज्योति बिखेर रहा था।

१९८६ जून १३ शुक्रवार

अम्मा कार्यालय के सामने की सीढ़ीयों पर बैठी हैं। चारों तरफ कुछ लोग बैठे हैं। एक ब्रह्मचारी एक आश्रम शाखा के वर्तमान समिति के सदस्यों को बदलकर नये लोगों का चयन करने की आवश्यकता पर अम्मा को समझा रहा था। अम्मा ने सब बातें सुनने के बाद कहा- 'अम्मा का ध्येय लोहा और जंग दोनों को स्वर्णमय बनाना है। स्वर्ण को फिर से स्वर्ण बनाने की ज़रूरत नहीं है।' ब्रह्मचारी फिर से कुछ कहने लगा।

अम्मा- 'बेटे, बातें धीरज से सुनो। अम्मा ने उन्हें समिति का सदस्य बनाया है न? बेटे को सोचना चाहिए कि अम्मा का कोई इरादा होगा। मैंने पहले अपने को सीखा। फिर सारे संसार को सीखा। उसके बाद ही इस वेष में निकली हूँ। अम्मा को मालूम है कि उन्हें किस रास्ते से चलवाना है। अम्मा ने लाखों लोगों की तकलीफें और व्यथाएँ देखी हैं। और किसी को इतनी व्यथायें सुनने का मौका नहीं मिला होगा। अम्मा ने कितने ही लोगों का चरित्र परिवर्तन देखा है। उन्हें समिति से हटा दें तो वे किसी का उपकार किए बिना जीवन बिताएँगे। समिति में रखें तो आश्रम के कुछ काम तो संभालेंगे। वे उतनी सेवा तो करेंगे। उसका पुण्य भी उन्हें मिलेगा। खाली आलसी रहने से यह अच्छा है न? अम्मा उनसे आज्ञा मनवाना जानती है।'

'वे जिस प्रकार से काम करेंगे उसके अनुसार अंतःकरण शुद्धि होगी। मोक्ष का मार्ग खुलेगा। उन्हें सड़क पर फेंक देना संभव नहीं। उनकी रक्षा का दायित्व हमारा है। हमारा ध्येय यह है कि सभी भक्त होकर शान्ति अनुभव करें। यह अभिलाषा हमारे अन्तरंग में हो तो हम उनके कई अपराध करने पर भी क्षमा कर उन्हें सही रास्ते पर लाने की कोशिश करेंगे।'

'यह ज़रूरी नहीं कि सभी लोग सज्जन हों। दो-तीन लोग होंगे। उन्हें हम पूर्णतः तिरस्कृत करें तो वे फिर से गलती करेंगे। इसलिए हम विवेकी लोगों को पहले उनके स्तर पर उतरना चाहिए। इसके बाद वे सिर्फ़ आध्यात्मिक प्रगति को लक्ष्य करके आगे बढ़ेंगे। कोई दो-तीन भूलें करने से उन्हें बेकार बताना, उन्हें हटाना, ऐसा नहीं

करना चाहिए। अम्मा यह नहीं कहती कि बेटे की पूरी बात गलत है। कई लोग शाखाओ के लिए धन इकट्ठा करते हैं। कुछ लोग जमा किए पैसे का एक चौथाई हिस्सा ही आश्रम में देते हैं। अम्मा को पता है, पर न जानने का अभिनय करती है। अम्मा उन्हें अपनी भूल सुधारने का मौका देती है। फिर भी नहीं सीखते और अपने स्वभाव में परिवर्तन नहीं लाते तो वे स्वयं यह काम छोड़ चले जाते हैं। उन्हें भेजने की ज़रूरत अम्मा को नहीं आ पड़ी है। भूल करनेवाले भी हमारे भाई हैं न? आज उनमें सही विवेक उदय नहीं हुआ है तो हम उसके लिए भगवान से प्रार्थना करें। इससे हमारा भी लाभ होगा। हमारे मन विशाल होंगे।'

ब्रह्मचारी प्रणाम कर पीछे हट गया। एक ब्रह्मचारी चिंताविवश होकर अपने हाथ से अनजाने मूँछों पर ताव दे रहा था। अम्मा ने ध्यान दिया।

ब्रह्मचारियों के लिए अनुशासन

अम्मा- 'हाथ मूँछ से हटा लो। ब्रह्मचारियों के लिए ऐसी बुरी आदत ठीक नहीं। ब्रह्मचारी को एक जगह बैठने के बाद बिना कारण शरीर या हाथ-पाँव हिलाना नहीं चाहिए। हाथ हिलाना, पाँव हिलाना, मूँछ सहलाना आदि साधक के योग्य बातें नहीं हैं। साधक को निश्चल होने की कोशिश करनी चाहिए।'

एक ब्रह्मचारिणी ने आकर अम्मा को सूचित किया कि आश्रम की कई तश्तरियाँ और गिलास गायब हैं।

अम्मा ने कहा- 'आश्रम के सारे गिलास और सारी तश्तरियाँ ले आओ। कहीं कोई बाकी छूट न जाए। सब लाना।'

प्रत्येक ब्रह्मचारी को अपने उपयोग के लिए एक गिलास व तश्तरी दी है। वे उन्हें अपनी पर्णकुटी में सुरक्षित रखते हैं।

पास बैठें लोगों से अम्मा ने कहा- 'ऐसी बातों में बच्चे ज़रा कम ध्यान देते हैं। खाने के बाद बर्तन इधर-उधर डाल देने से कुछ नष्ट हो गये। उसके बाद प्रत्येक अंतेवासी को नाम लिखाकर एक एक गिलास व थाली दी। उनमें भी कुछ दिखायी नहीं देते।

किसी एक की थाली खो जाए तो नहीं देखते कि किसकी है, बगलवाले कमरे की थाली ले आयेंगे। उस कमरे का व्यक्ति थाली लेने जाएगा तब थाली नहीं मिलेगी। क्या करें? फिर झगड़ा खतम कराने अम्मा को जाना पड़ेगा। (अम्मा हँसती है।) इनकी बात छोटे बच्चों से भी बदतर है।'

ब्रह्मचारी थाली व गिलास ले आये। अम्मा गंभीर हो गईं।

अम्मा- 'एक बात। आगे कोई अपनी थाली को छोड़ दूसरे की थाली लेकर भोजन के लिए न आवें। अथवा यदि थाली नष्ट हो भी जाए तो स्पष्ट बताना सीखना चाहिए। अपनी बात के लिए कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए। चाहें प्राण भी चले जाएँ। आगे किसी की लापरवाही से बर्तन कही डालकर नष्ट हो जाएँ तो अम्मा भोजन नहीं करेंगी। इसका बच्चों को खयाल रहे।'

कुछ ही क्षणों में सारे गिलास और थालियाँ अम्मा के सामने लाई गयी। अम्मा ने उन्हें गिनकर हिसाब लगाया। गिलास व थाली में काफी कमी दिखायी देती है।

अम्मा- 'बच्चों, तुम्हारी लापरवाही से इतना नुकसान हुआ है न? यहाँ तरह तरह के लोग आते हैं। बर्तनों को जहाँ-तहाँ लापरवाही से डाल दें तो लोग ले जाएँगे! चुराने का मौका देकर बाद में क्यों अभियोग लगावें। तुम्हीं को डाँटना हैं जो चुराने का मौका देते हो। रोज़ निकालते बर्तनों को उसी दिन गिनकर हिसाब करें तो क्या ऐसा होता? तुम लोग पैसे की कीमत नहीं जानते। इसलिए कितना ही नुकसान हों तो तुम्हारा क्या?'

'अम्मा बड़ी कठिनाई झेलकर बड़ी हुई। अम्मा को एक एक पैसे की कीमत मालूम है। चाय बनाने के लिए लकड़ी के अभाव में अम्मा को कष्ट हुआ है। अभाव जानने के कारण अम्मा एक छोटा टुकड़ा भी नष्ट होने नहीं देगी। लकड़ी का टुकड़ा देखने पर अम्मा को वह मामूली लकड़ी का टुकड़ा नहीं लगता। अम्मा उसके उपयोग के बारे में सोचेगी। कीमत पर सोचेगी। बच्चे उसे रास्ते पर पड़ा देखें तो पैर से ठोकर देकर दूर फेंक देंगे। लकड़ी को पानी में भीगने से नष्ट होते देखने पर नहीं सोचते कि सुखाकर रखना चाहिये। उसे मामूली लकड़ी बताकर ठुकराना अम्मा के बस

की बात नहीं। बच्चों क्या हम पाँच पैसे का सिक्का फेंक देंगे? नहीं। क्योंकि वह पाँच पैसे हैं। उस पाँच पैसे से क्या जलावन की लकड़ी का छोटा टुकड़ा मिलेगा? चूल्हा जलाने के लिए सूखी लकड़ी न हो तो कैसे कुछ पकाएँगे? हाथ में सैंकड़ो रुपये भले ही हो तो भी जलाने के लिए लकड़ी ही चाहिए न? बच्चो इस प्रकार हर चीज़ के फायदे और दाम पर सोचना चाहिए। तब कोई चीज़ नष्ट कर देने की बात नहीं सूझेगी।

अस्पताल जाकर देखो। सुई लगाने के लिए दवा नहीं। बाहर खरीदने एक या दो रुपया चाहिए। उतना पैसा न होने से कई बीमार घंटों तक दर्द से तड़पते हैं। सुई लगाने पर दर्द कम होगा। पर उसके पैसे न होने से दर्द से तड़पना पड़ता है। वहाँ दो रुपये की कीमत कितनी बड़ी है। ऐसे कितने ही बीमार लोग हैं। अम्मा ने ऐसे कितने ही रोगियों को देखा है जो वेदना शामक गोली खरीदने के पैसे पास न होने से दर्द के मारे छटपटाते हैं। बच्चों, प्रत्येक काम करते समय इन व्यक्तियों की बात सोचनी चाहिए। ईश्वर सर्वव्यापी है। दर्द से तड़पनेवाले भी ईश्वर की संतान हैं। हमारे भाई-बहन हैं। उनको देखने से हमारे मन में यथार्थ श्रद्धाभाव बढ़ता है। जब तुम एक रुपया लापरवाही से खर्च करते हो तब दूसरे के लिए दस घंटे दर्द झेलने की परिस्थिती बनाते हो। यह याद रखना। उस गरीब के दुःख के कारण तुम हो। तुम्हारा वह काम संसार के लिए पीने का पानी जमाकर रखी हुई टंकी में गंदगी ड़ालने के समान है। इस छोटी बात के ज़रिए अम्मा उस रोगी का स्मरण करती है। तुम्हारे बरबाद किये पैसे से एक रोगी के लिए दवा खरीद सकते हो। इन सब से बढ़कर तुम इस असावधान व्यवहार से वह लकड़ी नष्ट कर रहे हो जो तुम्हारे भीतर एक हीरा ढ़ाल सकती है।'

अम्मा ने एक ब्रह्मचारिणी को बुलाया।

अम्मा- 'आज से बर्तनों का दायित्व तुम्हें सौंपती हूँ। सबेरे ज़रूरी संख्या में गिलास व थालियाँ गिनकर परोसनेवालों को सौंपना होगा। रात को उन्हें गिनकर वापस लेना होगा। जो गये सो गये। आगे किसी में कमी हो तो सजा तुम्हें मिलेगी।'

'आज प्रत्येक वस्तु से हम जो सावधानी दिखाते हैं वही हमें ईश्वर से घनिष्ठ बनाती है। आज हम प्रत्येक बाहरी काम में जो सावधानी बरतते हैं वही भीतर की संपत्ति को सुरक्षित करती है। इसलिए मेरे बच्चों, प्रत्येक बात में सावधानी से आगे बढ़ो। अम्मा छोटी चीज़ों से बड़ी को देखती है।'

अम्मा ने रसोईघर से उत्तरी अहाते की ओर चलते हुए रास्ते में एक तरफ दृष्टि ड़ाल थूका। वह थूक एक जंगली साग के पत्ते पर पड़ी। अम्मा ने पौधों को बचाकर ही थूका तो भी पत्ते पर गिरी। तुरंत अम्मा ने एक मग में पानी लेकर पत्ता धोया। उसके बाद उसी पौधे के नीचे अपने हाथ धोये और मग वापस दिया। नल के होने पर भी अम्मा मग में पानी लेकर हाथ-मुँह धोया करती हैं। नल खोलने पर पानी ज़रूरत से ज़्यादा निकल जायेगा। जो भी काम अनावश्यक मात्रा में किया जाता है वह अधर्म है। जो काम करना है वह न करना भी अधर्म है। कोई अम्मा से अगर पूछे कि धर्म क्या है तो अम्मा बताएगी कि ज़रूरी काम ज़रूरी वक्त पर ज़रूरी ढ़ंग से करना ही धर्म है।'

इस तरह कई बातें सोचने पर भी अंतरंग में छोटासा संदेह उठा- थूक गिरने के कारण अम्मा क्यों पत्ते को धोने, पोंछने चलीं? क्या इसकी ज़रूरत है?

आगे बढ़ते हुए अम्मा ने कहा- 'वे भी जिन्दा हैं।'

चारों तरफ का हाल क्षण भर देखने के बाद अम्मा ने भोजनशाला में प्रवेश किया। वहाँ ब्रह्मचारी रात के भोजन के लिए कसावा(एक केरलीय कंद) का छिलका छीलकर काट रहे थे। अम्मा भी बच्चों की मदद के लिए काम में शामिल हुईं।

ब्रह्मचारी और परिवार के सदस्य

ब्रह्मचारी हरि ने संवाद प्रारंभ किया- 'घर से कई पत्र आए हैं। एक का भी उत्तर नहीं भेजा। क्या कुछ लिखना है अम्मा?'

अम्मा- 'बेटे, प्रारंभ में हमें पत्र नहीं लिखना चाहिए। हम उन्हें लिखे तो वे जवाब देंगे। हम फिर से लिखेंगे। अगर लिखने की

बड़ी इच्छा हो तो, माँ-बाप बीमार पड़े तो उन्हें सांत्वना देते हुए दो पंक्तियाँ लिखना। मातापिता को परमात्मा पर समर्पण करते हुए समर्पण भाव से पत्र लिखो। अम्मा तुम्हें बंधन में नहीं डालेगी। घर से आये पत्र बारंबार न पढ़ना। बात समझकर छोड़ देना होगा। उसमें घर का कुशल समाचार और गाँव का हालचाल ही होंगा। हम पत्र में वे बातें पढ़ेंगे तो हमारे मन में अनजाने चंचलता आएगी। बच्चों को हमेशा सोचना चाहिए कि हम क्यों आये हैं।'

'बीमारी बढ़ने से एक व्यक्ति को अतिदक्षता विभाग में रखा है। उससे घर का दुःख एक एक कर कहते जावें तो क्या दशा होगी? रोग बढ़ेगा और आदमी मरेगा। उसी प्रकार अब हमारी चिकित्सा जारी है। अब बड़ी सावधानी ज़रूरी है। किसी भी परिस्थिति में न थकता, विचलित न होता मन मिल जाए तो उसके बाद कोई समस्या नहीं उठेगी। तब तक नियंत्रण ज़रूरी है।'

'आज तुम लोग पेड़ की छाँव में बढ़ते पौधों के समान हो। यमनियमों का पालन करना ही पड़ेगा। अगर घरवालों को देखने कोई नहीं, वे बड़ी दुर्दशा में हैं तो हम जाकर उनकी ज़रूरी सेवा-शुश्रूषा करें। उनकी सेवा ईश्वर सेवा की तरह करें। उसके बदले तुम मन में यदि संबंध बढ़ाते चलोगे तो तुम्हारा आश्रमवास बेकार होगा। न तुम्हारा लाभ है न घरवालों का। घरवालों से संबंध तोड़ने में असमर्थ हों तो घर पर ही उनकी सेवा करते रहना ही उत्तम है।'

'हम चाहे गाँव न जावें, तो भी घरवालों के पत्र से गाँव के हालचाल और घर की तकलीफें सब सुनने को मिलती है। फिर हमारा मन पूर्णतः उन्हीं पर केंद्रित होकर सोचेगा। 'घर पर सब लोग कष्ट में होंगे।' हमारे अनजाने ही अवचेतन में यह विचार आ गया। हमारे इस 'कष्ट' चिंतन से क्या उनका कोई लाभ है? नहीं। साधना के एक स्तर तक हम पहुँचे तो बाद में हमारे संकल्प से उनका लाभ होगा। आज वह भी नहीं है। उनके दुःख में दुःखित होने से हमारी कमाई शक्ति भी नष्ट होती है।'

'घरवाले अगर खत लिखते भी हैं तो हमें उन्हें प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। नाव को खूँटे से बाँध रखने के बाद डाँड़ चलावें तो

दूसरे पार हम नहीं पहुँच पायेंगे। नारियल के पेड़ से फल के झड़कर नीचे गिरे बिना उससे नारियल का पौधा अंकुरित नहीं होगा। इस ममता से हम ईश्वर से दूर जाते हैं। न हमारा लाभ है, न उनका। मित्रों व बंधुओ से ममता पालते हुए साधना करने से हम आगे बढ़ नहीं सकते। तीन औंस तेल लेकर सौ बर्तनों में डाले तो आखिर एक में भी बचा नहीं रहेगा। पात्र में कुछ चिकनाहट ही बचेगी। दूसरे से नाता और नाते से उठते विचार के कारण साधना से प्राप्त हमारी सारी शक्ति नष्ट हो जाती है। आज अन्य किसी बात पर ध्यान दिये बिना एकांत में साधना करे तो मित्र व बंधु ही क्या, सारे विश्व की रक्षा करने की शक्ति हम पा सकेंगे।'

ब्रह्मचारी- 'परन्तु घरवालों के कष्ट सुनने पर क्या दुःखित हुए बिना रह सकते हैं?'

अम्मा- 'बेटे, आध्यात्मिक जीवन चुन लेने के बाद सब कुछ परमात्मा पर समर्पित करके पूर्ण शरणागति से आगे बढ़ना चाहिए। टंकी में पानी भरते हैं तो सारे नलों में पानी एक समान मिलेगा। उसी प्रकार ईश्वर को प्यार करना सबको प्यार करना है। कारण यही की ईश्वर ही सब में अंतर्यामी के रूप में समाये हुए हैं। घरवाले आवें तो उन्हें देखकर प्रेम से, प्यार से मुस्कुराना, आदर से प्रणाम करना, दो मधुर शब्द कहना। इतना कर सकते हो। इससे अधिक मना है। समझना चाहिए कि ईश्वर उनका काम देख लेंगे। हमारे मन में वह समर्पण भाव होना चाहिए। वैसे भी क्या हम उनकी रक्षा करते हैं? क्या हममें उसकी शक्ति है?'

ब्रह्मचारी- 'घरवालों से संबंध तोड़ने की बात को इतना महत्त्व देने का कारण क्या है?'

अम्मा- 'बेटे, भूमि जैसे अन्य वस्तुओ को अपनी ओर खींचती है, वैसे घरवाले हमारे मन को बड़ी तेज़ी से खींच लेते हैं। वह खून के रिश्ते की खासियत है। एक साधक में सब को समभाव से देखने की शक्ति होनी चाहिए। सबसे संबंध छोड़ने पर ही हम अपने स्वरूप को समझ सकेंगे। मेरे पिता, मेरी माता, मेरा भाई

आदि नाता हमारे खून में घुला-मिला है। उसे हटाये बिना हममें विशालता नहीं आएगी। हमारी साधना सफल नहीं होगी। नाव को खूँटे से बाँधकर खेना जैसा है।'

ब्रह्मचारी- 'ठीक है अम्मा, मैं कुछ नहीं लिखता। जिज्ञासा से पूछा था।'

अम्मा- 'यदि परिस्थिति ऐसी हो कि लिखे बिना रहना संभव नहीं तो दो-तीन वाक्य लिख सकते हो। विशेष ध्यान देना कि वे वाक्य आध्यात्मिक बातों पर हों। वे वाक्य पढ़कर उनके मन ज़रा ही सही, स्वच्छ हो जाएँगे। हममें से एक व्यक्ति आध्यात्मिक पथ पर चले तो माता, पिता व संपूर्ण परिवार के मन को बदल सकेंगे। उन्हें हमेशा अच्छी बातें ही लिखनी चाहिए। यहाँ रामकृष्णन् का निवास उसके घर के कई लोगों को अब पसंद आने लगा है। रामकृष्णन् से सहयोग करते करते उन्हें जीवन में आध्यात्मिकता की आवश्यकता अनुभव हो गयी है।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा ने कहा कि घरवालों से ममता नहीं चाहिए। किंतु क्या ममता के बिना सेवा कर सकेंगे? किसी भी काम को अपना समझकर करने पर ही वह अच्छे ढ़ंग से कर पाते हैं न?'

अम्मा- 'आध्यात्मिक जीव की सेवा भी उसकी साधना है। उसका ध्येय सारे बंधनों से मुक्त होना है। उसका ध्येय पूर्ण स्वतंत्रता है। उस लक्ष्य की सिद्धि के लिए आवश्यक मनःशुद्धि एवं निःसंगता पाने के लिए वह सेवा करता है। यदि ईश्वर के प्रति प्रेम व समर्पण हों तो 'मेरा' के विचार के बिना ही अच्छे ढ़ंग से कर्म कर सकेंगे। सोचना चाहिए कि हम करेंगे, फल प्रभु की इच्छा पर निर्भर है। हमें ऐसा दिल पाना चाहिए कि दूसरे जब काँटे फेंके तब उत्तर में मोगरे के फूल बिखेरें और ज़हर के बदले में खीर खिलावें। सेवा का ध्येय ही ऐसा दिल पाना है। सब को ईश्वर-रूप में देखते हुए सेवा करनी चाहिए। हमारा हर काम ईश्वर पूजन हो जाए। तब हर काम ईश्वर मंत्र के तुल्य होगा।'

ब्रह्मचारी- 'इसी प्रकार की सेवा घरवालों के लिए करने में क्या गलती है?'

अम्मा- 'ऐसा मन मिल जाए तो उसके बाद कोई समस्या नहीं है। किंतु अभी हमें घरवालों के प्रति ममता है। इसलिए उनके लिए हम जो काम करते हैं उन्हें ईश्वरार्पित सेवा के रूप में देखना अब कठिन है। दूसरों के समान उनसे बिना ममता के सहयोग करना प्रारंभ में असंभव है। अपने घर एवं घरवालोंसे संबंध का होना सहज है। इसे हटाना कठोर अभ्यास से ही संभव है। इसीलिए कहते हैं कि साधक को प्रारंभ में घर से दूर रहना चाहिए। ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम व संबंध आ जाने पर हम किसी से संबंध नहीं रख सकेंगे।'

'बीज जब धरती के नीचे पूर्णत: जाय तभी उससे अंकुर निकलेगा। अंकुर के निकलने के लिए छिलका टूटना चाहिए। उसी प्रकार साधक का शरीर बोध नष्ट हो जाना चाहिए। मेरे पिता, मेरी माँ, मैं, मेरा आदि बदलकर सबकुछ तुझसे है ऐसा भाव आना चाहिए। साधक का ऐसा मन होना चाहिए।

अम्मा कसावा के छिलके समेटकर सानी की नांद में डालने को कहकर उठीं। अम्मा की अमृतवाणी सुन अनुगृहीत ब्रह्मचारीगण अपने अपने काम में प्रवृत्त होने उठे।

१९८६ जून १५ रविवार

अम्मा भक्तों के साथ पर्णशाला में। एकदम तेज की बारिश है। इसलिए भीड़ कम है।

अम्मा- (हँसतें हुए) 'यहाँ बच्चे कहते हैं- भगवद्गीता परिवर्तित करके लिखनी चाहिए। भगवान ने कहा- 'जो सब का त्याग करके मेरे पास आते हैं उनके लिए मैं हूँ।' वे कहते हैं कि यहाँ उलटी बात है। बच्चों का कहना है कि अम्मा गृहस्थ भक्तों से अधिक प्रेम करती है। क्या दीपक को रोशनी की ज़रूरत है? अंधेरे को रोशनी चाहिए। धूप से आनेवाले को ठंडा पानी चाहिए। अम्मा यहाँ के बच्चों से कहती है- गृहस्थाश्रमी लोग गरमी में छटपटाते हैं। तुम लोग शीतलता में ही रहते हो। तुम्हें कोई भी परेशानी हो तो पास अम्मा है। इसलिए दौड़े आकर बता सकते हो। दूसरे ऐसे नहीं। वे कितनी ही व्यस्तता के बीच समय निकालकर अम्मा के पास आते हैं। उस समय अगर उन पर ध्यान न दें तो वे टूट

जाएँगे। तुम लोग पूरा भौतिक संसार त्यागकर केवल अम्मा के साक्षात्कार के लिए आये हो। दूसरे ऐसे नहीं। उन्हें घर का काम, बच्चों का काम, नौकरी, सब देखना पड़ता है। इन सबके बीच आध्यात्मिक बातों के लिए समय निकालना पड़ता है। दायित्वों ने उन्हें जकड़ रखा है। उसे उतनी शीघ्रता से तोड़ना कठिन है। विराग निरंतर साधना से ही जमेगा। आग पर खड़ा होना है। झुलसने से बचना भी। गृहस्थाश्रमी का जीवन उस प्रकार का है। कांटों के उपर चलना है, कटने से बचना भी। पैरों पर चप्पल भी नहीं। यही गृहस्थाश्रमियों की स्थिति है। चप्पल का मतलब बंधन-विहीनता है। वह उन्हें नहीं आया है। इसलिए उन्हें सांत्वना देना हमारा धर्म है। इतना सुनने के बाद वे आगे कुछ नहीं कहेंगे।' अम्मा फिर से हँसी।

एक युवक अम्मा के पास बैठा है। नाम सुधीर है। पाँच वर्ष पहले वह एम्.एस.सी. परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। घर पर बूढ़ी माँ की सेवा के लिए और कोई नहीं था। उसने इसलिए कोई नौकरी पाने की कोशिश नहीं की। आसपास के छात्रों को ट्यूशन देकर ज़रूरी खर्च के पैसे कमाता रहा। माँ के मौत के बाद वह आध्यात्मिक विषयों से कुछ कुछ जुड़ गया। कुछ दिन वह साधना व सेवा में दिन बिताता रहा। मगर सही मार्गदर्शन के लिए एक गुरु के न होने से आध्यात्मिक जीवन अधिक दिन कायम नहीं रख सका। वह उसे उबाऊ लगने लगा। साथ ही भौतिक बातों में रुचि भी कम होती गई। अब पूर्णतः व्यग्र है। वह अम्मा का दर्शन करने तीन दिन पहले आया। आश्रम में कुछ दिन रहने की इच्छा प्रकट की। अम्मा ने अनुमति दी। पहले दिन की उदासी दूसरे ही दिन दूर हो गयी। अब काफी स्फूर्ति है। वह आश्रम के कामों में श्रद्धापूर्वक भाग लेता है। सुधीर अच्छा गाता भी है। उसने थोड़े से दिनों में कई आश्रम कीर्तन गाना सीख लिया।

सुधीर ने अम्मा से पूछा- 'अम्मा, क्या ईश्वर के प्रति आस्था होने पर ही सेवा संभव है?'

अम्मा- 'बेटा, ईश्वर पर आस्था रखनेवाला ही निष्काम सेवा ठीक से कर सकता है। अगर किसी के अपराध को उसका अज्ञान

समझकर क्षमा करने की क्षमता है तो ईश्वर के प्रति आस्था ज़रूरी नहीं है। यदि कोई ईश्वर के प्रति आस्था के बिना ही निष्काम सेवा कर सके तो हम उसको प्रणाम करेंगे।'

सुधीर- 'अम्मा, ध्यान का उद्देश क्या है?'

अम्मा- 'आज हमारे भीतर कितने ही प्रकार के विचार उभर आते हैं और मन को दूषित करते हैं, उन्हें एक विषय पर दृढ़ता से केंद्रित करके मन को स्वच्छ बनाने के लिए ध्यान किया जाता है। हम शुद्ध वर्षाजल के समान हैं। किंतु वह मानों मोरी में पड़ा है। बारिश का पानी मोरी में पड़ने पर गंदा हो जाता है। हमें उसे फिर से नदी से मिलाकर शुद्ध बनाना है। साधना उसी प्रकार की क्रिया है। यद्यपि हम शुद्ध आत्मा हैं तथापि प्राकृत लोक में बंधे रहने से हम में दूषित वासना भरी रहती है। नित्यानित्य विवेक से उसे शुद्ध कर लेना चाहिए। ध्यान से मन शुद्ध होता है। शक्ति भी प्राप्त हो सकती है।'

संवाद समाप्त कर के अम्मा ने सुधीर से एक गीत गाने को कहा। सुधीर ने गाया-

कारुण्यमूर्ति तमालवर्ण!
नेत्र खोलो
दुःख निवारक हो तुम!
ताप दूर करते, ताप दूर करते
जग में आश्रय तुम हो
कमल नयन हे मणिवर्ण!
नित्यपूजा के पुष्प हैं
मेरे अश्रुकण! कृष्ण!
अंधेरे में टटोल रहा हूँ
मानस मोहन गोपाल!
चौदह भुवनों में भरे हे श्रीधर
नयन खोलो, ताप दूर करो!

एक युवती अम्मा के समीप बैठी ध्यान कर रही है। उसको लक्ष्य कर अम्मा ने कहा- 'यह बेटी भी आश्रम में प्रवेश कराने

अम्मा से आग्रह कर रही है। आई तो फिर जाने का नाम नहीं लेती। विवाहित है। पति के घरवाले इस बेटी के बच्चे को भी नहीं दिखाते। अब कहती है कि न तो पति चाहिए न ही बच्चा। अम्मा ने कहा- और कुछ दिन सबर करो। यह विराग निराशा से उत्पन्न है। तत्त्व ग्रहण करने के कारण अंतरंग से निकला विराग नहीं। तत्त्व को अपनाने के बाद विराग का उदय होना चाहिए। नहीं तो आश्रम जीवन में दृढ़ नहीं रह सकेंगे।'

भक्त देवी की परीक्षा लेता है

दोपहर के भोजन की घंटी बजी। दो तीन लोग दर्शन पाने शेष हैं। उन्हें भी दर्शन देने के बाद अम्मा भक्तों को लेकर भोजनशाला में आयीं। अम्मा ने स्वयं भक्तों को दोपहर का भोजन परोस दिया। सब के भोजन पूरा करने तक ज़रूरी चीज़ें देते हुए अम्मा वहीं पर खड़ी रहीं। उसके बाद सीढ़ी पार कर बाहर गई। दो कदम रखा। अम्मा शीघ्र वापस भोजनशाला में आईं। एक भक्त ने अपनी थाली के पास चावल का एक कौर बनाकर रखा था। किसी इशारे के बिना वह कौर अम्माने मुँह में डाल लिया। उसे देखते ही वह भक्त भावविभोर हो गया। 'काली माँ, काली माँ...' जपता रहा। आँसू की अविरत धार बहती रही। अम्मा उसके पास बैठ सिर और पीठ पर वात्सल्यभाव से सहलाते रहने के बाद अपने कमरे में गईं।

अम्मा का यह अनोखा व्यवहार सकारण था। वह भक्त बंगाल से कारोबार के सिलसिले में कोचिन आया था। वहाँ के एक मित्र ने अम्मा के बारे में बताया। अम्मा के दर्शन क्रम के विषय में मित्र की बतायी बातों ने उस देवीभक्त को आकृष्ट किया। उसने सोमवार को कलकत्ता लौटने के पहले अम्मा के दर्शन करने का निश्चय किया। सबेरे मित्र के साथ आश्रम को चला। पर्णशाला में अम्मा को पहली बार देखा। अम्मा जब भोजन परोस रहीं थीं, तब उसने एक कोर तैयार कर पात्र के पास रखकर मन में सोचा- 'अम्मा काली माँ हो तो यह कौर लेकर खाएँगी। अगर ऐसा हो

तो अम्मा का देवी भाव देखने यहाँ ठहरुँगा। नहीं तो भोजन के बाद लौटूँगा।'

अम्मा भोजन परोसने के बाद बाहर निकलने लगीं तो वह भक्त बहुत व्यथित हुआ। मन में अंधेरा सा छा रहा था। किंतु क्षणों के भीतर अम्मा वापस आईं। उस भक्त का तैयार कौर लेकर खाया तो उस भक्त के मन का नियंत्रण टूट गया। भीतर छाये काले बादल आँसू बन गये। बाँध टूट गई। अश्रुधारा बरस पड़ी। वह भक्त देवीभाव दर्शन के बाद कल ही जाएगा। उसके साथ आया मित्र आज ही लौटेगा।

अम्मा शाम को साढ़े चार बजे तक भंड़ार में पहुँची। वहाँ सफाई में लग गयी। कुछ ब्रह्मचारी साथ हैं। नीलकंठन और कुंजुमोन पानी में भीगते हुए आश्रम के उत्तरी भाग का बाड़ा बाँध रहे हैं।

अम्मा ने पुकार कर कहा- 'बच्चों, भीगो मत।'

'परवाह नहीं, अम्मा अभी काम पूरा हो जायेगा।'

वे और तेज़ी से काम करने लगे। यह देख अम्मा ने कहा- 'अम्मा के लिए समर्पण भाव से खुशी से काम करने पर पानी में भीगने पर भी तुम्हें कोई बीमारी नहीं होगी। जो अनमना होकर दूसरों के लिए काम करने का उपक्रम करते हैं उनकी बात ऐसी नहीं है।'

बारिश से बचकर खड़े कुछ ब्रह्मचारी शरम के भाव से परस्पर को देखते रहे।

अम्मा ने एक ब्रह्मचारिणी को जलावन की लकड़ी बटोर रखने का दायित्व दिया था। उसने उसमें भूल की। अब ज़रूरी लकड़ी न होने से खाना पकाने में बड़ी कठिनाई महसूस हो रही थी। दूसरी ब्रह्मचारिणी ने अम्मा से शिकायत की।

शिष्यों को बुरा-भला कहती अम्मा

अम्मा- 'अम्मा ने गत दिन उस बेटी से लकड़ी बटोरने की बात कही थी। फिर भी लकड़ी लाई नहीं। तब उस बेटी की भयभक्ति क्या रही? अम्मा नहीं कहती कि कोई अम्मा का सम्मान

या आदर करे। नाव बनाते समय उसमें लचीलापन लाने के लिए लकड़ी को गरम करते हैं। लकड़ी टेढ़ी बने तभी नाव बनाई जा सकती है। उसी प्रकार भय व भक्ति होने पर ही हम सुधरेंगे। किसी के प्रति भय व भक्ति होनी चाहिए। अगर वह नहीं तो हमारा 'अहं' ही बढ़ेगा। हम बढ़ नहीं पायेंगे। विनय और आज्ञाकारिता के भाव ही साधक को आगे बढ़ाते हैं।'

अम्मा को डाँटते देखा तो दूसरी ब्रह्मचारिणी और दोष मढ़ने लगी।

अम्मा- 'बेटी, उस बेटी ने आज्ञाकारिता में भंग किया। सो ठीक है। मगर उस बेटी पर गुस्सा नहीं करना चाहिए। किसी को हम डाँटें, दोष मढ़े, दोनों विद्वेष से नहीं होना चाहिए वरन उस व्यक्ति के उन्नति को लक्ष्य बनाकर होना चाहिए। उल्टे यदि हम द्वेष या ईर्ष्या से वैसा करते हैं तो हम उसकी गलती से भारी गलती खुद करते हैं। उससे हमारा मन अधिक दूषित होता है। यह साधकों के बिलकुल योग्य नहीं है। अन्यों की सिर्फ भलाई देखने के लिए हम साधना करते हैं। उसी के ज़रिये हमारी बुराई नष्ट होगी। अगर हम प्रेम से उनकी केवल भलाई को लक्ष्य करके डाँटते हैं तो वह उन्हें गलत से सही की ओर ले चलेगी। पर दोषी ठहराने के लिए इल्ज़ाम लगावें तो वह हमारे मन को दूषित करेगा। उन्हें अधिक गलती करने की प्रेरणा देगा। विद्वेष बढ़ाएगा। वह नहीं करना चाहिए। बच्चों को किसी की गलती नहीं देखनी चाहिए। कोई किसी पर इल्ज़ाम लगाते बात करे तो हम उसकी गलती को देखे बिना सही को ही दिखाना चाहिए। जो दोष बताने आते हैं उन से पूछना चाहिए- 'आप उन्हें दोषी बताते हैं। मगर क्या अमुक अच्छी बातें उनमें नहीं हैं?' तब दोषारोप करनेवाले अपने आप रोकेंगे। फिर हम से कहने नहीं आयेंगे। इससे हम भी सुधर जायेंगे। दोष ढूँढ़नेवालों की प्रकृति दूर करने में मदद भी मिलती है।'

'लोगों के मांस और मदिरा खरीदने से ही व्यापारी आगे भी उनका व्यापार करते हैं। उसी प्रकार दूसरों की चुगली सुनने आदमी न मिलें तो कान भरनेवाले अपनी प्रकृति बदलेंगे।'

कीर्तन का समय हो गया। अम्मा कलरिमंडप पर पहुँचीं। कीर्तन प्रारंभ हुआ।

मूसलाधार बारिश। प्रदोष के शिवतांड़व पर ढ़क्कानाद की तरह बादलों की गरज सुन पड़ती है। जलवर्षा की श्रुति के अनुसार अम्मा की भजनगान सुधावर्षा भी सुनाई देने लगी।

१९८६ जून १८ बुधवार

बच्चों को रोते देखना चाहती अम्मा

समय ग्यारह बजे। अम्मा ध्यान कक्ष में बैठी हैं। सारे ब्रह्मचारी पास हैं। अम्मा बच्चों को साधना में कम ध्यान रखने के कारण बुरा-भला कह रही थीं। आखिर अम्मा ने सब को लक्ष्य करके कहा- 'मेरे बच्चों, तुम ईश्वर को पुकारते रोओ। अम्मा तुम्हारे प्रति द्वेषभाव से बुरा-भला नहीं कहती। अम्मा का मन तुम लोगों के प्रति प्रेम से लबालब भरा है। उसे बाहर प्रकट करूँ तो तुम्हारी उन्नति नहीं होगी। और एक बात। अम्मा जब बुरा-भला कहती हैं तब तुम लोगों के पाप अम्मा में आ जाते हैं।'

'बच्चों, बाहरी प्रेम से बँध जाना नहीं चाहिए। भौतिक संसार में जीनेवालों को बाहरी प्यार प्रकट करना चाहिए। तभी दूसरे समझ सकेंगे। उलटी बात हो तो परस्पर स्पर्धा होगी। शांति नष्ट होगी। भौतिक जीवन में सब की शांति दूसरों के बाहरी प्यार में रहती है। मगर आध्यात्मिकता में बात ऐसी नहीं है। अपने भीतर ही आनंद प्राप्त करते हैं। बाहरी प्रेम में फँस जाने पर अपने भीतर की सत्ता का पता नहीं कर सकते। खास अपनी ज़मीन खरीदकर घर बनाने पर ही स्वतंत्र रूप से जी सकते हैं। नहीं तो कर्ज़ देनेवाले परेशान करेंगे। दूसरों से तकलीफ होगी। अपने नाम पर ज़मीन का पट्टा हों तो किसी के सबूत माँगने पर भी पट्टा दिखा सकते हैं। उसी प्रकार तुम्हें अपने में ही आनंदित होते देखने में ही अम्मा की खुशी है। अन्य वस्तुओं के भरोसे और अम्मा के बाहरी प्रेम से बँधे बढ़ते देखकर अम्मा को तकलीफ होती है। कारण यह कि तुम्हें कल दु:खित होना पड़ेगा।'

'अम्मा अगर अधिक स्नेह दिखावे तो वह भी समस्या है। तुम बाहर की अम्मा को ही देखोगे। मगर अम्मा क्रोध दिखावे तो तुम सोचोगे- 'हे भगवान, मैंने कौन सा अपराध किया? अम्मा की इच्छा के अनुसार कार्य करने की शक्ति दो।' तुम अपने ही भीतर देखोगे। आत्मा से बंध जाओगे। अम्मा इस कान से हज़ारों लोगों का दुःख सुनती है। वे बाह्य स्नेह में भ्रमित होने के कारण दुःखित हैं। कोई अन्य किसी को अपने से बढ़कर प्यार नहीं करते।'

'अम्मा के अनेक बच्चे हैं। तुम अम्मा के बाहरी स्नेह से ही बंधे रह जाओ तो अम्मा के दूसरे किसी व्यक्ति से स्नेह प्रकट करने पर तुम्हें ईर्ष्या हो सकती है। फिर तुम्हारे मन में तकलीफ होगी। अब तुम अम्मा को जो देखते हो वह पात्र के जल में दिखते फूल का प्रतिबिंब जैसा है। उस फूल को कभी हम अपना नहीं बना सकते। वह परछाई है। सत्य का साक्षात्कार करने के लिए सत्य को खोजना ही पड़ेगा। प्रतिबिंब पर निर्भर न रहकर सत्य का ही आश्रय ग्रहण करना होगा। तत्त्व समझकर अम्मा से स्नेह करना चाहिए। जब सही आदर्श को अपनाकर हम आगे बढ़ें तो हमारा मन बाह्य वस्तु से नहीं बंधेगा। अम्मा की इस छाया में खड़े खड़े तुम्हें अपने भीतर देखने का प्रयत्न करना चाहिए।' उसी से आनंद सदा अनुभव कर सकोगे।'

'मेरे बच्चे जब एकाग्रता के लिए कष्ट नहीं झेलते तब दुःख होता है। तुम्हें ईश्वर को पुकार पुकारकर रोना चाहिए। ईश्वर को पुकारकर रोने से ही मन शीघ्र एकाग्र होगा। ईश्वर के प्रति भक्ति के बिना कुछ भी संभव नहीं। भक्त मुक्ति की भी कामना नहीं करेंगे। मुक्ति से भी बड़ी है भक्ति! भगवद्प्रेम से वे सदा आनंदित रहते हैं। फिर मुक्ति की क्या ज़रूरत? इस संसार में जीवित रहते समय ही सदा आनंद मिले तो दूसरे जगत के विषय में क्यों सोचें? भक्ति के सामने मुक्ति (हाथ की उँगली की नोक दिखाकर) इतनी ही है।'

इस बीच एक ब्रह्मचारी ने अम्मा के बर्तन में काफी लाकर रखी। अम्मा ने थोड़ी सी काफी पी। बाकी काफी ले अम्मा उठीं। गिलास से अम्मा प्रत्येक ब्रह्मचारी के मुँह में कुछ कुछ डालती

गईं। काफी डालने के साथ प्रत्येक के कान में धीरे से बताया- 'बच्चों, ईश्वर को पुकारते रोओ। ईश्वर को पाने के लिए रोओ।'

सबको प्रसाद देने के बाद अम्मा पहले की बैठक पर बैठ गईं। सब को ध्यान का निर्देश देकर अम्मा ने कहा- 'बच्चों, तपते हृदय से प्रार्थना करते हुए मन को बाहर कहीं भटकने दिये बिना परमात्मा से बाँधो। यह कहते प्रार्थना करो- हे परमात्म चैतन्य! मेरे हृदय दर्पण का पर्दा आप हटा दें। मैं अपना सही मुख उसमें स्पष्ट देखूँ। मन कहीं भी जाये तो वापस इष्टमूर्ति के चरणों पर लौटना चाहिए।' सभी ब्रह्मचारी ध्यानलीन होने की कोशिश करने लगे। अम्मा के निर्देश मन में प्रतिध्वनित हो रहे थे। इसलिए ध्यान तुलनात्मक दृष्टि से आसान हो गया। स्थूल नेत्र से बाहर जिस समूर्त चैतन्य को देख रहे थे उसे अंतर्नेत्रों से मन के भीतर देख आनंदित होते हुए सभी निश्चल हो गये।

१९८६ जून २७ बुधवार

क्षणिक विराग

एक मास पहले एक युवक आश्रम में रहने की अभिलाषा से आया था। अम्मा सहमत नहीं हुईं। युवक ने हठ किया तो अम्मा ने कहा- 'बेटा, आध्यात्मिक जीवन कोई आसान काम नहीं है। ठीक विवेक और विराग के बिना उसमें टिका रहना कठिन है। जो लोग किसी भी विघ्न में लक्ष्यबोध छोड़े बिना रह सकेंगे वे ही आध्यात्मिक जीवन में विजयी निकल सकेंगे। बच्चे के दिल में अब भी परिवारवालों से ममता बची है। इसलिए अम्मा को इस बात पर शक है कि बेटा कब तक यहाँ रह सकेगा? फिर बच्चे की ज़िद हो तो कोशिश करो। अम्मा बाधा नहीं डालती।'

युवक आश्रम में रहने लगा। वह बड़ी निष्ठापूर्वक आश्रम के नियमों का पालन करता था। साधना में तीव्र विराग था। वह सब के मनलुभा हो गया। जब एक ब्रह्मचारी ने उस युवक के विराग की चर्चा की तो अम्मा ने कहा- 'बेटा, हम पौधे की डाली काटकर गाड़ते हैं तो पहले दो-तीन पत्ते अंकुरीत होंगे। उन्हें

देखकर यह न समझ बैठना कि पौधा जड़ पकड़ गया। वे पत्ते जल्दी झड़ जायेंगे। उसके बाद नये पत्ते निकलते हैं कि नहीं यह देखना है। नये पत्ते आवें तो समझ लो कि पौधा बढ़ेगा। वे जड़ के पकड़ने के बादवाले पत्ते हैं।'

गत सप्ताह उस युवक के पिता और भाई आश्रम में आये। पिता ने बेटे को बुलाकर कहा- 'बेटा, तुम्हारी माँ तुम्हें देखे विना बहुत ही दुःखित है। उसने खाना तक नहीं खाया है। हमेशा तुम्हारी बात ही करती है।' पिता के शब्द सुनकर पुत्र की आँखें सजल हो गयी।

'अम्मा, घर जाकर माँ से मिलकर लौटूँ?'

अम्मा- 'जैसे बेटे की इच्छा।'

अस्पताल में लेटने में झिझककर घर लौटते रोगी को दवा देकर बिदा करते डॉक्टर की तरह अम्मा ने कुछ शब्द यों जोड़े- 'घर जाने पर भी कुछ समय रोज़ जपना।'

पास बैठे ब्रह्मचारी ने अम्मा से पूछा- 'अम्मा कई लोगों के विषय में प्रारंभ में देख विराग बाद में नष्ट होता दिखता है। उसका कारण क्या है?'

अम्मा- 'अधिकांश लोग प्रारंभ में बड़े जोश से आते हैं। वह बाद में नष्ट होता दीख पड़ता है। किंतु उसे बनाये रखने में ही विजय है। प्रारंभिक भावावेश ज़रा घटने पर हम में जन्मों से जमी हुई वासनाएँ एक-एक करके उभर उठती हैं। ध्यान बाहरी बातों की तरफ अभिमुख होता है। वासनाओं को जीतने के लिए अच्छा त्याग और प्रयत्न चाहिए। प्रतीक्षित कठिनाईयों से अधिक कष्ट सहन करने पर अधिकांश लोग ऊब जायेंगे। साधना में प्रारंभ की सी प्रगति भी शायद नहीं दिखेगी। इससे भी निराशा होगी। किंतु जिसमें पूर्ण लक्ष्यचेतना है वह पराजय व कठिनाई की परवाह किये बिना लगातार प्रयत्न करेगा। ऐसे लक्ष्यबोध संपन्न व्यक्ति ही विराग को बनाये रख सकेंगे।'

अम्मा उठीं और चौके की तरफ चलीं। रसोईघर का उत्तरी दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल रही थीं तो अम्मा ने एक विदेशी भक्त के कपड़े धोने का ढ़ंग देखा। उन्हें हाथ से कपड़े धोने की

आदत नहीं। वे एक पूरा 'बार साबुन' पहले ही पत्थर पर चिपकाने के प्रयत्न में हैं।

अम्मा वह देखती हुई थोड़ी देर वहीं खड़ी रहीं। उसके बाद वे उस भक्त के पास गईं और कपड़ा उनसे लेकर साबुन का कपड़े पर प्रयोग स्वयं करके दिखा दिया। अम्मा के साथ जो ब्रह्मचारी था उसने अम्मा का दिया विवरण अंग्रेजी में अनुवादित करके सुनाया।

विदेशी भक्त इस बात पर बड़े खुश हुए कि अम्मा से कपड़े धोने का तरीका सीख सके। अम्मा ने पर्णशाला से जाते हुए देखा कि एक ब्रह्मचारी गेरुए कपड़े पहनकर खड़ा है।

'बेटा, अभी गेरुए वस्त्र नहीं पहनना चाहिए। हम गेरुए वस्त्र के लायक नहीं हुए है। अब तुम गेरुए को जहाँ कहीं देखो, उसकी पूजा करनी चाहिए। न कि पहनना। गेरुआ रंग शरीर को अग्नि में दहन करने का प्रतीक है। बेटा, यह वस्त्र देखने पर हमें ऋषि परंपरा का स्मरण करना चाहिए। हम एक व्यक्ति के माध्यम से उस पीढ़ी को, परंपरा को सम्मान देते हैं।'

बातचीत सुनते हुए वहाँ पहुँचे एक विदेशी भक्त को जब पता चला कि बातचीत गेरुए कपड़े की चल रही है तब उसने निवेदन किया कि मुझे भी गेरुए कपड़े दिये जायँ। अम्मा उत्तर में सिर्फ हँस पड़ीं। मगर विदेशी भाई ने फिर से अपनी माँग बड़ी गंभीरता से पेश की।

अम्मा ने कहा- 'यह दूकान से कपड़े खरीदकर पहनने के समान पहनने की चीज़ नहीं है। इसकी पक्वता पहले प्राप्त करनी चाहिए।' लेकिन इस ज़वाब से वह संतुष्ट नहीं हुआ, बोला- 'दूसरे पहन रहे हैं तो मैं क्यों नहीं पहन सकता?'

अम्मा- 'बेटे, बेटे ने अगर स्त्री की भूमिका नाटक में ली तो क्या इससे स्त्री बनोगे? एक स्त्री पुरुष की भूमिका करने से क्या पुरुष हो जायेगी? बेटा, गेरुए कपड़े पहनने, ओढ़ने से ही कोई साधु नहीं बनते। पहले मन को गेरुए रंग में रंगना होगा। उसके बाद बेटे को अम्मा गेरुए वस्त्र देंगी।' इसके बाद विदेशी के पास कोई तर्क नहीं बचा।

ब्रह्मचारी- 'कुछ लोग घरवालों से रूठकर गेरुए कपड़े पहनते हैं न?'

अम्मा- 'सही है। कुछ लोग घर से रूठकर चले जाते हैं। वे भूखा रहने की स्थिति आने पर भोजन के लिए गेरुए कपड़े धारण करते हैं। दूसरे कुछ लोग पत्नी के नाराज़ हो जाने पर उस निराशा से गेरुए कपड़े पहनते हैं। वह विराग अच्छा है। मगर सही ध्येय समझना चाहिए। उससे संबंध जुड़ना चाहिए। बिना उसके गेरुए कपड़े पहनने का कोई मतलब नहीं है। आजकल असली साधुओं को देखना कठिन है। पता करना चाहिए कि साधु किसी गुरुकुल से नियमानुसार गेरुए वस्त्र पाये हुए हैं कि नहीं। सही गुरु यों ही गेरुए कपड़े नहीं देते। लोगों की पक्वता भी देखते हैं।'

बिना सीखे परीक्षा पास करनी चाहिए

अम्मा पर्णशाला में पहुँचीं तो सभी नमस्कार करके उठ बैठे। पट्टांबी से आये एक भक्त परिवार ने अम्मा से संवाद प्रारंभ किया। गृहस्थ का नाम राजेंद्रन है। पैरलल कॉलेज में सिखाता है। पत्नी सरोजम सिलाई का काम करती है। उनके दो बच्चे हैं। बड़ा लड़का आठवी कक्षा में है, छोटी लड़की तीसरी में।

राजेंद्रन्- 'अम्मा, यह लड़की कुछ नहीं पढ़ती।'

सरोजम्- 'अम्मा, लड़की कहती है कि पढ़ने की ज़रूरत नहीं है। अम्मा पास करा देंगी।'

अम्मा ने लड़की को अपने समीप सरकाकर बिठाया। वात्सल्यपूर्वक उसे सहलाते हुए पूछा- 'बिटिया, अगर बिटिया नहीं पढ़ेगी तो सब लोग क्या अम्मा पर दोष नहीं लगायँगे? बेटी, पढ़े बिना पास कैसे होगी?'

बच्ची तुतलाती बोली- 'भैया पढ़े बिना पास हो गया न?' (सभी हँसते हैं।)

अम्मा- 'बेटी से किसने कहा कि भैया पढ़े बिना पास हुआ?'

लड़की- 'भैया ने कहा।'

सरोजम- 'अम्मा, पढ़ो कहने पर यह बच्ची यही कहती है कि भैया परीक्षा देने बैठा था तो अम्मा ने पास बैठकर सारे उत्तर बता

दिये। उसके बाद वह आकर बोला 'मैंने कुछ नहीं पढ़ा, अम्मा ने सब बता दिया।' (अम्मा हँसती हैं।)

राजेंद्रन- 'अम्मा, सच है कि उसने यों कहा। वह कुछ पढ़ाई नहीं करता। हमेशा खेलता है। किंतु परीक्षा में अच्छे अंक मिले। क्लास टीचर को उसके अंक देखकर अचरज हुआ।'

सरोजम- 'इसलिए अब यह छोटी भी कहती है कि अम्मा पास करा देगी।' (अम्मा हँसती हैं)

अम्मा ने बच्ची को प्यार से चुंबन दिया।

अम्मा- 'बेटी, नहीं पढ़ोगी तो अम्मा बेटी से नहीं बोलेगी। बताओ कि पढ़ूँगी।'

बच्ची ने मान लिया कि पढ़ेगी। अम्मा ने पास रखी पोटली से एक सेब लेकर बच्ची को दिया। सत्फलदायिनी अम्मा के हाथ से मिले उस सेब ने बच्चे के कोमल हृदय में हर्ष की लहरें लहरा दीं। उस प्यारे मुखड़े की मुस्कुराहट यही बता रही थी।

आध्यात्मिक और लौकिक

इसी बीच अम्मा के भक्त दामोदर मेनोन अम्मा को प्रणाम कर उठे। 'अरे, यह कौन है- दामूबेटा!' दामोदर मेनोन ने हँसतें हुए अम्मा के हाथों में अपना सिर टेका।

अम्मा- 'क्या बेटा कुछ दिनों से यहाँ नहीं था?'

दामू- 'दौरे पर था। अब बैंगलूर से आ रहा हूँ। घर नहीं गया। कायंकुलम् पर रेलगाड़ी से उतरा। विचार आया कि अम्मा के दर्शन करके घर जाऊँ।'

अम्मा- 'बच्चें सब ठीक हैं न बेटे?'

दामू- 'अम्मा के आशीर्वाद से सब ठीक है। अभी एक मित्र से मिलकर आ रहा हूँ। उसकी बात बड़ी करुणाजनक है।'

अम्मा- 'क्यों बेटा?'

दामू- 'उस बार उसे बैंगलूर में देखा। हम साथ काम करते थे। बीच में उसने इस्तीफा देकर संन्यास लेने गाँव छोड़ा। पाँच साल

पहले गाँव आया तो साधु के वेष में था।'

अम्मा- 'वह बेटा कहाँ रहता है।'

दामू- 'कहा कि ऋषिकेश के किसी आश्रम में रहता है। किंतु अब की बार मिला तो आदमी बिलकुल बदला था। न गेरुए कपड़े, न रुद्राक्ष या दाढ़ी मूँछ। बड़ा सुंदर। चार साल पहले संन्यास छोड़ दिया। आश्रम में बीच बीच में आती एक लडकी से प्यार हो गया। दोनों ने ब्याह कर लिया। अब बैंगलूर में रहते हैं। कोई छोटी नौकरी भी है। किंतु बातचीत से पता लगा कि वह दोस्त मन ही मन बहुत निराश है।'

अम्मा- 'बेटा, आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश करने के बाद वापस लौकिक जीवन में चले तो बाहरी कष्ट होगा, भीतर भी। जिस मन ने आध्यात्मिक चिंतन किया हो उसे लौकिकता में आनंद नहीं मिलेगा। अशांति ही फल है। साधना के फलस्वरूप शरीर के चारों ओर एक सूक्ष्म वलय बनेगा वह लौकिक भोगों का अनुभव करने में बाधक सिद्ध होगा। साधक की इष्टमूर्ति और अनुचर करुणावश कष्ट व दुःख उपस्थित कर देंगे। वे यही चाहते हैं कि वह उस अनुभव से अपने पुराने पथ पर लौटे। वे कष्ट वस्तुतः ईर्ष्या के, क्रोध के चिह्न नहीं, आशीर्वाद के चिह्न हैं। संपत्ति व सुख ज्यों-ज्यों बढ़ते हैं त्यों-त्यों उसका अहंकार बढ़ता है। वह गलती पर गलती करेगा। बारंबार जन्म लेना पड़ेगा। ईश्वर इसीलिए दुःख देते हैं कि ऐसी स्थिति न हो। वह इस संसार से अपने मन को निवृत्त कर दे।'

'जो मन अल्प मात्रा में ही सही, आध्यात्मिक तत्त्व समझ गया वह भौतिक से संतोष नहीं पा सकता। पहले जिस लड़की से प्यार किया उससे विवाह न करके दूसरी लड़की से विवाह करने पर उस पत्नी के प्रति कम ममता अनुभव होगी। मन उस पहली प्रेमिका पर जमा रहता है। उसी प्रकार आध्यात्मिक पथ पर गया मन बाद में भौतिक जीवन में पूर्णता पा नहीं सकता। इसके अलावा प्रारब्ध भी कष्ट देता रहेगा। विवाह जो कर लिया सो आगे साधना न छोड़ें, बस इतना ही।'

'सही ढ़ंग से गृहस्थी के धर्म को अपनाते बढ़ें, सही गृहस्थाश्रम

का धर्म पालन करते जिएँ तो थोड़ी बहुत अच्छी जिंदगी जी सकेंगे। साधना अभंग रूप से करें तो कठिनाइयों से बचकर जीवन में आनन्द अनुभव कर सकेंगे। जब ईश्वर से प्रेम हो तब मन भौतिक विषयों से छूटता जाएगा। अभिलाषाएँ कम होंगी। अभिलाषाओ के कम होने मात्र से ही शांति हो जाएगी। अभिलाषा ही दुःख है। आग हो तो धुआँ होगा ही। अभिलाषा हो तो दुःख भी होगा। अभिलाषा के बिना जीना भी संभव नहीं है। इसलिए सारी इच्छाएँ ईश्वर के माध्यम से हों।'

'साधना में भंग न हो तो आध्यात्मिक व भौतिक दोनों एक താललय की भाँति साथ साथ ले चल सकते हैं। समस्याओं से बच जायेंगे। यदि मोक्ष प्राप्ति को जीवन का ध्येय समझकर कर्म करते है तो वह उनकी रक्षा करेगा।'

'तथापि संन्यास का महत्त्व कुछ और ही है। संन्यास में हम विभिन्न सांसारिक बातों से चिंताकुल हुए बिना प्रभु का ही स्मरण व चिंतन करते आनंदपूर्ण जीवन बिता सकते हैं। यदि संन्यासी सेवार्थ कर्म करे तो भी बंधन न होने के कारण उसे वह बोझ ज़्यादा अनुभव नहीं होता।'

'एक बार एक संन्यासी चल रहे थे। एक व्यक्ति ने उनका अनुगमन करते हुए प्रश्न किया, 'बाबाजी, संन्यास माने क्या है?' साधु ने मुड़कर देखा तक नहीं। मगर अनुगमन करता आदमी छोड़ने तैयार नहीं। वह अपना प्रश्न दुहराता रहा। अचानक संन्यासी ने वहाँ खड़ा होकर अपने कंधे का झोला उतारकर सड़क पर रखा और आगे बढ़े। दस गज आगे बढ़ने के पहले फिर से प्रश्न आया, बाबा संन्यास माने क्या है? साधु मुड़कर खड़े हुए और बोले, क्या तुम ने मेरा झोला उतार रखना देखा नहीं? 'उसी प्रकार 'मैं' और 'मेरा' की भावना त्याग देना, अपनी निजी चीज़ों को त्याग देना, वही संन्यास है।' संन्यासी फिर आगे चले। अनुगमन करता भी छोड़ने तैयार नहीं। उसने पूछा- 'तो उसके बाद क्या करना चाहिए?' साधु शीघ्र लौट आये और सड़क पर छोड़ा अपना झोला उठाकर कंधे पर ड़ाल लिया और आगे चले। अनुगमन करनेवाला उसका मतलब समझ नहीं सका। उसने प्रश्न दुहराया।

चलते हुए साधु ने कहा- 'देखा नहीं? इस प्रकार विश्व का झोला उठाकर चलना।' किंतु सबका त्याग करनेवाले ही इस प्रकार विश्व का बोझ कंधे पर ड़ाल सकेंगे।'

'किसी जानवर के रक्षक को हमेशा उस पर ध्यान रखना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि वह कहीं भाग न जाय। अगर जानवर को खोल दें तो उसके साथ ही रहना चाहिए। नहीं तो वह भाग जाएगा। भोजन दे तो भोजन पूरा करने तक साथ खड़ा रहना चाहिए। सदा कोई न कोई दायित्व रहता है। मगर जो फुलवारी का पहरा देता है उसके लिए केवल फाटक पर खड़े होकर ध्यान देना काफी है। इसका ध्यान कर सकेंगे कि कोई फूल नहीं चुराते। हमेशा पुष्प की सुगंध का आनंद ले भी सकते हैं। भौतिक पथ पर जानेवाले का चित्त हमेशा उसे कष्ट देता रहता है। मन किसी में एकाग्र नहीं रहता। किंतु जो त्यागपूर्ण जीवन बिताता है वह उस जीवन का सुगंध व सौंदर्य अनुभव कर सकता है। न व्यथा है, न व्यस्तता। प्रारब्ध अगर हो तब भी समर्पण भाव के कारण वह दुःख अनुभव नहीं होता। वह दुःख भी समर्पण भाव के कारण दुःख प्रतीत नहीं होता। वह दुःख भी शांति की ओर ले चलती ईश्वर कृपा ही है।'

अम्मा ने आध्यात्मिक एवं भौतिक जीवन के स्वभाव का सूक्ष्म स्पष्टीकरण किया। श्रोताओ ने उसे सावधानी से सुना। वे अपने जीवन की एक स्पष्ट रूपरेखा का परिचय मन में लिए हुए उठे। यह अनुभव उनकी मुखाकृति से व्यंजित हो रहा था।

१९८६ जून २८ शनिवार

क्या श्रीकृष्ण चोर हैं?

पर्णशाला में बैठी अम्मा एक कृष्णोपासक ब्रह्मचारी से बहस में लगी है - 'तुम्हारा कन्हैया बड़ा चोर है। उसके माखन चुराने से ही दुनिया में चोरी का पेशा शुरू हुआ। कृष्ण ने की हुई शरारतें कितनी हैं?'

अम्मा की बातें सुनकर कृष्णभक्त ब्रह्मचारी से रहा नहीं गया।

मेरे कृष्ण अम्मा के बताये ढंग के व्यक्ति नहीं थे। यह बोलते ब्रह्मचारी की आँखें सजल थीं। अम्मा भी यही देखना चाहती थीं।

छोटे बच्चों की तरह दुःखाकुल ब्रह्मचारी के आँसू पोंछते हुए अम्मा ने कहा- 'क्या तुम इतने छोटे बालक हो? भगवान के प्रति तुम्हारी घनिष्ठता जानने के लिए ही अम्मा ने यह कहा। भगवान चोर नहीं, सत्य की मूर्ति हैं। उन्होंने दूसरों को खुश करने के लिए माखन चोरी आदि की थी। भगवान ने मख्खन के माध्यम से उनके हृदय चुराये थे। वह भगवान से ही संभव था। प्रभु ने अपने लिए कुछ नहीं किया। साथी गरीब ग्वालबालों के लिए चुराया। साथ ही गोपियों के मन को ईश्वर से बंधा रखना भी उनका लक्ष्य रहा था। गोपियों के मन दूध, दही व मख्खन की बिक्री तथा कमाई पर जमे थे। भगवान ने उन्हें चुराने के ज़रिए उनके मन को उन बंधनों से छुड़ाकर भगवान पर दृढ़ कराया था। अगर भगवान ने मक्खन लिया भी तो वे स्वयं उसे नहीं खाते थे। गायों को चराने चले ग्वालबालों को भूख लगी तो उन गरीबों की भूख मिटाने वे उन्हें मख्खन आदि देते। यों एक ही समय उन्होंने दो बाते साध्य की। साथी बालकों की भूख मिटाई और गोपियों को बंधन से मुक्त किया।'

'वस्तुतः भगवान ही असली नक्षलवादी हैं। वे यही कहते हैं कि धनियों से धन लेकर गरीबों को देना चाहिए। कुछ लोग आज एक दल के लोगों को नष्ट करते हैं। किंतु भगवान अपने काम से दोनों दलों के लोगों की रक्षा करते थे। यही उनका नक्षलवाद है।'

'आज के लोग कहते हैं कि पागल कुत्ते को जान से मार ड़ालना चाहिए। लेकिन भगवान कहते हैं कि उस पागल मन को सुधारना चाहिए। मारना इसका उपाय नहीं। मन का भलाई की तरफ परिवर्तन करना ही ज़रूरी है। भगवान ने जो विवाह किया वह भी अपनी इच्छा से नहीं। अपने प्रिय लोगों को खुश करने के लिए भगवान विवाह कर लेने की स्वीकृति देते थे। भगवान का ध्येय सब को आत्मा में रमण करवाना था। उसके लिए भगवान ने अनेक पथ अपनाये थे। इन्हें सामान्य बुद्धि से समझना कठिन है। सही तरीके से साधना करके मन को सूक्ष्म बनाकर मनन करने पर

ही भगवान के कार्य का तत्त्व ज़रा सा समझ सकते हैं।'

'बेटा एक भजन गाओ। अम्मा सुनेंगी।' ब्रह्मचारी के मुखमंड़ल पर मुस्कुराहट खिली। हृदय के राग से घुली नादधारा प्रवाहीत हो उठी -

नीलांजन नयन! नीरदवर्णा!
तुम ही गति मेरी सदा ही कृष्णा!
आप के सिवा
इस दास का कोई शरण नहीं, कृष्ण!.....
बालकुमारक लीलाओं से
श्यामल कोमल कृष्ण!
नारदतुंबरु नाद कुतुहल
मानस मोहन कृष्णा (नीलांजन.....)
कीर्तन नर्तन आर्ति विनाशन
शाश्वत भासुर कृष्णा
व्यथा से दूर वीक्षण दीजिए
साक्षीभावात्मक कृष्णा
माया मोहन मानव सेवित
पाद सरोज कृष्णा...
भूतलवास छुड़ा दे भगवन्
मोक्षप्रदायक कृष्णा..... (नीलांजन....)

गीत चल रहा था कि ब्रह्मचारी एक एक करके हार्मोनियम, मंजीरा आदि ले आ गए। कमरा लोगों से भर गया। बाकी ब्रह्मचारी बाहर बैठकर अनुगायन करने लगे। अम्मा कीर्तन पूरा नहीं कर सकीं। वें नयन छलछला गये। सारे ब्रह्मचारी पर्णशाला के सामने इकट्ठे हुए। थोड़ी देर बीती तो अम्मा के अश्रु भरे नयन धीरे से बंद हुए। अम्मा मुद्राबद्ध करों से निश्चल हो गयीं। महाभाव के अप्रमेय प्रभाव की एक तरंग अम्मा से उठीं। सारे हृदयों को जगाया। कुछ समय बाद अम्मा ने आँखें खोलीं। वे फिर से बंद हुईं। अम्मा स्वधाम से वापस लौटने कष्ट उठाती सी

लगीं। पूर्णतः बाह्य बोध वापस पाने में और काफी समय लगा। अम्मा ने दोनों हाथ जोड़ अपना चेहरा पोंछा। पहले भी एक दिन भजन के दौरान अम्मा समाधि में लीन हुईं। अम्मा घंटो बाद ही पूर्व स्थिति में आ सकीं। उस समय अम्मा ने कहा था- 'ऐसी स्थिति हो तो बच्चे कीर्तन गाते रहें। नहीं तो शायद इसी प्रकार महीनों तक रहेंगीं। नहीं तो अवधूत भाव में बदल सकती हैं।' यह बात स्मरण आने से ब्रह्मचारी अम्मा के भावमुक्त होने तक कीर्तन गाते रहे।

भावदर्शन

समय सायं छः बजे

मद्रास के एक भक्त सुब्रह्मण्यन् अम्मा के पास बैठे हैं। वे भावदर्शन की प्रासंगिकता जानना चाहते हैं।

अम्मा- 'बच्चों, लोग नामरूपों में जीते है। लोगों को सत्य की ओर ले जाने के लिए अम्मा को यह पोशाक पहननी पड़ती है। बेटे, मन नहीं है तो संसार नहीं। जब तक मन है तब तक नामरूप सब हैं। मन के अस्त होने पर कुछ नहीं। जो उस दशा में पहुँचे हैं उन्हें प्रार्थना या जप की ज़रूरत नहीं है। वहाँ न नींद जानी जाती है न जागरण। कुछ नहीं जानते। सब निश्चल है। किंतु उस दशा में पहुँचना चाहिए। उसके लिए ऐसी उपाधियाँ आवश्यक हैं।'

सुब्रह्मण्यन्- 'कुछ लोग अम्मा के बच्चों को आलिंगन करने की आलोचना करते हैं।'

अम्मा- 'बेटा, उनसे पूछना- क्या तुम इस उम्र में अपनी माता को गले लगा सकते हो? अगर सकते भी हो तो क्या आम सड़क पर ऐसा कर सकते हो? क्या किसी प्रकार की कोई झिझक होने से ऐसा नहीं होता? किंतु अम्मा में ऐसा कोई भाव नहीं। एक नन्हें शिशु से माँ का वात्सल्य है, न कि कामविकार। अम्मा को सब मन में बालक जैसे लगते हैं। हो सकता है, यह एक तरह की भ्रान्ति हो। चाहो तो तुम जेल में डाल सकते हो। किंतु यह

अम्मा का ढ़ंग है। कोई पूछे कि अम्मा दूसरों को क्यों गले लगाती हैं, तो वह अम्मा से निकलता एक प्रकार का स्वाभाविक कारुण्यभाव है। हवा के चलने पर पत्ता जैसे हिल उठता है वैसे ही तुम्हारे सामीप्य में वह सहज रूप से होता है। फल की मिठास जैसे उसकी प्रकृति हो गयी उसी प्रकार वह मातृभाव, कारुण्यभाव अम्मा का स्वभाव बन गया। अम्मा क्या करें? वह अम्मा को मिथ्या नहीं लगता। गाय का रंग काला हो, गोरा या भूरा, दूध का रंग सफेद ही है। उसी प्रकार आत्मा एक ही होती है। दो नहीं। जीवात्म भाव में स्थित लोगों के लिए नानात्व की प्रतीति होती है, बस्! अम्मा को वह भेदबुद्धि नहीं होती। इसलिए अम्मा किसी को स्त्री या पुरुष के भेदभाव से नहीं देख पाती।'

'आज संसार में निःस्वार्थ प्रेम की सबसे अधिक कमी अनुभव होती है। पत्नी को पति का दुःख सुनने या सांत्वना देने की फुरसत नहीं। पति के पास पत्नी का दुःख सुनने, समझने, मनाने की फुरसत नहीं। अपनी अपनी खुशी के लिए परस्पर प्यार करते हैं। इससे बढ़कर अपना सुख त्यजकर भी दूसरों को प्यार करनेवाले आज बिलकुल नहीं हैं। दूसरे के लिए प्राण देने का मन, समर्पण की भावना सहज रूप से किसी में दिखाई नहीं पड़ती। आज जो भाव दिखाई पड़ता है वह 'मैं तुम्हारे लिए' नहीं है उलटे 'तुम मेरे लिए' वाला है। परन्तु अम्मा से ऐसा नहीं होता।'

'दूसरे लोगों को अपनी दुनिया की दृष्टि से यह विचित्र लग सकता है। अम्मा का अपराध नहीं है। उनका पागलपन उस प्रकार का हो तो अम्मा का पागलपन इस तरह का है।'

'गाय चरानेवाला घास को देखता है। किंतु वैद्य की नज़र में वही घास दवा है। हर एक व्यक्ति अपने अपने संस्कार के अनुसार चीज़ों को देखता है।'

'एक बार एक गुरु और शिष्य तीर्थाटन करने चले। रास्ते में एक नदी पार करना पड़ा। एक कन्या नदी पार करने में असमर्थ खड़ी रो रही थी। उस कन्या के लिए नदी अधिक गहरी थी। गुरु ने और कुछ नहीं सोचा। कन्या को उठाकर कंधे पर बिठाया और नदी के दूसरे किनारे पहुँचाया। गुरु ने कन्या को नीचे उतारा और

शिष्य के साथ अपनी यात्रा जारी रखी। रात को भोजन के समय गुरु ने शिष्य के चेहरे में कुछ परिवर्तन पाया।'

गुरु ने उस पर ध्यान दिया- 'तुम्हें क्या हो गया?'

शिष्य- 'मेरे मन में एक संदेह है। संदर्भ जो भी रहा हो, गुरुदेव ने उस कन्या को कंधे पर उठाकर नदी पार की। वह क्या ठीक था?'

गुरु ने हँसतें हुए कहा- 'अच्छा, मैंने तो उस कन्या को नदी किनारे उतार दिया पर तुम तो अब भी उसे उठाये चल रहे हो।'

सुब्रह्मण्यन्- 'मैं इतने दिनों से साधना कर रहा हूँ। फिर भी ठोस अनुभव नहीं मिल रहा है। सो क्यों?'

अम्मा- 'दस सब्जियाँ एक साथ खाने पर क्या एक का भी स्वाद जानना संभव है? ईश्वरदर्शन पाने की एकमात्र धुन से आगे बढ़ो। अनुभव प्राप्त होगा।'

कुछ युवक अम्मा के दर्शन करने आ गये। अम्मा उनके साथ और कुछ समय तक आध्यात्मिक बातें करती रहीं। आखिर वे अम्मा को प्रणाम करके उठे।

एक युवक- 'अम्मा पर आस्था बनाये रखने का आशीर्वाद अम्मा हमे दें।'

अम्मा- 'बच्चों, विश्वास अंधा न हो। बात को अच्छी तरह परखकर ही निर्णय करना चाहिए। तुम लोग जवान हो। झटपट विश्वास न कर बैठना। ये सब जो देख रहे हो वह नहीं है अम्मा का स्वभाव। अम्मा पगली है। आँखे बंद करके विश्वास कर न बैठना कि अम्मा अच्छी हैं।'

युवक- 'अम्मा अच्छी है या बुरी? यह तय करने का अधिकार बच्चे को हैं।'

युवक के इन शब्दों ने पूरे माहौल को हँसी से गूँजा दिया। थोड़ी ही देर के सामीप्य ने उस युवक को अम्मा का कितना घनिष्ठ बनाया है! स्नेहसागर अम्मा से निकलती वात्सल्य तरंगे किसके हृदय को भावविभोर नहीं बनाते?

10

१०

१९८६ जुलाई १ मंगलवार

अपराधी भी अम्मा के बच्चे हैं

एरणाकुलम गयी अम्मा और ब्रह्मचारी मध्याह्न तक आश्रम वापस आ गये। आश्रम में अम्मा की प्रतीक्षा में खड़े भक्तजनों में अनेक लोग अम्मा के प्रवेश करते ही प्रणाम करने लगे। अम्मा विश्राम कक्ष में गये बिना उन्हें दर्शन देने के लिए पुराने वेदान्त विद्यालय के बरामदे पर बैठ गईं।

कल संपन्न स्वागत समारोह में अम्मा को पुष्पहार पहनाने की इच्छा से आये एक भक्त को आयोजकों ने अनुमति नहीं दी। उसके ओर इशारा करते हुए एक ब्रह्मचारी ने कहा- 'कल वे सज्जन बहुत दुःखी हुए। आखिर जब अम्मा ने उन्हें बुलाकर प्रसाद दिया तभी उन्हें कुछ राहत हुई। अगर अम्मा ऐसा न करतीं तो वे एकदम टूट जाते। वहाँ खड़े लोगों का पूछना है यदि ऐसे व्यक्ति अम्मा के पास आयें तो क्या जनता अम्मा पर इल्ज़ाम न लगाएगी?'

अम्मा- 'बेटे, कल तक उस बच्चे ने अनेक गलतियाँ की होंगी। मगर वह आज अम्मा के पास आया। हमें देखना चाहिए कि वह बच्चा आगे कैसा होगा। बच्चों, अंधेरे को रोशनी की ज़रूरत पड़ती है। अम्मा भी

अगर उस बच्चे को त्याग दे तो उसकी हालत कैसी होगी? अविवेक से अपराध करने पर भी वह बेटा अम्मा के लिए बेटा ही है। यहाँ गलती कौन नहीं करते। सही बात जानने के बाद फिर से गलती करना ही सबसे भारी गलती है। दूसरों की गलती को भूलाकर उन्हें भी प्यार करने के लिए ही आध्यात्मिक तत्त्व सीखते हैं न कि उन्हें ठुकराने। ठुकरा तो कोई भी सकते हैं। अपनाना ही कठिन है। हम अपने प्रेम से ही दूसरों को गलती से सही की ओर ले चल सकेंगे। एक आदमी को गलती करने के नाम पर ठुकरा दें तो वह हमेशा गलती ही करेगा।'

'वाल्मीकी मुनि भील थे। लूट-मार करके जीते थे। वे उसके रास्ते से आये मुनियों को जानसे मारकर संपत्ति लूटने चले। लेकिन ऋषियों ने माफ करके प्रेम-वर्षा की। उस दिन वे ऋषि उस व्याध पर करुणा न करते तो वाल्मीकी न हुए होते। जनता के अंधकार को दूर करता रामायण न रचा जाता। उन ऋषियों की करुणा ने वाल्मीकी और रामायण का सृजन किया। अतएव बच्चों को दूसरों का अपराध क्षमा करके प्रेम से सन्मार्ग का उपदेश देने तत्पर होना चाहिए। इसके विपरीत अतीत में किये अपराध को बारंबार सुनाकर उन्हें फिर से अपराध की ओर अग्रसर नहीं करना चाहिए। वह बेटा कल अम्मा से कह रहा था कि अम्मा का दर्शन करने तक आत्महत्या करने का एकमात्र विचार था। मगर आज वह बदल गया। अब जीने की इच्छा हो रही है। नींद भी ठीक आती है। मैंने सोचा कि रिश्तेदार हमेशा साथ देंगे। मगर उन्होंने आपतकाल में एक एक करके साथ छोड़ दिया। कई लोग अपने को मेरा रिश्तेदार कहना तक नापसंद करते हैं। परंतु आज मालूम हो गया कि ईश्वर ही नित्य और सत्य है। पहले ही ईश्वर का साथ लेता तो इतना दुःखी होना नहीं पड़ता।'

'बच्चो, हमें ईश्वर की ही शरण लेनी चाहिए। बिसिनसवाले भी हो, पर क्या चौबीस घंटों में एक घंटा ईश्वर के लिए खर्च नहीं कर सकते? ऐसे लोगों की बात ईश्वर स्वयं संभालेंगे। उन्हें कोई दुःख आवे तो इष्टदेव उनकी मदद करेंगे। ईश्वर उनके शत्रु के मन को भी बदलकर उनके अनुकूल बना देंगे। किंतु आज कौन ईश्वर को चाहता है?'

एक भक्त- 'आज मंदिर भी बड़ी दुर्दशा में है। मंदिरों की संपत्ति

अपहरण की जाती है। तमिलनाडु में एक मंदिर में चोरी करने आये लोगों ने उसमें बाधा ड़ाले पुजारी को मंदिर के भीतर ही मार ड़ाला। मंदिर की संपत्ति को पुजारी ही चुराते हैं ऐसे भी प्रसंग है। मंदिर के आय पर ही उनका गुज़ारा होता है। वे इस एकदम मामूली आय से कैसे जीवन बितायँगें? आज अधिकांश पुजारी भूखे रहते है।'

मंदिर में पूजा भक्ति से करनी चाहिए

अम्मा- 'बेटे, एक अच्छे भक्त को किसी बात की कमी नहीं पड़ेगी। जिसमें यथार्थ शरणागति की भावना है उसके सारे मामले ईश्वर देख लेंगे। मंदिर में पूजा करनेवाले बहुत से लोगों के मन में अभिलाषाएँ ही हैं। ईश्वर को ज़रा भी जगह नहीं दी गई है।'

'अम्मा तमिलनाडू के एक मंदिर में गई थी। वहाँ वन्दना कर रही थी तो पुजारी रेशे से अर्चना कर रहे थे। हाथ के नारियल का रेशा छीलते छीलते उनकी नज़र इस बात पर लगी थी कि भक्त कितने पैसे दे रहे हैं? उस पर ध्यान देने के कारण अर्चना के दौरान फूल चढ़ाने की जगह हाथ का रेशा चढ़ा रहे थे। ये देखती अम्मा 'अरे' पुकारती मंदिर के भीतर प्रवेश करने लगीं। पास खड़े सुगुणच्चन ने पकड़कर रोक दिया। पुजारी का भाग्य।' (सभी हँसते हैं)

भक्त- 'फूल और रेशे में ईश्वर को क्या फर्क है?

अम्मा- 'वाह! यदि वह प्रेम, भक्ति हो तो ईश्वर की अर्चना के लिए फूल की ज़रूरत नहीं, रेशा भी काफी है। किंतु वह समर्पणभाव होना चाहिए। ईश्वर हमारा हृदय देखते हैं। प्रेम से चढ़ावें तो रेशा भी ठीक है। लेकिन उस पुजारी का मन पैसे पर था। उनकी पूजा केवल पैसे के लिए थी। इसीलिए अम्मा को गुस्सा आया। ईश्वर ऐसी पूजा सहन नहीं करेंगे।'

'बेटे, श्रद्धा से ईश्वर की पूजा करो तो कभी भूखा रहने की नौबत नहीं आयेगी। पूजा सही आदर्श के अनुसार करनी चाहिए। पूजा को पैसा कमाने की नौकरी के रूप में नहीं गिराना चाहिए। ईश्वर पूजा को अंतःकरण शुद्धी तथा ईश्वरप्रेम बढ़ाने का उपाय समझना। ईश्वर की आराधना आत्मतत्त्व को प्रकट करने के लिए है। वह बाद में भिखारी

नहीं रहता, राजाधिराज बनता है। वह संसार को शान्ति देनेवाले आनंद स्रोत में बदलता है। जो ईश्वर को समझे बिना सुख की खोज में भटकते हैं, वे ही भिखारी हैं। हम हीरे का हार गले पर पहनकर उसे नकली पत्थर का हार समझ भीख माँगने चले लोगों के समान हैं। हम अपने भीतर की अनमोल संपत्ति के बारे में नहीं जानते। जो वह जानता है उसे कहीं भटकने की ज़रूरत नहीं पड़ती। जहाँ भी वह रहता है वहीं आनन्द होता है।'

'जो ईश्वरपूजा को नौकरी मानकर उसे बोझ समझता है वह भक्त नहीं है। उलटे किसी भी काम को ईश्वर पूजा माननेवाला ही भक्त है। जो ईश्वरपूजा को सिर्फ पेशा समझते हैं उन्हें जो तकलीफ दूसरे पेशे करने झेलते हैं वही झेलने पड़ते हैं। मंदिर की आमदनी कम हों तो ईश्वर को दोष देने के बजाय दूसरा काम ढूँढ़ लेना चाहिए। ईश्वर की पूजा धन के लिए नहीं होनी चाहिए, भक्ति के लिए होनी चाहिए। ऐसे लोगों को भगवान दुःखित होने नहीं देंगे। उनकी आवश्यक वस्तुओं का ईश्वर स्वयं प्रबन्ध कर लेंगे।'

'जो लोग मन्दिर की संपत्ति का अपहरण करते हैं उन्हें सख्त सज़ा ज़रूर मिलेगी। अगर दिन अच्छे हैं तो सज़ा तुरन्त नहीं मिलती, बस्! अम्मा वल्लिकाव के मन्दिर से संबंधित एक घटना जानती हैं। एक बार अम्मा 'अक्करा वीड़'(एक अंतरंग भक्त का घर) जा रही थी। आगे थोड़ी दूरी पर एक आदमी पेशाब करने खड़ा था। अम्मा हटकर खड़ी हुई। काफी समय बाद भी वह नहीं हट रहा था। उस रास्ते आये एक आदमी ने तब अम्मा को सारी बातें बतायी। उस आदमी ने मन्दिर की पूरी संपत्ति का हरण किया था। जो पुजारी मन्दिर की नित्यपूजा के लिए कुछ पैसे माँगने उसके पास गया तो उसे बहुत से अपशब्द सुनाये। मन्दिर की संपत्ति से वह धनी बन गया। बेटों को नौकरी वगैरह भी मिली। आखिर क्या हुआ, जानते हो? बेटों ने पिता को घर से खदेड़ दिया। जिस मन्दिर की संपत्ति का उसने हरण किया था आज वह उसीके बरामदे पर पड़ा रहता है। मन्दिर से मिलता प्रसाद खाकर जीता है। अब तो बीमार भी है। घंटों तक खड़ा रहने पर ही बूँद भर पेशाब निकलता है।'

भक्त– 'अम्मा, हिंदूधर्म का इतना अधःपतन क्यों हो गया?

अम्मा– हिंदू धर्मशास्त्र हमें सिखाता है कि हमारा कोई भी काम

ईश्वरपूजन के रूप में करना चाहिए। किंतु कोई उसका पालन नहीं करता। अन्य धर्मों की तरह ऐक्य, सेवा या व्यवस्थित आराधना नहीं है। अपने को 'हिंदू' कहते तो हैं, पर कोई हिंदूधर्म के तत्त्वों के बारे में कुछ नहीं जानते। मगर, अब हालत थोड़ी बहुत बदल रही है।'

भक्त- 'सुना है, सारा संसार हिंदूधर्म के अधीन आएगा।'

अम्मा- 'वह संभव नहीं लगता। अधिकांश लोग सनातन धर्म अपनायेंगे।'

दूसरा भक्त- 'यह हुए बिना नहीं रहेगा। कारण यह कि हर बात प्रयोग के द्वारा स्वीकार करनेवाले पाश्चात्य लोग अंत में तत्त्व से तर्कसंगत सनातन धर्म स्वीकार किए बिना नहीं रह सकते।'

अम्मा- 'प्रयोगों की सीमा होती है। विश्वास और अनुभव ही बुनियाद हैं। यह कहने में कोई मतलब नहीं कि सब पर परीक्षण के बाद ही विश्वास करेंगे। क्या ज़हर हाथ में मिलने पर उसको पहचानने के लिए ज़हर खा लेंगे? पहले आस्था होनी चाहिए।'

भक्त- 'आज अनेक लोग महात्माओं पर आस्था नहीं रखते। उनकी आस्था सिर्फ मन्दिर तक सीमित रहती है।'

अम्मा- 'शास्त्रों तथा आध्यात्मिक तत्त्वों का आवश्यक ज्ञान का अभाव ही इसका कारण है। एक दृष्टि से आदमी ने ही मन्दिर व मूर्ति का निर्माण किया है। मूर्ति की प्रतिष्ठा मानव ने की। मनुष्य उसकी पूजा करता है। मनुष्य ही उसकी वंदना भी करता है। फिर भी मानव के ईश्वरशक्ति पर आस्था नहीं है। किसी भी मन्दिर को उसमें पूजा करने वाले भक्तजन ही शक्ति देते हैं। एक महात्मा प्राणप्रतिष्ठा न करावें, कोई वंदना करने न जावें तो मन्दिर में कौन सी शक्ति है?'

भक्त जनों की भीड़ बढ़ने के कारण अम्मा पर्णशाला के भीतर चलीं। एक भक्त ड़ाब का बड़ा गुच्छा लिये आया। उसे पर्णशाला के बाहर रखकर आया और अम्मा को प्रणाम किया।

'हमारे घर के खास नारियल के पेड़ (चेंतेंड) में पहली बार निकले ड़ाब हैं। उसमें फल लगते ही सोचा था कि अम्मा को लाकर भेंट करना चाहिए।'

अम्मा- 'बेटा, यह लेकर जब बस में चढ़ा तब लोगों ने हँसी नहीं उड़ाई?'

भक्त- 'कोई हँसी उड़ायें तो मेरा क्या? मैं ने चुराया तो नहीं है। अम्मा के लिए मैं उपहास-परिहास सुनने तैयार हूँ। इन में से एक ड़ाब तोड़ लाऊँ?' अम्मा ने मान लिया। भक्त एक ड़ाब लिये रसोईघर की तरफ चला। भक्तों के साथ अम्मा की बातचीत जारी थी।

घर आश्रम होना चाहिए

भक्त- 'अम्मा, गृहस्थाश्रमी रहते हुए क्या कोई ईश्वर का साक्षात्कार कर सकता है?'

अम्मा- 'कर सकता है। मगर सही गृहस्थाश्रमी होना चाहिए। गृह को आश्रम मानना चाहिए। किंतु आज यथार्थ गृहस्थाश्रमी कौन है? सच्चे गृहस्थाश्रमी का किसी से कोई बंधन नहीं रहता। वह सबको ईश्वरेच्छा के रूप में देखता है। उसने अपना जीवन ईश्वर को अर्पण कर दिया है। जो भी काम करता है उससे कोई लगाव नहीं। जीवन में धर्म को प्रधानता देता है। परिवार में वह रहता तो है, पर पूरा मन ईश्वर के प्रति समर्पित होता है। वह पत्नी व पुत्रों की देखभाल और लोकसेवा में कोई कमी होने नहीं देता। वह उसे ईश्वर का दिया कर्तव्य मानता है। वह श्रद्धा से अपना कर्तव्य निभाता है। किंतु आज के लोगों की तरह उसमें आसक्त नहीं रहता।'

'तत्व को अपनाकर आगे बढ़ें तो घर में रहते हुए भी निरंतर साधना कर सकते हैं। मगर वह उतना सरल नहीं जितना सोचते हो। टेलिवि. जन ऑन करके उसके सामने बैठे हम काम करें तो हमारी दृष्टि टे. लिविजन पर पड़ेगी ही। अगर नही देखना है तो उतना विराग चाहिए। कारण हमारी वासना वही है। घर में सारी झंझटों के बीच में रहते हुए ईश्वर को पुकार सकना तक बड़ी बात है। अम्मा के पास आनेवाले कई गृहस्थ भक्त निरंतर ध्यान, जप और अर्चना करते हैं। वे अर्चना किए बिना भोजन नहीं करते, सोते नहीं हैं। ऐसे लोगों के बारे में सोचते समय हृदय भर आता है।' (ब्रह्मचारियोंसे)- 'तुम ब्रह्मचारी लोग अपने को पूर्णतया विश्व को समर्पण करने आये हो। मन को पूर्णतः ईश्वर से बाँध देना चाहिए। अन्य किसी चिंतन को जगह नहीं देना चाहिए। घरेलू बातें, गाँव की बातें सोचना तक वासनाओं का सृजन करता है। कोयले

के कमरे के पास बैठना ही काफी है, बैठनेवाले के शरीर पर कालिख लगेगी। उसी प्रकार, घर के लोगों से ममता और संबंध साधक के मन को पीछे की ओर खींचता है।'

अम्मा का देवीभाव दर्शन चल रहा है। कलरिमंड़प पर बैठे ब्रह्मचारी कीर्तन गा रहे हैं। प्रकृति भी निद्रा भुलाकर भजन गानालाप में लीन है। भक्तों की भीड़ कम नहीं। स्त्रियाँ और पुरुष मंड़प के दोनों तरफ से अम्मा को प्रणाम करने आगे बढ़ रहे थे। वे अपना दुःख भार अम्मा के श्रीचरणों पर समर्पण कर शीतल अंक में सिर टेके निर्वृति पाते, तीर्थ व प्रसाद ग्रहण कर संतुष्ट हो लौटते। अनगिनत बच्चों के प्रारब्ध के मलिन वस्त्रों की गट्ठर चरणोपहार के रूप में स्वीकार कर अम्मा पतितपावनी गंगा के समान स्नेहधारा बहाती पापों को धोती। सर्वभक्ष अग्निदेव के समान वासना तथा प्रारब्ध को भस्मसात करके बच्चों की अग्निशुद्धि करती पीठिका पर विराज रही हैं। भक्तों की भीड़ के बढ़ते बढ़ते अम्मा का मुख अधिक तेजोमय होता दिखता। ब्रह्मांड़कोटि का पालन करती ब्रह्मस्वरूपिणी का अधृष्य प्रभाव प्रकाशित करने के समय में भी अम्मा एक नन्हें मुन्ने की निश्छलता से हँसने और हँसाने का प्रसंग निकालती हैं।

दर्शनों के दौरान एक भक्त अपने चार-पाँच वर्ष के मुन्ने के साथ मंड़प में आये। उन्होंने अम्मा को दंड़वत प्रणाम किया। उसी समय उस मुन्ने को पिता की पीठ पर मुक्का मारने, कुर्ता खींचने और पिता की पीठ पर हाथी की सवारी करने की सूझी। उसने पिता की पीठ पर बैठकर हाथी की सवारी खेलने का भी प्रयत्न किया। अम्मा के सामने विनीत हो घुटने टेके खड़े पिता को देखकर बच्चे ने शायद सोचा कि हाथी खेलने पिताजी तैयार हैं। बच्चे का खेल देखकर अम्मा को भी मज़ा आया। अम्मा तीर्थ कमंड़लु की टोंटी से तीर्थजल बच्चे के मुख व शरीर पर ड़ालती रहीं। बच्चा पानी से बचने पीछे हटता। अम्मा कमंड़लु हटाती तो वह आगे बढ़ता। अम्मा पानी ड़ालती। बच्चा फिर से पीछे हटत. ा। ऐसा लीलाविनोद कुछ समय तक चलता रहा। यह दृष्य देखते जो भी खड़े थे उन सब के हृदय हर्षित हो उठे। वह शरारती बच्चा जब पिता के साथ बाहर आया तब तक वह अम्मा के गिराये तीर्थजल से करीब नहा चुका था।

आचरण आदत के अनुसार

दर्शन समाप्त होते होते एक बज गया। अधिकांश भक्तगण अम्मा को फिर से नमस्कार कर सोने गये। किंतु अम्मा, ब्रह्मचारी तथा एकाध गृहस्थ भक्तोंने दूसरे दिन के निर्माण कार्य के लिए ईंटें ढ़ोना शुरु किया। दिल्ली की एक युवती भी हाथ बँटा रही है। वह अपनी माँ के साथ पहली बार अम्मा को देखने आयी है। वह युवती ब्रह्मचारियों से बात करने लगी तो फिर समाप्त करने तैयार नहीं। यह ब्रह्मचारियों को पसंद नहीं आया। ईंट ढ़ोने के बाद अम्मा और बच्चे कलरिमंड़प के दक्खिनी आँगन पर आकर बैठ गये। ब्रह्मचारियों ने उस युवती की सीमा लांघती आज़ादी की शिकायत की।

ब्रह्मचारी- 'उसकी बातचीत हद को लांघती जा रही है। वह नहीं जानती कि कैसे बातें करनी चाहिए। बोलती है कि मुझे देखकर उसे अपने पति की याद आयी। यह सुनकर उसकी गाल पर थप्पड़ रसीदकर देने की इच्छा हुई।'

अम्मा- 'बेटे, वह उस युवती की अज्ञानवश दुर्बलता है। मगर तुम में ज्ञान की धीरता होनी चाहिए। जब परिस्थितियाँ आती हैं तब हमें अपने भीतर दृष्टि ड़ालनी चाहिए। अगर मन के कमज़ोर होने की संभावना है तो उससे हटना चाहिए। यदि हममें पूरी पक्वता आई हो तो हमें उन्हें उपदेश देना चाहिए। इसके बदले केवल द्वेष से लाभ नहीं है। उस युवती ने अपना संस्कार प्रदर्शित किया। तुम्हारा संस्कार यह होना चाहिए कि धीरज से सही मार्ग का उपदेश करके उसको सही रास्ते पर ले चलो। एक व्यक्ति को दंड़ देने के पहले हमें उसके संस्कार और जिन परिस्थितियों में उनकी परवरिश हुई है उसपर सोचना चाहिए। सही रास्ता दिखाने पर उस युवती का अज्ञान दूर होगा। उसे कोई आध्यात्मिक बात मालूम नहीं है।'

स्त्रियों से संपर्क

भक्त- 'श्रीरामकृष्णदेव कहते हैं कि साधक को स्त्रियों से बातचीत नहीं करनी चाहिए। स्त्रियों के फोटो तक नहीं देखना चाहिए। है न?'

अम्मा- 'जिसके गुरु हैं, उसे ड़रने की ज़रूरत नहीं है। गुरुं के आदेशानुसार जीना काफी है। इतना कठोर आदेश देनेवाले श्रीरामकृष्णदेव के शिष्य विवेकानंद ने क्या अमेरिका जाकर वहाँ स्त्रियों को शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया? किंतु साधक को आरंभिक दिनों में यथासंभव स्त्रियों से दूर रहना चाहिए। चित्र तक नहीं देखना चाहिए। उतना सावधान रहना चाहिए। साधना काल में विषय सुख को पूर्णत: त्यजकर एकान्त में रहना ही उत्तम है। बाद में गुरुसमीप्य में रहते हुए परिस्थितियों का सामना करना चाहिए। उसे भी साधना समझना चाहिए। प्रतिबंधों पर विजय पाना चाहिए। जिसे गुरु के प्रति समर्पण हो उसके लिए यह संभव है। किंतु जिसके गुरु नहीं हैं उसे बाहरी नियंत्रणों का कठोर पालन करना होगा। नहीं तो किसी भी समय उसका पतन हो सकता है।'

'पुरुष में भी स्त्रीत्व है। उसको जीते बिना हम लक्ष्य पर नहीं पहुँच सकते। स्त्रियों से मिलते समय सावधानी बरतनी चाहिए। किंतु ड़रकर दूर रहने से भी लाभ नहीं है। भय को दूर करना है। सब प्रतिबंधों को लांघने के मनोबल के बिना ईश्वर तक कैसे पहुँचेंगे? सब में परमात्मा की चेतना देखे बिना कोई साक्षात्कार नहीं पाएगा। साधना के दिनों में स्त्रियों से अधिक संपर्क नहीं होना चाहिए। थोड़ी दूरी अवश्य होनी चाहिए। दो व्यक्ति एक कमरे में बैठकर बात न करें। दो व्यक्ति एकान्त में न रहें। ऐसी परिस्थिति में हमारे मन अनजाने में ही उसमें सुख का अनुभव करेंगे। यदि पर्याप्त शक्ति नहीं हो तो टूट जायेंगे। यदि बातचीत करने की परिस्थिति आ भी जाय तो तीसरे व्यक्ति की उपस्थिति में बात करें। तीसरा व्यक्ति साथ हो तो सावधानी आएगी। पुरुष और स्त्री पेट्रोल और आग के समान है। आग के नज़दीक जाते ही पेट्रोल भड़क उठेगा। इसलिए निरंतर सावधानी आवश्यक है। जब कमज़ोरी महसूस हो तब विवेकपूर्ण विचार करना चाहिए कि मलमूत्र से भरे इस शरीर में क्या पड़ा है? किंतु बाद में उस घृणा को भी जीतना चाहिए। सब को जगदंबा के रूप में देखना चाहिए। सब में व्याप्त चैतन्य को देखकर शक्ति पाने का प्रयत्न करना चाहिए। जब तक शक्ति आर्जित न हो तब तक अत्यन्त सावधान रहें। स्त्री जल की भँवर जैसी है। हमें नीचे की ओर खींच लेगी। निरंतर साधना, लक्ष्यज्ञान एवं गुरु के प्रति समर्पण के बिना

परिस्थितियों को पूर्णतः जीतना बड़ा कठिन है।'

एक भक्त- 'मकान बनाने के लिए ये ईंटें ढ़ोना, अन्य काम, यात्रा ये सब करते ब्रह्मचारी थक जायेंगे न?'

अम्मा- 'दर्शन के दिवस में भी कीर्तन के बाद बच्चें ईंट ढ़ोंते हैं। दर्शन की समाप्ति तक वे कीर्तन गाते हैं। थक कर लेटते हैं। तभी ईंट ढ़ोंने बुलाते हैं। यह जानना है कि कितने लोगों में त्याग-बुद्धि है। ऐसे प्रसंगों पर विदित होता है कि ध्यान से कोई लाभ हुआ है कि नहीं। क्या यह नहीं जानना है कि क्या वे सिर्फ शरीर के सुख में ही सुखी हैं? दूसरे जब तकलीफ उठाते हैं तब उनकी मदद करने की मानसिकता आनी चाहिए। नहीं तो तप का क्या मतलब?'

भक्त- 'अम्मा, क्या ऐसा समय आएगा जब सब के सब अच्छे होंगे?'

अम्मा- 'बेटे, भलाई हो तो बुराई भी होगी। एक माँ के दस बच्चे हैं। उनमें नौ बच्चे बहुत अच्छे हैं। एक तो सिरफिरा है। यह सिरफिरा दूसरे सब को निगल जाने पर्याप्त है। इसके रहने पर ही दूसरे भगवान को पुकारेंगे। बिना दो के संसार नहीं।'

रात काफी ढ़ल चुकी। अम्मा की बातों में मन दिए रहने से समय का बीतना किसी ने जाना नहीं।

अम्मा- 'बच्चों, समय बहुत हो गया। अब अम्मा कल मिलेगी। बच्चे जाकर सो जायँ।'

अम्मा उठीं। भक्त भी अम्मा को प्रणाम करके उठे। अम्मा हर एक के सोने की जगह दिखाती साथ चलीं। लगातार वर्षा के कारण आश्रम के चारों तरफ का तालाब मेंड़ तोड़कर बह रहा था। आश्रम के आँगन में पानी भरा था। भक्तों को यह देखकर दुःख हुआ कि अम्मा उन्हें रास्ता दिखाने के लिए पानी में चलती कष्ट उठा रही हैं।

उन्होंने कहा- 'अम्मा! आप न आवें। हम पहुँच जायेंगे।'

अम्मा- 'पानी भरा पड़ा है। बच्चों को रास्ता पहचानने में कठिनाई होगी। अम्मा साथ आएगी।'

प्रत्येक को अलग अलग कमरों में पहुँचाकर अम्मा अपने कमरे में पहुँचीं तो रात के तीन बज चुके थे। वे अनुगृहीत भक्तजन विश्राम करने लेटे। इस माँ के प्यार और वात्सल्य की बराबरी का कोई दूसरा भाव

संसार में कहाँ मिलेगा? उनकी बंद पलकों के भीतर अम्मा की मंगल मूर्ति उभर आती है। अम्मा की मधुर वाणी कानों में गूँजती है। स्नेहमयी अम्मा का ध्यान करते हुए बच्चे निद्रा देवी की बाँहों में आ गये।

१९८६ जुलाई १० बृहस्पतिवार

भावदर्शन का दिन होने के कारण प्रातःकाल से ही भक्तों की भीड़ थी। पर्णशाला का दर्शन समाप्त होने पर दो बजे अम्मा उठीं। धरती को प्रणाम करके वे बाहर निकल ही रही थीं कि लोगों का एक दल आ गया। वे नागरकोविल से आये हैं। भाड़े पर बस लेकर आये हैं। अम्मा का दर्शन करके आज रात को ही लौटना चाहते हैं।

अम्मा मंदहासपूर्ण मुख से फिर से खाट पर बैठीं। भक्तों ने एक एक कर अम्मा के पास आकर प्रणाम किया। पर्णशाला में पहले से बैठे लोग नवागतों के लिए स्थान रिक्त कर बाहर चले। उन नए लोगों में दो-तीन बच्चे अच्छा गाते थे। अम्मा के कहने से उन्होंने कीर्तन गाया।

तीन बजे तक अम्मा अपने कमरे में गईं। नवागत भक्तों को भोजन कराने का दायित्व अम्माने एक ब्रह्मचारी को सौंपा।

एक ब्रह्मचारी अम्मा के कमरे में उनकी प्रतीक्षा में खड़ा था। अम्मा फर्श पर बैठीं। गायत्री ने अम्मा को दोपहर का भोजन परोसा। आज की ड़ाक से आये पत्रों में पढ़ने को शेष रह गए कुछ पत्र पास हैं। अम्मा ने पत्र पढ़ते हुए भोजन किया।

ब्रह्मचारी के मन की बात समझकर अम्मा ने भूमिका के बिना ही संभाषण प्रारंभ किया।

ध्यान एकाग्र होना चाहिए

अम्मा– 'बेटे, ध्यान करने बैठने पर मन पूर्ण रूप से ईश्वर में लीन रहना चाहिए। बाहरी बातों पर ध्यान न जावे। मन में इष्टमूर्ति का रूप ही होना चाहिए। उतना विराग हो।'

'एक बार एक संन्यासी ध्यान कर रहे थे। एक आदमी उनके सामने से तेज़ी से दौड़ा गया। वह उन्हें पसंद नहीं आया। कुछ समय बाद

वही आदमी एक बालक को लिए उसी रास्ते लौट आया। साधु ने उससे क्रोध से पूछा- क्या तुम्हें धीरज बिलकुल नहीं? क्या मुझे ध्यान करते तुमने नहीं देखा? उस आदमी ने बड़े विनय से निवेदन किया- हाय! मुझे मालूम ही नहीं था कि आप यहाँ बैठें थे।'

साधु ने पूछा- 'क्या तुम अंधे हो?'

उसने कहा- 'मेरा बेटा काफी समय से लापता रहा। साथीयों के साथ खेलने गया था। मैं ड़र गया कि कहीं समीप के तालाब में गिरा तो नहीं? इसकी तलाश में मैं दौड़ रहा था। इसलिए आपको बैठें नहीं देखा।'

उसने क्षमा माँगी। किंतु साधु छोड़ने तैयार नहीं थे। तुमने ईश्वर के ध्यान में लीन मुझे तंग कर मर्यादा भंग किया है।

उस आदमी ने कहा- 'ईश्वर के ध्यान में बैठे आप ने मुझे दौड़ते हुए देखा। उसी समय बच्चे की खोज में दौड़ा हुआ मैं सामने बैठे आपको देख नहीं सका। अपने बच्चे से मेरे मन में जितनी घनिष्ठता है उतनी घनिष्ठता भी आप को भगवान के प्रति नहीं है। फिर आप कैसा ध्यान करते हैं? धीरज और विनय न मिले तो उस ध्यान से क्या लाभ?'

'हमारा ध्यान इस साधु का ध्यान सा नहीं होना चाहिए। ध्यान में बैठे तो मन को पूर्णतः इष्टमूर्ति से बाँधना चाहिए। चारों तरफ कुछ भी चले, मन को उस तरफ बढ़ने न दें। अगर जावे तो तुरंत उसे वापस लाकर ईश्वर पर बाँधने का ध्यान रखें। यों निरंतर प्रयत्न करने पर मन कहीं नहीं भटकेगा। ध्यान के लिए बैठ जायँ तो पहले से निश्चय करना चाहिए कि इतने घंटों के पहले आँखें नहीं खोलूँगा। हाथ-पाँव नहीं हिलाऊँगा। उसके बाद कुछ भी हो, इस निर्णय से पीछे नहीं हटना चाहिए। वही दृढ़ विराग है।'

ब्रह्मचारी- 'अम्मा, कई विचार दखल देकर मन को चंचल बनाते हैं। सोचता हूँ कि भगवान के दर्शन मिलें। उनके प्रति भक्ति हों, बस्! और कभी सोचता हूँ कि इस विश्व की पहेलियों को समझना है। कभी लगता है कि साधना के ज़रिए विश्व के पीछे का रहस्य समझना चाहिए। तो कभी लगता है- यह कुछ नहीं चाहिए, मेरे अंदर कार्य करती शक्ति मात्र को जानना काफी है। ऐसे कई विचारों के कारण साधना में कभी दृढ़ता नहीं मिलती।'

अम्मा- 'बेटे, आत्मा का पता लग जाने पर सारी पहेलियाँ, शेष सारी

बातें अपने आप समझ में आएँगी न? उलटे हम पहेलियों की खोज में चलते स्वयं निगूढ़ता में फँस जायँ तो? जब बस आगे बढ़ती है तब चारों तरफ की चीज़ें दौड़ती हमारी नज़र से गायब हो जाती हैं। उसी प्रकार आज जो कुछ दीख पड़ता है वह परिवर्तनशील है। उस पर ध्यान देना या उससे बंध जाना नहीं चाहिए। कितने ही विशेषज्ञ विश्व का रहस्य समझने का प्रयास करते हैं। उनमें से कोई सफल नहीं हुआ न? किंतु ईश्वर अगर मिल जावें तो सारे संसार को देख और समझ सकेंगे। इसलिए जो भी समय मिलता है उसे उसके लिए लगाना। और किसी भी विषय पर सोचना निष्फल है।'

सगुणाराधना

ब्रह्मचारी- 'अम्मा, ईश्वर अंदर हैं या बाहर?'

अम्मा- 'शरीरबोध होने से ही हमें अंदर और बाहर की प्रतीति होती है। बेटे, वस्तुतः अंदर और बाहर की बात नहीं है। 'मैं' का भाव होने से ही मैं और हम आते हैं, दो की प्रतीति होती है। किंतु जब तक 'मैं' का भाव है तब तक उन्हें मिथ्या कहना भी संभव नहीं। ईश्वर सभी जगह समाया हुआ चैतन्य है। जब हम 'ईश्वर बाहर हैं'- ऐसा संकल्प करते हैं तब समझना चाहिए कि हम उस अन्तःस्थ चैतन्य को ही बाहर कल्पित करते हैं। इस संकल्प के माध्यम से ही हम मनःशुद्धि पा सकते हैं।'

ब्रह्मचारी- 'कोई विशिष्ट शक्ति सारे विश्व का संचालन करती है। किंतु यह विश्वास करना कठिन है कि वह कोई रूपधारी ईश्वर हैं।'

अम्मा- 'सभी शक्तियाँ उन्हीं से हैं। सर्वशक्तिमान प्रभु ही सबका नियंत्रण करते हैं। यदि हम विश्वास कर सकते हैं कि वही सबकी शक्ति हैं तो यह शक्ति भक्त की इच्छा के अनुसार क्यों रूप धारण नहीं कर सकती? ऐसी आस्था रखने में क्या कठिनाई है? (दृढ़ स्वर में) इस विश्व में एक आदि शक्ति है। उसे मैं अपनी माँ के रूप में देखती हूँ। वह मेरी माँ हैं। सौ जन्म लेने पर भी वह मेरी माँ ही रहेगी। मैं उनकी बच्ची रहूँगी। इसलिए मैं यह कह नहीं सकती कि ईश्वर का कोई रूप नहीं हैं।'

'सामान्य लोगों के लिए एक इष्टमूर्ति के बिना मन को एकाग्र करना कठिन है। इष्टमूर्ति को पुल बनाकर उस पार लाँघने का प्रयत्न करना चाहिए। उसके बिना वह संभव नहीं है, बेटा। हम तैर नहीं सकते। रास्ते में यदि हम श्रान्त हो जाएँ तो क्या होगा? हमारे लिए एक पुल अनिवार्य है। किसी भी कठिनाई या प्रतिकूलता में रास्ता बताने के लिए गुरु समीप हैं ऐसी आस्था व समर्पण होना चाहिए। फिर हम क्यों अधिक कष्ट उठाएँ? किंतु हमें ले चलने, पुल पार कराने कोई है ऐसा सोचकर निष्क्रिय न रहें, प्रयत्न करें।'

'नाव में छेद से जब पानी घुसता है तब ईश्वर से छेद बंद करने की प्रार्थना करने से ही काम नहीं चलेगा। प्रार्थना करते हुए छेद बंद करना भी चाहिए। प्रयत्न आवश्यक है, साथ ही प्रभु की कृपा के लिए प्रार्थना भी करें।'

ब्रह्मचारी- 'मैं कितने समय में ईश्वर साक्षात्कार पा सकूँगा?'

अम्मा- 'बेटे, साक्षात्कार आसानी से पाए जाने वाली चीज़ नहीं है। कारण यह कि हमने उतना कमा रखा है। एक यात्रा के बाद पहने कपड़े धोकर देखो। हम रास्ते में कहीं उतरे नहीं हैं। गंदगी में बैठे नहीं। फिर भी धोते समय कपड़े कितने मैले लगते हैं। उसी तरह हमारे पहचाने बिना ही हमारे मन में मैल लगती है। इस जन्म की ही नहीं, पूर्वजन्म संचित लिए हम इस विश्व में आये हैं। एकाध वर्ष आँख बंद करके बैठे रहने से आत्मा को जानना चाहें तो वह संभव नहीं। अपने अन्तर को हम साफ तक नहीं बना पाते। पहले जंगल काटकर सफाई करें, वहाँ फैले झाड़ को दूर करें। उसके बाद ही हम वहाँ अपना पेड़ लगा सकते हैं। आज हम अपने मन को साफ नहीं कर पाते। फिर आत्मस्वरूप कैसे प्राप्त कर सकते हैं? मैले दर्पण में पारद नहीं लगता। इसलिए पहले मन को शुद्ध बनाने का श्रम करो। भगवान की तरफ समर्पण भाव से बढ़ो।'

अम्मा भोजन कर चुकीं। ब्रह्मचारी अम्मा को प्रणाम करता है। चार-पाँच पत्र और पढ़ने के बाद अम्मा भावदर्शन के प्रारंभिक कीर्तन के लिए नीचे उतर आईं।

रात को दो बजे भावदर्शन संपन्न हुआ। साँझ के वक्त बूँदाबाँदी शुरू हुई थी। दस बजे तक वर्षा कुछ कम हुई। एक बजे से बारिश मू.

सलाधार हो गयी। भक्तजन वेदान्त विद्यालय में, मंड़प के वरामदे पर खड़े हैं। जहाँ जगह मिली वहाँ लेटे भी हैं। अम्मा दर्शन संपन्न करके कलरि मंड़प से बाहर आईं तो देखा कि भक्त लेटने के लिए जगह न पाने से परेशान हैं। अम्मा उन्हें लेकर ब्रह्मचारियों की पर्णशालाओं में पहुँचीं। गायत्री ने छाता लिए अम्मा का अनुगमन किया। अम्मा ने अपने साथ चले गृहस्थ भक्तों के लिए पर्णशालाओ में जगह की व्यवस्था कर दी। गृहस्थों के सिर गमछे से पोंछ दिये। उस मातृवात्सल्य के सामने वे छोटे बच्चे हो गये। पर्णशाला के हर एक कमरे में तीन-तीन, चार-चार लोगों के सोने की जगह करा दी।

एक भक्त ने पूछा- 'अम्मा, ब्रह्मचारी कहाँ लेटेंगे? हमारे कारण क्या उन्हें तकलीफ नहीं होंगी?'

अम्मा बोलीं- 'वे तुम लोगों की सेवा करने आये हैं। वे त्याग का अभ्यास करने आये बच्चे हैं। वे अपने कष्ट पर खुश ही होंगे।'

ब्रह्मचारी कलरिमंड़प पर बैठकर रात बिताएँगे। मंड़प के तीनों तरफ खुली जगह है। हवा के चलते समय फुहार से भीग जायेंगे। इसलिए बैठकर सो नहीं पायेंगे। दिन खुलने में अब अधिक देर नहीं है।

तीन चार बुजुर्ग लोगों को अभी तक लेटने की जगह नहीं मिली है। वे चार बजे दूसरे पार जायेंगे (पश्चजल के पार वल्लिकाव में)। पाँच बजे की बस पकड़ेंगे। जिन्हें अभी लेटने की जगह नहीं मिली उन्हें लेकर अम्मा कलरि के उत्तर के कमरे पर आईं। दरवाजा बंद था। अम्मा ने दरवाजे पर दस्तक दी। दो ब्रह्मचारी वहाँ कुछ खबर न जानकर सोये पड़े हैं। अम्मा की आवाज़ सुनकर वे जल्दी जाग पड़े। दर्शन पूरा करने तक प्रतीक्षा किए बिना वे सोने चले थे।

अम्मा- 'बच्चों, इनके लेटने की व्यवस्था करो।' अम्मा भक्तों को ब्रह्मचारियों के सुपुर्द कर आ गईं। वे ब्रह्मचारी अपने बिस्तर भक्तों को देकर दरवाजा बंद कर बाहर कलरि मंड़प के वरामदे पर आ बैठे। दरवाजे से पीठ सटाये बैठे हैं। इसलिए ज़्यादा भीगते नहीं। बारिश की तेज़ी कुछ कम हुई है। अम्मा क्या इन ब्रह्मचारियों को नहीं सिखा रही हैं कि त्याग ही जीवन बनायी त्यागमूर्ति की सन्निधि में आए, जीवन को समर्पण किए ब्रह्मचारियों को किस प्रकार जीना चाहिए। भक्त जनों ने उस विश्ववात्सल्य की मूर्ति को मन से बारंबार प्रणाम किया।

१९८६ अगस्त ७ बृहस्पतिवार

ढ़ाई बजे तक अम्मा पर्णशाला से कमरे में पहुँचीं। ब्रह्मचारिणी सौम्या अम्मा की प्रतीक्षा में कमरे में खड़ी हैं। सौम्या का जन्मस्थान ऑस्ट्रेलिया है। वह कुछ दिनों से अम्मा से बातचीत करना चाहती हैं। अम्मा ने आज आने को कहा था। भावदर्शन का दिन होने के कारण अम्मा को अभी ही बात करने की फुरसत मिली। पाँच बजे अम्मा कीर्तन के लिए कलरिमंड़प जाएँगी। सबेरे दर्शन देने पर्णशाला गईं अम्मा अभी आयी हैं। अभी तक कुछ नहीं खाया है। अम्मा फर्श पर बैठ गईं। सौम्या ने अम्मा का भोजन सामने ला रखा।

सौम्या- 'कुछ दिनों से अम्मा से कईं बातें पूछना चाहती थी। अब पूछ लूँ?'

अम्मा- 'हाँ, पूछ लो।'

विराग

सौम्या- 'जब एक वस्तु से ममता अनुभव होती है तब निश्चय करती हूँ कि उसे स्वीकार नहीं करूँगी। क्या ऐसी दृष्टि विराग है?'

अम्मा- 'वह वस्तु हमें मिथ्या की ओर ले जाय तो वह विराग ही है। हमें प्रत्येक वस्तु की यथार्थ प्रकृति जानना चाहिए। हमें यह समझ लेना है कि भौतिक वस्तुएँ हमें आनंद नहीं दे सकती। उनका आश्रय लेने से तत्काल संतोष यद्यपि मिलेगा तो भी वह दुःख में परिणत होगा। यदि यह पूर्णतः समझ में आ जाय तो उनसे हमारी आसक्ति अपने आप कम होगी। मन को उनसे छुड़ाना आसान रहेगा।'

'खीर का लोभी एक व्यक्ति मित्र के जन्मदिन के प्रीतीभोज पर गया। प्रीतीभोज में मुख्य व्यंजन खीर है। वह बहुत खुश हुआ। एक बड़ा बर्तन भर खीर ले लिया। एक चमच पिया। बहुत मीठा है। दूध, इलायची, किसमिस, काजू सब ड़ाला है। बहुत अच्छा है। वह दूसरा चम्मच लेने लगा तो छत से एक छिपकली उस खीर के बर्तन में आ गिरी। अपना प्रिय खीर बर्तन समेत बाहर फेंक दिया। खीर छिपकली गिरने से खाने लायक नहीं रही। यह देखते ही उसके प्रति लोभ खतम। उसी प्रकार

जब हमें विश्वास हो जायेगा कि भौतिक विषयों का आश्रय लेने से दुःख ही मिलेगा तब हम किसी भी प्रिय वस्तु को ठुकरा सकेंगे। उससे मन को हटाने या नियंत्रण करने में कठिनाई नहीं रहेगी। यही विराग है। बच्चा ज़हरीले साँप को पकड़ने चलेगा क्योंकि उसे मालूम नहीं कि साँप में ज़हर है। क्या हम ऐसा करेंगे? मन पर जबरदस्ती नियंत्रण करने के बदले वस्तुओं की भलाई बुराई पहचानकर उनसे विराग बढ़ाकर पीछे हटना ही उत्तम है। तब सहज रूप से नियंत्रण संभव होगा।'

सौम्या- 'मुझे लगता है कि यथार्थ आनंद विराग से आता है। वह वस्तुओं का आश्रय लेने, उन्हें पाने या उनका आस्वादन करने से नहीं आता।'

अम्मा- 'क्या आनंद विराग से आता है? आनंद प्रेम से आता है। ईश्वर साक्षात्कार, आत्मसाक्षात्कार के लिए प्रेम चाहिए। प्रेम होने पर ही विराग पूर्ण होता है।'

सौम्या- 'तो हमे क्या त्याग करना चाहिए? निद्रा और भोजन का नियंत्रण करने को क्यों कहा जाता है?'

अम्मा- 'उसे त्याग कह सकते हैं। मगर उसी से बात पूरी नहीं होती। किसी से द्वेष करने पर क्या हमें मानसिक शांति मिलती है? प्यार करने पर ही शांति मिलती है। एक फूल की खुशबू सूँघने पर ही हमे सुख लगता है न? नाक को बंद रखने से क्या खुशबू मिलेगी? गुड़ का मज़ा उसे चखने पर आता है। क्या विराग से आता है? प्रेम से ही आता है। मल देखने पर हम नाक पर रुमाल रखते हैं। वह विराग ही होता है। वहाँ प्यार नहीं इसलिए आनंद नहीं। भौतिक वस्तुओं से मिलता सुख शाश्वत नही है। वे ही बाद में दुःख का कारण बनते हैं। संसार से मिलने वाला सुख नित्य नहीं, क्षणिक है। इसलिए वह मिथ्या है। यों सोचते हुए उनको त्यागना विराग कहलाता है। लेकिन यथार्थ आनंद पाने के लिए मिथ्या को विराग से त्याग देना ही काफी नहीं। नित्य वस्तु को प्रेम से प्राप्त भी करना है। उसी से शाश्वत आनंद प्राप्त होता है। मिथ्या लोक से हमें नित्य लोक पहुँचने की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। हमें नित्य लोक चाहिए। प्रेम से ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। प्रेम से ही हम विकास पा सकेंगे। चंद्रमा के उदय होने पर धरती का जल उससे प्रेम के कारण ऊपर उठता है। पश्चजल का पानी, समुद्र का पानी सब ऊपर

उठता है। पवन का स्पर्श पाने के लिए फूल खिलता है। वह भी प्रेम से ही होता है। तो आनंद किससे प्राप्त होता है? विराग से नहीं, प्रेम से ही।'

सौम्या- (व्यग्रता से) 'किसी वस्तु को प्यार करने से जो आनंद मिल सकता है वह मुझे नहीं चाहिए।'

अम्मा- 'एक साधक अपने से भिन्न किसी को प्यार नहीं करता बल्कि सर्वत्र समाए अपने आत्मस्वरूप को ही प्यार करता है। नित्यानित्य में से नित्य के प्रति प्रेम होने से यथार्थ वैराग्य उत्पन्न होता है। प्रेम जब बढ़ता है तब नित्य को जानने की जिज्ञासा उदय होगी। हमारा एक मित्र दूर रहता है। सूचना मिली कि वह सबेरे आनेवाला है। बड़ी देर होने पर भी नहीं आया। आने की सूचना मिलने की घड़ी से बिना खाये बिना सोये, इसी आशा से उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं कि अभी आएगा, अभी आएगा। हम उसके प्रति प्रेम के कारण निद्रा व भोजन छोड़ प्रतीक्षा करते हैं।'

सौम्या-'पहले संयम चाहिए या प्रेम?'

अम्मा- 'प्रेम से ही यथार्थ संयम आता है। उसके बिना असली नियंत्रण नहीं होता। अन्य नियंत्रण स्थायी नहीं होगा। मन अक्सर पुरानी स्थिति की ओर जाएगा। मित्र के आने की खबर सुनते ही उनके प्रति प्रेम के कारण उनसे मिलने की अभिलाषा से निद्रा व भोजन छोड़ दिया। वहाँ हमारे पहचाने बिना ही नियंत्रण आया। प्रेम होने के कारण वह नियंत्रण हमें कठिन नहीं लगा। त्याग नहीं लगा। अगर वह प्रेम न हो तो नियंत्रण बड़ी तकलीफ देगा। यदि हम एक बार भोजन न करें, नियंत्रण करें तो हमारी पूरी चिंता भोजन पर होगी। एक वस्तु से विराग होने के लिए दूसरी किसी वस्तु से प्रेम होना चाहिए। बेटी को साक्षात्कार के लक्ष्य के प्रति प्रेम है तभी तो कष्ट झेलती, सब सहन करती यहाँ रहती हो। नहीं तो यहाँ नहीं रहोगी। हमारे भीतर काम, क्रोध, मद, मात्सर्य, दंभ, ईर्ष्या सब हैं। उन्हें प्रकट किये बिना सब-कुछ क्यों मन में दबाये सहन करते रहते हैं? साक्षात्कार के प्रेम से ही, नहीं तो सब कुछ बाहर आएगा। उस प्रेम के कारण इन्हें मन में जीने, सक्रिय होने और बढ़ने का वातावरण नहीं मिलता। लक्ष्य से हमारा प्रेम उसका नियंत्रण करता है।'

सौम्या- 'फिर अम्मा आश्रम की नियमावली के पालन में इतनी कठोर

क्यों रहती हैं? वह सहज रूप से आएगा न?'

अम्मा- 'अम्मा ने नहीं कहा कि विराग नहीं चाहिए। वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए। किंतु वह प्रेम से ही पूर्ण होता है। प्रारंभ में नियंत्रण अनिवार्य है। यहाँ अब करीब तीस बच्चे हैं। सब को साक्षात्कार की चिंता है। किंतु उनके मन शरीर के दास हैं। वे आत्मज्ञान चाहते तो हैं मगर इस सुख को वे छोड़ भी नहीं पाते। इसलिए पाबंदी रखनी पड़ती है। बड़े सबेरे अमुक जगह जाना है, मगर नींद छूटना पसंद नहीं। तब उस व्यक्ति को क्या जगाना नहीं चाहिए? बच्चे सूर्योदय देखना चाहते हैं। किंतु वे बड़े सबेरे जाग नहीं पाते। मन शरीर के सुख में लीन रहता है। हमें उदय की प्रतीक्षा करनी है। उदय हमारी प्रतीक्षा नहीं करेगा। वह अपना धर्म निभाएगा। किंतु हम अपना धर्म नहीं निभाते। ऐसी हालत में बच्चों को जगाने का काम माँ का है। अगर नहीं जगाते तो वह बच्चों को बड़ा धोखा देना है। वह गंभीरता ही अम्मा का सबसे बड़ा प्यार है।

आश्रम में अनुशासन प्रधान है।

सौम्या- कभी कभी यहाँ का अनुशासन बड़ा कठोर लगता है।

अम्मा- अनेक लोग जब आश्रम में रहते और दर्शन करने आते हैं तब अनुशासन अनिवार्य होता है। सभी एक तरह के नहीं होते। आश्रम में रहनेवालों को दूसरों के लिए आदर्श होना चाहिए। लड़कों और लड़कियों को बड़ी आज़ादी से बातें नहीं करना चाहिए। प्रारंभ में युवकों में उतना संयम नहीं रहता। वे अभी साधना करने ही लगे हैं। पहले से जो लड़के हैं उन्हें मन पर थोड़ा बहुत नियंत्रण आ गया है। उनसे संदेह पूछ सकते हैं। उसमें कोई गलती नहीं। फिर भी अम्मा का कहना है कि एक लकीर बाँधकर चलना चाहिए। ज़रूरत भर के लिए बात करें, उससे अधिक नहीं।

सौम्या- जिस दिन अम्मा जगाती है उस दिन बड़ी सावधानी रहती है।

अम्मा- अगर अम्मा से प्रेम करता और साक्षात्कार चाहता कोई हो तो किसी के जगाने की प्रतीक्षा किये बिना ही सबेरे जागेगा। अम्मा को रात में कमरे में जाने पर कई खत पढ़ने पड़ते हैं। उसके बाद दूसरे

दिन के लिए सब कुछ बताना पड़ता है। चावल, सब्जी, पैसे की हालत जानना है, नहीं हो तो क्या खरीदना है, क्या करना है - सब बताये बिना अम्मा सो नहीं सकती। इसके अलावा आश्रम आते सभी लोगों को देखना है। यहाँ के बच्चों की व्यवस्था पर, उनकी पसंद पर भी अम्मा की दृष्टि पड़नी चाहिए। इन सब के बाद अम्मा तुम सब के कमरे में आकर प्रत्येक को कैसे जगा सकती है? अगर अम्मा से प्यार है तो अम्मा की बतायी बातें ध्यान से निभाना काफी है। अम्मा के लिए बच्चे अम्मा से प्रेम करें, यह ज़रूरी नहीं। किंतु साक्षात्कार चाहते हों तो पहले अम्मा को प्यार करना। आश्रम को प्यार करना। वह प्यास मन में होनी चाहिए। अम्मा से प्रेम का मतलब अम्मा के कथन का पालन करना है। जिसका गुरु हों उसे गुरु से और गुरु की संस्था से जो संबंध है वह शेष सब को भुलाने एवं नित्यता की ओर बढ़ने में मदद देगा। वह कभी मिथ्या नहीं है। मिट्टी से मिलने के फलस्वरूप बीज अंकुरित हो, बढ़कर वृक्ष बनता है।'

सौम्या- 'अम्मा मुझे क्यों नहीं डाँटतीं?'

अम्मा- 'क्या, नहीं डाँटती? मंड़प पर देवीभाव के समय डाँटती है न?'

सौम्या- 'बहुत कम।'

अम्मा- (हँसते हुए) 'बेटी में एक ही गलती देखती हूँ कि बेटी बड़े प्रभात में नहीं जागती। रात को बड़ी तकलीफ झेलने के बाद आकर लेटती हो। दर्शन समय में मंड़प पर खड़ी रहती हो न? दूसरी बात, बेटी साक्षात्कार के लिए बड़ा प्रयत्न करती है। कर्तव्य निष्ठा से करना चाहती है। लुकछिपकर बचना नहीं चाहती। इसलिए डाँटने की ज़रूरत नहीं पड़ती।'

सौम्या- 'यहाँ लड़के और लड़कियाँ दोनों रहते हैं। अम्मा यह भी बताती हैं न, कि सबसे प्रेमभाव रखना चाहिए?'

दोषों का निवारण कर

अम्मा- 'किसी के पास जाकर प्रेम करने की ज़रूरत नहीं है। द्वेष न करना काफी है। यथार्थ स्नेह का मतलब किसी से विद्वेष का अभाव है। तब भिन्नता की भावना नहीं। भेदबुद्धि नहीं। कल जिन्होंने प्रेम किया

उन्हें क्या आज विद्वेष करते नहीं देखते? वह असली प्रेम नहीं होता। राग होने पर द्वेष भी होता है। दोनों से बचना हमारा ध्येय है, तब यथार्थ स्नेह हो जाता है। इसके अलावा हम निष्काम सेवा भी करते हैं। वही सबसे बड़ा प्रेम है।'

सौम्या- 'किसी से द्वेष किए बिना रहने का श्रम कर रही हूँ।'

अम्मा- 'हमारे रागवैर कोई उठाकर फेंक देने की वस्तु नहीं है। पानी के बुल्ले को उठाकर फेंक देने की कोशिश करें तों वह फूट जायेंगे। हाथ नहीं लगेंगे। इसी प्रकार मन के विकार-विचारों को उठाकर दूर फेंकना संभव नहीं है। दबाने की चेष्टा करें तो वह दुगुना बढ़ेगा और अधिक तकलीफ देगा। इसलिए सही मनन से ही गलत विकारों को दूर कर सकते हैं। हमें सोचना चाहिए कि हमारी कमियाँ कौनसी हैं। अच्छे विचारों से उन कमियों की ताकत घटानी चाहिए। उलटे उसे जबरदस्ती बदल नहीं सकते। एक गिलास नमकीन पानी में लगातार शुद्ध जल डालते रहें तो खारापन दूर होगा और वह अच्छा पानी बनेगा। उसी प्रकार दुश्चिंताओ को अच्छे विचारों से ही दूर कर सकते हैं। काम और क्रोध आदि को मन से निकाल फेंक नहीं सकते। इसलिए इस बात का ध्यान रखना कि इन्हें मन में स्थान न दिया जाय। हमें पहचानना चाहिए कि मैं ईश्वर का उपकरण भर हूँ। दासभावना आनी चाहिए। एक सही याचक का भाव होना चाहिए। यदि कोई भिक्षुक बन एंक घर जाता है। वहाँ के लोग अगर कहें- 'यहाँ भीख नहीं, जा! तू यहाँ क्यों आया है?' आदि जो भी कहें भिक्षुक कुछ नहीं बोलेगा क्योंकि वह जानता है कि वह भिक्षुक है। उसका दुःख सुननेवाला इस संसार में कोई नहीं है। सिर्फ ईश्वर उसका हृदय जानते हैं। वह जानता है कि उन घरवालों को बताए तो बात उनकी समझ में नहीं आएगी। उस घर के लोग द्वेष करें तो वह चुपचाप चला जाएगा। वह अगले घर की खोज में चलेगा। वहाँ के लोग भी द्वेष करें तो तीसरे घर पर। हमें भी उसी प्रकार रहना चाहिए। याचकभाव आते ही घमंड़ आधे से ज़्यादा झड़ जाएगा। अणु से अणु होने का प्रयत्न करें, तभी बृहत से बृहत हो सकेंगे। यदि यह भावना हो कि मैं सब का दास हूँ तभी विश्वभर का स्वामी बन सकते हैं। शव को भी नमन करने वाला ही शिव होकर रह सकता है।'

सौम्या- 'दूसरों के लिए आवश्यक कोई चीज़ हमारे पास हो तो वह

दे देने में गलती क्या है?'

अम्मा- 'नहीं! तुम ब्रह्मचारिणी हो। साधना के लिए आई हो। किसी को कोई चीज़ देना हो तो वह ऑफिस में सौंप देना या अम्मा को सौंपना। अम्मा देगी। सीधे देते समय मन में यह भावना उठेगी कि 'मैं दे रही हूँ'। मन में ममता उठेगी। बेटी एक गुरु के स्तर तक आ जाय तो सवाल नहीं उठता। उस समय लेनेवाले के मन में और कोई खयाल नहीं उठ सकता। इस समय हमारा प्रेम बाहर प्रकट करने योग्य नहीं है। अन्दर उसकी वृद्धि करते जाना है। विद्वेष का अभाव होने पर वही प्रेम हो गया। विद्वेष पूर्णतः दूर हो जाता है तो मन प्रेममय बन जाता है। जब मैं शक्कर बन गया तब कोई भी आकर ले ले उसको मिठास मिलेगी। हमें लेकर देने का प्रयत्न करने की ज़रूरत नहीं है।'

'आज हमारे पास जो आते हैं, वे मक्खी जैसे होते हैं। गुड़ या चीनी के रस में मक्खी गिरे तो मर जायेगी। वे जब हम से घनिष्ठ होने लगते हैं तब उससे उनकी भलाई नहीं होती। वे भी नष्ट होते हैं। हमारा भी नुकसान होता है। दीपक के पास पतंग आता है तो भोजन के लिए। दीपक प्रकाश देता है। मगर मच्छर, तिलचट्टा वगैरह उसको खाने के इरादे से आते हैं। इसलिए वे भी नष्ट हो जाते हैं। दीपक भी शायद बुझेगा। अतएव हम उन्हें नष्ट होने का अवसर न दें। हमारा मन करुणाशील है। पर ज़रूरी नहीं कि आनेवालों का दिल भी ऐसा हो। भविष्य में गुरुकुल या आश्रम में किसी दायित्वपूर्ण पद पर रहते समय वहाँ आनेवाले कुछ लोग अपवित्र भाव से शायद आवें। किंतु हम पर्याप्त प्रगति कर चुके हैं तो उनमें दुर्भिचताएँ होने पर भी हमारे प्रेम से नष्ट हो जायेंगी। दावाग्नि में हाथी फँस जाय तो भी आग बुझेगी नहीं। किंतु अभी जो प्रेम है उससे उनकी कमजोरियाँ बढ़ती ही जाएँगी।'

सौम्या- 'तो अन्दर प्रेम होना चाहिए किंतु उसे बाहर नहीं दिखाना चाहिए।'

अम्मा- 'अम्मा नहीं कहती कि बाहर मत दिखाओ। आश्रम का धर्म होता है। उसके अनुसार चलना है। हर बात का नियम होता है। हमेशा माहौल पहचानकर हमें आगे बढ़ना चाहिए। यहाँ ब्रह्मचारी को और ब्रह्मचारिणियों को परस्पर संवाद करते देखें तब आनेवाले भी उसकी नकल करने लगेंगे। वे यहाँ के बच्चों का निश्छल हृदय नहीं जानते।'

'हमें बातचीत करने की ज़रूरत भी नहीं है- प्रेम इन बाह्य बातों में

नहीं है। मन में विद्वेष का अभाव रहना ही यथार्थ प्रेम है।'

सौम्या- 'यहाँ कोई बातचीत करते हैं तो आध्यात्मिक बातों पर ही। सिखाये भाग के संदेह दूर करने का प्रयत्न करते हैं।'

अम्मा- 'बेटी, वह तो कोई नहीं देखता। देखनेवाले यही देखते हैं कि ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी आपस में बातचीत करते हैं। स्त्री और पुरुष का संवाद कहीं भी देखें, लोग और कुछ देखते हैं। वही आज की दुनिया है।'

सब से दया के कारण कोई कुछ भी माँगता तो दे देती। यही सौम्या की प्रकृति थी। आश्रम देखने आये कई लोग लौटते समय उससे बस का भाड़ा तक माँगने लगे। यों कुछ लोग उसकी दयालुता का बेजा फायदा उठाने लगे। ऑफिस को सूचित किये बिना अंतेवासियों से पैसे माँगना आश्रम के नियम के खिलाफ है। इसलिए सौम्या का ऐसा व्यवहार अम्मा ने मना किया। पाश्चात्य ढ़ंग की आज़ादी का अनुभव करती आई सौम्या को प्रारंभ में यह अखरता था। अम्मा के दिये उत्तर ने उसके मन को संतोष दिया।

गलतियों को कैसे पहचाने

सौम्या ने आगे अपने मन के संदेह प्रस्तुत किये ।

सौम्या- 'मैं एक बात को ठीक समझकर करती हूँ परन्तु वह गलत निकलता है। करते समय मैं नहीं जानती कि वह गलत है। मैं कैसे सही और गलत को पहचानकर काम करूँ?'

अम्मा- 'अब अम्मा के कथन के अनुसार आगे बढ़ना। अपने मन में यह दुश्चिंता हुई। अमुक व्यक्ति से नफरत हुई - आदि बातें लिख रखना। बाद में अम्मा से पूछकर गलती सुधारना। यहाँ के बच्चों से अम्मा कहती हैं कि साधना के प्रारंभिक दिनों में बातचीत बिलकुल न करें। साधना के एक स्तर तक पहुँच जाने से फिर सवाल नहीं उठता। विदेशी बच्चों का संवाद अम्मा अधिक नहीं रोकती। कारण वे उस दुनिया से आये हैं। उनकी संस्कृति में स्त्री-पुरुष का अंतर नहीं है।'

सौम्या- 'हमें अपने मन की भावना के अनुसार ही फल मिलता है न? या कोई बाह्य प्रवृत्ति से?'

अम्मा- 'वास्तविक फल उस निष्कलंक भावना से ही प्राप्त होता है।

तो भी काम में भी श्रद्धा चाहिए। उसके फल का भी निरीक्षण करना चाहिए। शुद्ध भावना से कर्म करना हो तो अभ्यास भी चाहिए।'

सौम्या- 'क्या ईश्वर भूलों को माफ करेंगे?'

अम्मा- 'करेंगे। सो भी एक हद तक, आगे नहीं। अनजाने कितनी ही भूले करें, भगवान क्षमा करेंगे। कारण यह कि अनजाने करते हैं। किंतु जानबूझकर जो गलती करें तो एक हद के बाद उसे क्षमा नहीं करेंगे। दण्ड देंगे। तब तक किये अपराधों का दण्ड देंगे। छोटा मुन्ना अस्पष्ट नामोंसे माता-पिता को पुकारता है। माता-पिता यह जानते हैं। वे इस पर खुशी से हँसेंगे। किंतु मुन्ना बड़ा होकर भी अस्पष्ट नाम पुकारे तो वे नहीं हँसेंगे। वे थप्पड़ देंगे। उसी प्रकार जानते हुए हम गलती करें तो भगवान अवश्य सज़ा देंगे। किंतु वस्तुतः वह दण्ड भी करुणा है। भगवान भक्त की छोटी भूल को भी शायद दण्ड देंगे। उसे आगे कभी ऐसी भूल नहीं करनी चाहिए। वह दण्ड भक्त के प्रति अपार करुणा से भक्त की रक्षा के लिए दिया जाता है। वह दण्ड अंधेरे में प्रकाश के भाँति है।'

'एक बालक पड़ोसी अहाते में प्रवेश करने कँटीले तारों का बाड़ा छलांग मारकर पार करता था। यह देख उसकी माँ ने बेटे को उपदेश दिया- 'बेटा, पैर फिसल जाय तो कँटीलें तार पर गिरोगे। तब शरीर पर घाव लग. ेगा। इसलिए बेटा, तारों का रास्ता छोड़ना। कुछ चलना पड़े, तो भी सीधे रास्ते से ही जाओ।' 'मुझे अब तक कुछ नहीं हुआ न?' कहते लड़का माँ का कथन माने बिना फिर से वही रास्ते से गया। और छलांग मारते समय उसका पैर फिसल गया। तार पर गिरकर घायल हो गया। वह रोते हुए माँ के पास पहुँचा। माँ ने प्यार से उसे सहलाया, आश्वस्त किया और मरहमपट्टी कर उपदेश दिया कि अब उस रास्ते से न जाना। किंतु घाव भर जाने के बाद लड़का फिर से आज्ञाभंग करके तार से छलांग मारने लगा। पैर फिसला व तार पर गिरा, शरीर कटा। लड़का रोता हुआ माँ के पास आया तो माँ ने मरहमपट्टी करने के पहले दो थप्पड़ रसीद किये। पहली बार ही तेज़ दर्द हुआ होता तो गलती न दुहराता। दूसरी बार जो पिटाई की वह लड़के से क्रोध के कारण नहीं थी, प्यार से ही की थी। उसी प्रकार ईश्वर की दी हुई सज़ा हमारे प्रति उनकी कृपा है। हमारे गलत आचरण को रोकने के लिए दी जाती है।'

'किसी किसी पेन्सिल के साथ रबर भी रहता है। लिखने के बाद

लिखी बात को उससे मिटाया जा सकता है। मगर बारंबार गलत लिखें और मिटाते चलें तो कागज फट जायगा।'

बातचीत करने के बीच अम्मा ने भोजन कर लिया। उठकर गईं। हाथ धोने के बाद वापस आकर बैठीं।

सौम्या- 'एक ही बात पर सोचने पर भी एक समय लगता है कि सही है, उसके बाद लगता है कि गलत है। किसी भी नतीजे पर नही पहुँच पाती। सही क्या है गलत क्या है इस बारे में शंका बनी रहती है।'

अम्मा- 'सही व गलत को पहचानने में हम स्वयं असमर्थ रहें तो गुरु या किसी विवेकी व्यक्ति के पास जाकर उनका उपदेश ग्रहण करना चाहिए। तब जान सकेंगे कि सही रास्ता कौन सा है। कम से कम एक व्यक्ति पर आस्था या समर्पण भाव के बिना आगे बढ़ना कठिन है। सही मार्ग का उपदेश देने एक व्यक्ति मिल गए तो उनके प्रति समर्पण की भावना होनी चाहिए। उनका सुझाव मानना चाहिए। यदि ऐसा व्यक्ति नहीं मिले तो आध्यात्मिक ग्रंथो में जीवन के लक्ष्य और पंथ की बातें पढ़कर समझने की कोशिश करें। यदि हार्दिक अभिलाषा हो तो गुरु अवश्य मिलेंगे। गुरु के पास पहुँचने भर से काम नहीं। उनके प्रति समर्पण होने पर ही प्रगति होगी। गुरुदेव जब गलती दिखावें, डाँटे तब गुरु में ही भूल देखने की कोशिश करें तो हमारी प्रगति कभी नहीं होगी।'

सौम्या- 'आशाएँ साधना में कैसे बाधा ड़ालती हैं?'

अम्मा- 'मान लो कि ऊपर एक नल की टोंटी है। उसके नीचेवाले पाइप में कई छेद है तो नल की टोंटी से थोड़ा ही जल मिलेगा। उसी प्रकार मन में स्वार्थ भावना हो तो हमें ईश्वर के प्रति पूर्ण एकाग्रता अनुभव नहीं होगी। हम ईश्वर से घनिष्ठ नहीं हो पायेंगे। जो छोटी सी नदी पार नहीं कर सकता वह समुद्र कैसे लाँघ सकता है? स्वार्थ को छोड़े बिना परमपद पर पहुँचना संभव नहीं है।'

सौम्या- 'जप, ध्यान और प्रार्थना- इनमें से किससे वासना शीघ्र नष्ट होती है?'

अम्मा- 'बेटी, प्रार्थना, जप, ध्यान आदि वासनाओं को जीतने के लिए हैं। सही एकाग्रता से प्रार्थना करें तो वह काफी है। हम सब समय प्रार्थना नहीं करते। हमें एकाग्रता नहीं मिलती। इसलिए हम कई तरीके स्वीकार करते हैं। बारीबारी से जप, ध्यान और कीर्तन करते हैं। तभी

हम सदा ईश्वर का स्मरण बनाये रख सकेंगे। हम ज़मीन में बीज बोते हैं तो उसके बाद खेत को गायों से बचाना चाहिए। समय पर खाद देना, सिंचाई करना चाहिए। कीड़ों को नष्ट करना चाहिए। ये सब एक ही फसल के लिए किए जाने वाले काम हैं। कई तरह के अभ्यास अपने लक्ष्य तक शीघ्रता से पहुँचने के लिए करते हैं।'

सौम्या- 'अम्मा ने कहा था कि सात से आठ बजे तक 'नमः शिवाय।' का जप करो। उस कारण कीर्तन में भाग ले नहीं पाती।'

अम्मा- 'बेटी, परेशान न होना। वह काम उस समय और किसी को सौंप देंगे।'

अम्मा ने दीवार की घड़ी देखी। समय ४.४५ था। अम्मा ने बातें फिलहाल समाप्त करते हुए कहा- 'कीर्तन का समय हो गया। अब मैं स्नान करूँ? बेटी को जो भी समस्या हो अम्मा से कहना।'

सौम्या अम्मा को प्रणाम करके उठी। उसे कई दिनों के बाद आज इतने विस्तार से बात कर सकने की खुशी है। मन में फैले संदेह के जाले दूर करने का संतोष है। ये दोनों भाव सौम्या के मुखमंड़ल पर प्रकट थे।

अम्मा भावदर्शन के पूर्व के कीर्तन के लिए कलरिमंड़प के बरामदे पर पहुँची। अम्मा सब भूलकर भावविभोर गाती हैं। अनन्त भावशालिनी अम्मा अब तक शिष्या के संदेहों का उत्तर धीरज से देती गुरुस्वरूपिणी अब हृदय की सिसकियाँ शब्दों से प्रकट करती भक्त के भावों में तन्मय है। अम्मा का कीर्तन मंड़प से गूँज उठा।

१९८६ अग़स्त २० बुधवार

क्रोध को जीतो

प्रभात से आश्रम में सभी लोगों को अविश्राम परिश्रम। काँक्रीट के लिए सीमेंट, गिट्टी, छड़ें आदि यथास्थान पहुँचाकर आश्रम का अहाता साफ किया जा चुका। कपड़े की धुलाई के पत्थर के पास खड़ी होकर अम्मा छड़ें उठा दे रही थीं। उनकी सफेद साड़ी पर हरी काई लग गई है।

राजस्थान में नौकरी करनेवाले एक भक्त कल आश्रम आये हैं। वे क्रोधी

प्रकृति के हैं। और उस प्रकृति से छूटने अम्मा से प्रार्थना करते हैं।

अन्तर्यामी अम्मा ने वह समझ लिया।(अम्मा हँसते हुए)- 'अम्मा को लगता है कि बेटा क्रोधी स्वभाव का है। अगर आगे कभी क्रोध आवे तो तुरंत अम्मा का फोटो सामने रखकर अम्मा को बुरा भला कहना 'क्या तेरा भजन करने से मुझे क्रोध मिलता है? अभी वह आदत बदल देना, वरना तुझे यों.....', अम्मा से कहता जाना। तकिया सामने रखकर उसे अम्मा मानना और उसे घूसा देना। चाहो तो अम्मा की तस्वीर को लक्ष्य कर मिट्टी का ढ़ेला फेंकना। फिर भी दूसरों पर बेटा क्रोध न करना।'

अम्मा के वात्सल्यभाव ने उस भक्त की आँखों को भिगो दिया।

सबेरे प्रारंभ किये काम संध्या तक करीब करीब पूरे हो गये। ईंट और मिट्टी ढ़ोने में अम्मा ने भी हाथ बँटाया। अम्मा जब बड़ा भारी पत्थर सिर पर उठा लेतीं तब बच्चे उन्हें रोकते रहे - कहते कि छोटा पत्थर ही लेना। किंतु बेटे जब भारी पत्थर उठाते तब अम्मा का दिल तड़पता। अम्मा का कथन था कि मन के दर्द के सामने शरीर का दर्द कुछ नहीं।

यहाँ मेहनत पूजा बनती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति से भी अधिक बोझ उठाने की कोशिश करता है। उनके पसीने की बूँद जगदीश्वरी के चरणों पर अर्चना कुसुम के रूप में पड़ती हैं। वे नवयुग के स्वर्णिम बीज बन जाते हैं।

१९८६ अगस्त २३ शनिवार

अम्मा भक्तों के साथ कलरिमंड़प पर बैठी हैं। गृहस्थ भक्त विजयलक्ष्मी और बैंक के अफसर रामचंद्रन् पास बैठे हैं। विजयलक्ष्मी को विवाहित हुए एक ही वर्ष बीता है। उसकी एक सहेली ने उसे अम्मा के पास पहुँचाया था। प्रथम दर्शन में ही विजयलक्ष्मी को अम्मा के प्रति गहरी आस्था अनुभव हुई। उसके बाद वह नियमित रूप से अम्मा के दर्शन करने आती है। पति को अम्मा के प्रति विशेष आस्था नहीं है। वह आध्यात्मिक बातों से सामान्यतः विमुख रहता है। मगर अम्मा के दर्शन के लिए पत्नी के जाने में वह बाधा नहीं ड़ालता।

विजयलक्ष्मी ने अम्मा का दर्शन करने के बाद गहने व साजसज्जा को बहुत कम कर दिया है। गहने और महँगी साड़ियाँ अब नहीं पहनती।

अब सिर्फ सफेद कपड़े पहनती है। पति इसे पसंद नहीं करते। वे इंजिनीयर हैं। उनके बहुत सारे मित्र हैं।

अम्मा- 'बेटी अगर सफेद कपड़े ही पहने तो क्या बेटा पसंद करेगा?'

विजयलक्ष्मी- 'परवाह नहीं अम्मा। मैंने अपनी साड़ियाँ, ब्लाऊज वगैरह अलमारी में बंद रखी हैं। गरीबों को बाँटना है। बहुत हैं।'

अम्मा- 'फिलहाल ऐसा कुछ नहीं करना। ऐसा कोई काम न करना जिससे बेटा दुःखी हो। बेटी का एक धर्म है न? उसे छोड़ना नहीं। जो भी हो बेटा यहाँ तुम्हारा आना मना नहीं करता। यह भी क्या कम है?'

विजयलक्ष्मी- 'अम्मा, मेरे पति के पास सौ बातों के लिए फुरसत है। यहाँ आकर अम्मा के दर्शन करने समय नहीं। पति के साथ मैं इतने दिनों तक बनठनकर रही। बस्! साजसज्जा, टीमटाम से ऊब गई। यह सूती साड़ी और ब्लाऊज काफी है।'

अम्मा- 'बेटी, ऐसा न कहना। यद्यपि वह बेटा अम्मा को देखने नहीं आता तो भी अच्छी भक्ति है।'

विजयलक्ष्मी- 'कहाँ? एक भी मंदिर में नहीं जाते। एक बार गुरुवायूर मंदिर जाने बुलाया तो कहते हैं - 'कालेजीय शिक्षा के दिनों में निश्चय किया था कि कभी मंदिर नहीं जायेंगे। तुम्हारे कारण वह प्रतिज्ञा तोड़नी पड़ी। तुम्हारे घरवाले बड़े भक्त हैं। इसलिए मुझे अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी पड़ी।' अम्मा! मेरा विवाह जो मंदिर में संपन्न हुआ उसकी शिकायत आज भी सुननी पड़ती है।' (अम्मा हँसती हैं।)

अम्मा- 'बेटी, चाहे मंदिर न जाय, चाहे यहाँ न आय पर उस बेटे का दिल अच्छा है। कष्ट उठानेवाले के प्रति करुणा है। वही काफी है बेटी, तुम ऐसा कुछ न करना जो बेटे को पसंद न हो।'

(विजयलक्ष्मी का चेहरा मुरझाया।)

अम्मा आगे बोली- 'बेटी, चिंता मत करो। अम्मा बता रही है न? बेटी अगर सफेद कपड़े ही पहनेगी तो बेटे को दुःख होगा। यहाँ आते समय सफेद कपड़े पहन लेना। घर पर रहते समय और बेटे के साथ घूमते समय पहले की तरह रंगीन कपड़े व गहने पहनना। नहीं तो दूसरे लोग क्या अम्मा पर इलज़ाम नही लगायेंगे? वह बेटा भी अम्मा का ही बेटा है। बेटी परेशान न होना।'

अम्मा की बातों के सामने विजयलक्ष्मी कुछ कह नहीं सकी। उनका मुखमंडल बता रहा था कि अम्मा का सुझाव मंजूर है। इसी बीच एक भक्त ने अम्मा से अपना संदेह निवेदन किया।

कर्म की आवश्यकता

रामचंद्रन- 'अम्मा कई ग्रंथों में लिखा है कि प्राचीन काल के गुरुकुलों में साधना से कर्म को अधिक महत्त्व देते थे। उपनिषदों में कहा है कि कर्म से ईश्वर साक्षात्कार प्राप्त नहीं होता। फिर भी नवागत शिष्यों को गुरु प्रथम दस-पंद्रह वर्षों तक गाय चराने और लकड़ी काटने आदि के लिए क्यों भेजते थे?'

अम्मा- 'बेटे, अंतःकरण की शुद्धि कर्म के बिना नहीं मिल सकती। आध्यात्मिक जीव को सबसे पहले निष्काम भाव चाहिए। कर्म निष्काम भाव की मात्रा जानने के लिए भी कराते थे। यदि कोई निष्काम बुद्धि व त्याग भावना से कर्म करता है तो वह उसकी दृढ़ लक्ष्य-बुद्धि को सूचित करता है। गुरु के वाक्यों के प्रति उसकी समर्पण भावना उसे राजाधिराज बनाती है। त्रिभुवन का स्वामी बनाती है।'

'शिष्यों को स्वीकार करने के पहले उन्हें अच्छी तरह जाँचना, निरीक्षण करना पड़ता है। उत्तम गुरु इसके बाद ही उन्हें शिष्य स्वीकार करते हैं। मूँगफली बेचनेवाले को जौहरी की दूकान का दायित्व सौंपनेवाले हैं। एक मूँगफली खो जाय तो कोई बात नहीं। किंतु हीरा वैसा नहीं। हीरा बहुमूल्य है। आध्यात्मिक जीवन संसार को शांति व समाधान देने के लिए है। उसके लिए आवश्यक श्रद्धा व पक्वता शिष्य में है या नहीं यह देखना गुरु का दायित्व है। नहीं तो उससे संसार को कष्ट ही होता है।'

'एक बार एक युवक आश्रम में स्थायी निवासी बनने आया। गुरु ने उसका उत्साह भंग करने के लिए कहा- अभी तेरा समय नहीं आया है। मगर युवक लौटने को तैयार नहीं था। युवक के हठ करने से गुरु ने मान लिया। गुरु ने उस शिष्य को थोड़ी दूरी पर बसे फलदार वृक्षों के बाग का पहरा देने का काम सौंपा। शाम तक पहरा देने के बाद रात को आश्रम लौटे शिष्य से गुरु ने पूछा- 'तुम ने आज क्या खाया?'

शिष्य ने कहा- 'मैंने अंगूर व सेब तोडकर खाये।'

गुरु ने डाँटा- 'किसने वे फल तोडकर खाने को कहा?'

शिष्य खामोश। दूसरे दिन वह फिर से काम पर गया। उस दिन कोई फल तोड़ा नहीं, ज़मीन पर गिरे फल ही खाये। लौटने पर उस दिन भी गुरु ने डाँटा। दूसरे दिन शिष्य ने कोई फल नहीं खाया। जब भूख तेज हुई तब सिर्फ जंगली पौधो के फल खाकर भूख मिटाई। किंतु वे फल ज़हरीले थे। वह बेहोश गिर पड़ा। उठ नहीं सका। बाग में ही पड़ा रहा। वहाँ पड़े पड़े ही गुरु से क्षमा माँगी। शिष्य का रुदन सुनकर कई लोग पानी ले चले। किंतु शिष्य ने नहीं लिया। उसने स्पष्ट कहा की गुरु की अनुमति के बिना कुछ नहीं खाएगा। उस समय ईश्वर स्वयं प्रत्यक्ष होकर बोले- 'तुम्हारी थकान मैं दूर करूँगा। तुम्हें मैं गुरु के पास पहुँचा दूँगा।' शिष्य राजी नहीं हुआ। उसने कहा- 'नहीं नहीं, मेरे गुरुदेव अनुमति दें, तभी मुझे आप शक्ति दें।' शिष्य में उतनी समर्पण भावना आ गई तो गुरुदेव सामने आये और शिष्य को आशीर्वाद दिया। शिष्य की थकान दूर हुई। उसने गुरुदेव को प्रणाम किया। प्राचीन काल में गुरु इसी प्रकार शिष्यों की योग्यता जाँचते थे।'

रामचंद्रन- 'कभी कभी अम्मा का बच्चे से व्यवहार देखने पर लगता है की अम्मा जो प्रशंसा करती है उससे अधिक उन्नति अम्मा की डाँट ही कराती है।'

क्षमागुण

अम्मा- 'यथार्थ अनुशासन और विनय का विकास होना हो तो गुरु के प्रति भयभक्ति होनी चाहिए। प्रारंभ में बच्चे गुरु के डर से ही पाठ सीखते हैं। कॉलेज पहुँचने पर उनमें स्वयं सुधरने का लक्ष्यबोध होता है। वे उत्साह से सीखते हैं।'

'आध्यात्मिकता में क्षमा ही प्रारंभ से अंत तक आवश्यक गुण है। बीज का छिलका जब तक पूर्णता से न टूटे तब तक वृक्ष बाहर नहीं आता। उसी तरह 'मैं' का भाव पूर्णतः नष्ट किये बिना सत् को नहीं समझ सकते। गुरु कई तरह शिष्य की परीक्षा लेते हैं। वे जानना चाहते हैं कि शिष्य क्षणिक भावुकता से आया है या लक्ष्य के प्रति प्रेम से आया है। वह टेस्ट पेपर के समान है। कोई पूर्व सूचना नहीं देते। शिष्य की क्षमा, त्याग व करुणा की मात्रा जाँचकर जानना गुरु का कर्तव्य है। यह

जानना गुरु का कर्तव्य है कि शिष्य प्रत्येक परिस्थिति में जीतता है या हारता है। शिष्य को कल विश्व का नेतृत्व करना होगा। उस पर आस्था के कारण हजारों लोगों की आने की संभावना है। उनकी आस्था को कायम रखना हो तो शिष्य में आवश्यक शक्ति, पक्वता और करुणा होनी चाहिए। उन सबके बिना, ज़रूरी आत्मशुद्धि पाये बिना, शिष्य संसार में उतरे तो विश्व के प्रति बड़ा धोखा होगा। जिसको विश्व रक्षक होना है वह राक्षस हो जाएगा।'

'गुरु शिष्य को उचित ढंग से ढ़ालने के लिए कितनी ही परीक्षाओं से निकालते हैं। एक बार एक गुरु ने अपने शिष्य के हाथ में एक बड़ी शिला दी और कहा कि इसमें एक अच्छी मूर्ति टाँककर लाओ। आज्ञाकारी शिष्य ने भोजन व निद्रा त्यजकर मूर्ति टाँकी। वह शीघ्र ही उसे गुरुचरणों में अर्पित कर अंजलि बाँधे सिर झुकाये खड़ा रहा। गुरु ने मूर्ति की ओर एक बार देखा। फिर उसे दूर फेंक दिया। मूर्ति चूर-चूर हो गयी। गुरु गुस्से में गरजे- 'क्या मूर्ति इस प्रकार टाँकी जाती है?' शिष्य ने टूटी हुई मूर्ति की तरफ देखा। उसने मन ही मन सोचा- 'इतने दिन खाना व नींद त्यजकर मूर्ति बनाई। इस पर एक अच्छा शब्द तक नहीं कहा।' गुरु ने यह समझकर शिष्य को और एक पत्थर दिया। कहा कि- 'मूर्ति बनाकर लाओ।' शिष्य वह लिए चल दिया।

शिष्य ने बड़ी सावधानी से प्रथम से भी सुंदर मूर्ति तैयार की और गुरु के पास पहुँचायी। शिष्य ने सोचा कि गुरु उसे ज़रूर पसंद करेंगे। मगर मूर्ति को देखते ही गुरु का मुखमंड़ल लाल हो गया- 'क्या तुम मेरा उपहास कर रहे हो? गत बार से यह बहुत खराब है।' उसे भी गुरु ने फेंककर तोड़ ड़ाला। गुरु ने शिष्य के मुखमंड़ल की तरफ देखा। वह पहले की तरह विनय से सिर झुकाये खड़ा था। उसके मन में बदले की इच्छा तो नहीं हुई। फिर भी दुःख हुआ। गुरु ने फिर से एक पत्थर देकर कहा कि-"मूर्ति बना लाओ।"

शिष्य चला गया। उसने बड़े ध्यान से मूर्ति तैयार की। उसे भी गुरु के चरणों पर समर्पण किया। पर नीचे रखते ही गुरुदेव ने उसे भी तोड़ ड़ाला। बुरा-भला भी खूब कहा। अब की बार शिष्य में गुरु के प्रति प्रतिकार की भावना या संताप नहीं हुआ। शिष्य में यही समर्पण भाव था कि गुरु की इच्छा यही हो तो वही सही। उनका कोई भी काम मेरी भलाई

के लिए होगा। ऐसा समर्पण भाव शिष्य में उदय हुआ। गुरुने फिर से पत्थर दिया। शिष्य ने उसे खुशी से स्वीकार किया। वह बड़ी मनोरम मूर्ति बनाकर लाया। गुरु ने उसे भी फेंककर तोड़ डाला। किंतु शिष्य के मुखमंड़ल पर कोई दूसरी प्रतिक्रिया नहीं हुई। गुरु प्रसन्न हुए। उन्होंने शिष्य को गले लगा लिया। उसके सिरपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया।'

'इस गुरु के ये काम देखनेवाले तीसरे व्यक्ति को लग सकता है कि ये कितने दुष्ट हैं। वह गुरु को पागल समझ सकता है। मगर गुरु और शिष्य ही समझ सकते हैं कि वहाँ क्या हो रहा था। गुरु प्रत्येक बार मूर्ति को तोड़ते वक्त शिष्य के हृदय में यथार्थ मूर्ति ढ़ाल रहे थे। जो टूट्य वह शिष्य का घमंड़ था। एक सद्गुरु ही यह कर सकते हैं। यथार्थ शिष्य ही इसका पूरा आनंद अनुभव कर सकता है।'

'शिष्य को समझ लेना चाहिए कि अच्छा-बुरा व उसके लिए आवश्यक-अनावश्यक की जानकारी गुरु में अधिक रहती है। कभी पद प्रतिष्ठा के लिए गुरु के समीप नहीं जाना चाहिए। आत्मसमर्पण को ही लक्ष्य बनाकर जीना चाहिए। अपने विषय में गुरु के अच्छी बातें न कहने पर या अपने कर्मों की प्रशंसा न करने पर यदि गुरु से विद्वेष अन. ुभव हो तो जान लेना चाहिए कि हम शिष्य होने की पूरी योग्यता पा नहीं सके। वह विद्वेष भाव हटाने भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए। गुरु के प्रत्येक कर्म शिष्य की भलाई के लिए ही है यह समझने की क्षमता आनी चाहिए।'

'अगर शिष्य यह सोचकर गुरु को छोड़ जाता है कि मेरे कार्य की प्रशंसा नहीं होगी तो उसके सामने नित्यानंद का दरवाज़ा बंद हो जाता है। धीरज और पक्वता केवल ध्यान से प्राप्त नहीं होती। यह जानकर गुरु कर्म भी देते हैं। ध्यान से प्राप्त होनेवाला गुण उनके कर्मो में व्यक्त होना चाहिए। ध्यान के समय शान्ति एवं ध्यान के बाद अन्य समय अशान्ति - यह सही आध्यात्मिकता का लक्षण नहीं है। किसी भी काम को ध्यान के रूप में देखना चाहिए। उसके बाद वह कर्म नहीं, ध्यान ही है।'

विजयलक्ष्मी- 'मेरे एक साथी ने हालही में श्रीरामकृष्णाश्रम से मंत्रदीक्षा प्राप्त की। अम्मा, मंत्रदीक्षा की आवश्यकता क्या है?'

अम्मा- 'दूध को वैसे रखें तो वह दही नहीं बनेगा। थोड़ा सा दही दूध में ड़ालना चाहिए। तभी वह दही बन जाएगा। उसी प्रकार गुरु से

मिलनेवाला मंत्र शिष्य की आत्मशक्ति को जगाता है।'

'पिता के बीज से जैसे पुत्र जन्म लेता है, वैसे गुरु के प्राणों में शिष्य जीता है। दीक्षा के समय गुरु शिष्य में प्राणों का संचार करते हैं। उसी प्रकार दीक्षा समय पर शिष्य में गुरु के संचारित किये प्राण एवं गुरु का शुद्ध संकल्प शिष्य को पूर्णता प्राप्त करने में मदद देते हैं। दीक्षा समय गुरु अपना धाग शिष्य में पिरोते है।'

विजयलक्ष्मी- 'क्या अम्मा मुझे मंत्र देंगी?'

अम्मा- 'बेटी, अगली बार आएगी तब देखेंगे।'

अम्मा के पास कई भक्त आकर बैठे। एक भक्त ने हाल ही में समाधि पाये एक साधु की चर्चा की।'

भक्त- 'मैं भी समाधि की प्रक्रिया (विधि) देखने गया था। छोटा कक्ष सा तैयार करके उसमें नमक, कर्पूर, भस्म आदि भरके समाधि देते हैं।'

रामचंद्रन- 'नमक व कर्पूर में रखने पर भी क्या शरीर से कीड़े नहीं निकलेंगे?'

अन्य- 'सुना है कि ज्ञानदेव ने समाधिस्थ होने के अनेक वर्षों बाद एक भक्त को स्वप्न में दर्शन दिया। स्वप्न में बताये क्रम से समाधि का ढक्कन खोला तो एक वृक्ष की जड़ों ने उनके शरीर को ढ़क दिया था। शरीर बिलकुल जीर्ण नहीं हुआ था। पेड़ की जड़ों को हटाकर फिर से वह समाधि बंद की थी।'

अम्मा- 'प्राण के चले जाने के बाद जो भी हो, इससे क्या फरक पड़ता है? हमारे शरीर से निकला मल कीड़ों का खाना बनता है तो क्या हम इससे दु:खित होते हैं? शरीर भी वैसा ही है। नश्वर है। शाश्वत केवल आत्मा है।'

आश्रम का ब्रह्मचारी बनने शक्तिप्रसाद आया था। उनके मातापिता ने पुत्र को आश्रम से छुड़ा लेने के लिए न्यायालय में मुकद्मा दायर किया। उसकी खबरें समाचार पत्र में आई थी। एक भक्त ने समाचार पत्र में पढ़ी खबर के बारे में अम्मा से कहा।

अम्मा- "शिवा शिवा शिवा..." कहती कुछ क्षण मौन रहीं।

"हम उनसे कहेंगे। वे इन सब बातों पर ध्यान दिये बिना तपोलोक में रहते हैं। सबके जितनी आँखे हैं उनसे एक आँख अधिक रखते हैं।

फिर भी ध्यान नहीं देते। संसार में उतर आना कठिन है। कष्ट उठाना हमें पड़ता है।"

एक ब्रह्मचारी अम्मा के पास आँसू बहाता बैठा है। अम्मा के अमरीका यात्रा का दुःख है। अम्मा के जाने का दुःख है। अम्मा से दूर तीन मास रहने की बात सोचकर दुःख सह नही पा रहा। अम्मा की विदेशयात्रा के समाचार ने आश्रम के अंतेवासियों में सामान्यतः विषाद फैलाया है। अम्मा पहली बार इतनी लंबी अवधि के लिए आश्रम के बाहर जा रही हैं। कई लोग उसकी याद करते ही फूटफूट कर रो पड़ते हैं।

बेटे के आँसू पोंछते हुए अम्मा ने कहा- 'बेटे, अम्मा ऐसी घड़ियों में देखती है कि कौन उत्तम है। अम्मा यह जानना चाहती है कि क्या तुम लोग अम्मा की अनुपस्थिति में लक्ष्यबोध छोंड़े बिना, निष्ठा छोड़े बिना रहते हो कि नहीं?'

ऐसे क्षण जिनमें अम्मा का वात्सल्य गुरु के अनुशासन के लिए स्थान रिक्त करता है। किंतु उस समय भी वात्सल्य बाँध तोड़कर उमड़ने अधीर रहता है। रोते बच्चों के आँसू देखने पर दिल में पिघलती अम्मा का गुरुभाव भी मातृवात्सल्य में भिगोया हुआ है न?

11

११

१९८६ अगस्त २५ सोमवार

चेप्पाड़ के कुट्टप्पन नायर अम्मा के गृहस्थ भक्त हैं। वे भी प्रारंभ में दूसरों की तरह यही समझते थे की अम्मा में देवी आती हैं। किंतु भावसमय के बाद अम्मा के कार्य व व्यवहार पर ध्यान देने के बाद कुट्टप्पन नायर को संदेह रहित रूप से विदित हो गया कि भावसमय के बाद भी उनमें देवी चैतन्य विराजता है। उनका बड़ा बेटा श्रीकुमार जब से आश्रम में स्थायी निवास करने लगा तब से अम्मा बीचबीच में उस घर पर दर्शन देने जाती थीं। उनके आने पर बच्चों को मेला जैसा आनंद होता है। अम्मा के विश्राम के लिए दक्खिन-पश्चिमी भाग में एक कमरा खाली व सुरक्षित रखा है। अम्मा कभी कभी उसमें प्रवेश कर ध्यानस्थ हो जाती हैं। अम्मा जब बच्चों के साथ आती हैं तब पूजाकक्ष में कीर्तन होता है। अम्मा ही पूजा करती हैं।

अम्मा ने मान लिया था कि कोडुंगल्लूर जाने के रास्ते घर आएगी। दोपहर हो रही थी। किसी ने कुछ खाया-पिया नहीं है। सब ने तय किया था कि अम्मा आज यहाँ आये बिना ही चली जायेंगी। अम्मा के साथ आनेवालों के लिए जो खाना तैयार किया

है उसका क्या किया जाय?

कुट्टपन् नायर ने पूजाकक्ष में प्रवेश कर दरवाज़ा बंद किया। बाहर बच्चों का कोलाहल सुन पड़ा। ध्यान नहीं दिया। उन्होंने अम्मा की तस्वीर को देखते हुए उससे मन ही मन शिकायत की –'अम्मा आना (हाथी) दें, पर आशा न दें।(आशा देकर निराश नहीं करना चाहिए।)

बाहर घंटी की आवाज सी अम्मा की आवाज सुन पड़ी।

'पहले कैसे आ सकते थे? दो बच्चों वाले घर से माँ-बाप यात्रा पर निकलते हैं तो एक-एक काम पूरा करने में कितनी परेशानी होती है? आश्रम में कितनी ही बातों की व्यवस्था करनी थी क्योंकि दो दिन बाद ही वापस आएँगे। कितनी ही बातों पर ध्यान देना है। मज़दूरों की बात, रेत छानने की बात, यात्रा पर न आते बच्चों को सान्त्वना देना है। ऐसे कई काम हैं।'

एक ब्रह्मचारी ने बातें विस्तार से बताईं– "अम्मा सात बजे कमरे से निकली हैं। जल्दी ही लोगों को दर्शन देने के बाद दो नाव भर मिट्टी अम्मा और हम ने घाट से आश्रम पर ढ़ोकर पहुँचायी। तब ग्यारह बज गये। सबेरे कोडुंगल्लूर जाना था। जल्दी में खाना तक खाये बिना निकले हैं।"

भोजन करके निकलने की फुरसत नहीं। अम्मा सीधे पूजा कक्ष में प्रविष्ट हुई। एकाध भजन गाकर पूजा समाप्त कर निकलीं। सारे बच्चों ने अम्मा को घेर लिया।

'अम्मा फिर आएँगीं। अब बड़ी देर हो गई।' बच्चे के चेहरे मुरझा गये। आजकल अम्मा से पहले की तरह खेल संभव नहीं। अम्मा ने सब को मिठाई दी। सहलाकर सांत्वना दी। सबेरे का भोजन बाँधकर गाड़ी में रखा लिया। उस घर पर आये सब को दर्शन देकर अम्मा आगे बढ़ीं। सबने गाड़ी में बैठे बैठे ही खाना खाया - सबेरे का नाश्ता बारह बजे!

एरणाकुलम के पास पहुँचे तो वहाँ ब्रह्मचारी बालू अम्मा की प्रतीक्षा में खड़ा है। बालू आश्रम के काम से कल एरणाकुलम पहुँचा है। उसने अम्मा से कहा कि एरणाकुलम के एक भक्त अम्मा की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

अम्मा- 'वह कैसे हो सकता है? कोडुंगल्लूर के बच्चों ने शुक्र और शनि दो दिन वहाँ जाने को कहा था। इस बेटे को रविवार के दिन जाना है। इसीलिए वह यात्रा आज के लिए बदल दी। कल अंकमाली जाना है। दो दिनों का कार्यक्रम एक दिन तक सीमित कर दिया है। अतएव शीघ्र से शीघ्र वहाँ पहुँचना होगा। नहीं तो उनके प्रति बड़ा अन्याय होगा। किसी घर में न जाने का विचार था। तभी भोजन गाड़ी में रखवा लिया था। रास्ते में कहीं बैठकर खा सकते हैं, एक घर जाने का समय भी बच सकता है।'

गुरु की अनिवार्यता

एक ब्रह्मचारी ने पूछा- 'अम्मा, क्या गुरु की सहायता के बिना साधना व सत्संग से ही लक्ष्य पर नहीं पहुँच सकते?'

अम्मा- 'पुस्तक देखकर पढ़ने से ही मशीनों की मरम्मत नहीं की जा सकती। वर्कशॉप में जाकर काम जाननेवाले किसी के अधीन प्रशिक्षण पाना पड़ेगा। उनके काम को देखकर सीखना चाहिए। उसी तरह साधना के प्रतिबंधों को समझने और उस पर विजय पाकर लक्ष्य तक पहुँचने के लिए गुरु आवश्यक है।'

ब्रह्मचारी- 'शास्त्रों में साधना में आनेवाले विघ्नों पर बताया गया है न? उन्हें पढ़कर तदनुसार चलना क्या काफी नहीं है?'

अम्मा- 'दवा की शीशी के लेबल पर उपयोग का क्रम लिखा है तो भी डाक्टरों के निर्देश के बिना दवा नहीं पीना चाहिए। लेबल पर सामान्य निर्देश ही हैं। डाक्टर ही तय करते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति का स्वास्थ्य, शारीरिक गठन आदि के अनुसार अमुक दवा कितनी मात्रा में देना है। अगर दवा के विषय में कोई गलती हो जाय तो लाभ की जगह हानी ही होगी। इसी तरह आध्यात्मिक तत्त्व एवं साधना के विषय में सत्संग तथा ग्रंथवाचन से बातें समझ सकते हैं। परंतु यदि साधना के ज़रिए निरापद लक्ष्य पर पहुँचना है तो गुरु के बिना काम नहीं हो सकता।'

ब्रह्मचारी- 'क्या सद्गुरु का होना काफी नहीं है? क्या गुरुकुल में

रहने की आवश्यकता है?'

अम्मा- 'बेटे, जब एक पौधा एक जगह से उखाड़कर दूसरी जगह को ले चलते हैं। तब पहली जगह की थोड़ी सी मिट्टी भी पौधे में रहती है। ऐसा रहने पर वह नयी मिट्टी में जल्दी जमेगा। नहीं तो नई मिट्टी से पौधे का मेल खाना मुश्किल होता है। गुरु की सन्निधि उस पुरानी मिट्टी जैसी है जो पौधे को नई परिस्थिति से घुलमिल जाने में सहायता देती है। साधक के लिए प्रारंभ में आध्यात्मिक साधना अबाध गति से करना बहुत कठिन रहेगा। मगर गुरु की सन्निधि सारी बाधाओं को हटाने की ताकत शिष्य को देती है। आध्यात्मिक जीवन में डटे रहने की ताकत देती है।'

'सेब जैसे पेड़ों के विकास के लिए उसके लायक मौसम चाहिए। उचित समय पर पानी और खाद देना चाहिए। उनपर धावा करनेवाले कीड़े-मकोड़े दूर करना चाहिए। उसी तरह गुरुकुल में साधक के लिए उपयुक्त वातावरण प्राप्त होता है। गुरु शिष्य को सारे प्रतिबंधों से छुड़ाते हैं।'

ब्रह्मचारी- 'क्या हमारे पसंद का साधनाक्रम स्वीकार करना काफी होगा?'

अम्मा- 'हमारे लिए कौन सा साधनाक्रम उपयुक्त है यह गुरु ही हमें बताते हैं। क्या आत्मविचार चाहिए या निष्काम सेवा? क्या जप व प्रार्थना ही काफी है? ये सब गुरु ही तय करते हैं। कुछ लोगों की शारीरिक गठन योगसाधना के अनुकूल नहीं होती। कुछ लोगों को लंबे समय तक ध्यान नहीं करना चाहिए। पच्चीस लोगों के चढ़ने लायक नाव पर १५० लोगों को चढ़ाने पर क्या होगा? छोटी मिक्सि को बड़े ग्रैंड़र की तरह चलाना संभव नहीं है। ज़्यादा समय तक चलाने पर गरम होने से जल जायेगा। गुरु शरीर, मन और बुद्धि की स्थिति के अनुसार साधनाक्रम बताते हैं।'

ब्रह्मचारी- 'किंतु कोई भी हो, क्या ध्यान का अभ्यास करना अच्छा नहीं है?'

अम्मा- 'हमारे शरीर व मन की प्रकृति हम से भी अधिक जाननेवाले गुरु हैं। गुरु अधिकारी भेद के अनुसार उपदेश देते हैं।

इन बातों पर ध्यान दिये बिना कहीं से मिली जानकारी के आधार पर साधना शुरू करें तो कभी कभी पागलपन तक हो सकता है। ध्यान क्रमातीत हो तो सिर में ताप बढ़ेगा। नींद नष्ट होगी। गुरु एक-एक व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार बताते हैं कि शरीर के किन भागों पर ध्यान केंद्रित करें, कितना समय ध्यान करें आदि।'

'जब हम एक जगह पहुँचने के इरादे से प्रस्थान करते हैं तब वहाँ स्थायी रूप से रहनेवाले और सारे रास्तों से परिचित व्यक्ति मार्गदर्शक के रूप में मिलें तो हम जल्दी अपनी जगह पर पहुँच सकेंगे। वरना एक घंटे में पहुँचने की जगह पर १०घंटो में पहुँचेंगे। 'नक्शा' होने पर भी दिशाएँ न जानने से भटक सकते हैं। कभी हम लुटेरों, डाकुओं के अड्डे में फँस सकते हैं। किंतु रास्ते के जानकार साथ मिले तो कोई ड़र नहीं रहेगा। आध्यात्मिक साधना में गुरु की भूमिका यही है। गुरु सारे पथों से खूब परिचित होते हैं। साधना के किसी भी स्तर पर बाधाएँ पड़ सकती हैं। ऐसी घड़ी में गुरु के बिना साधना आगे बढ़ाना कठिन है। अतएव सद्गुरु की सन्निधि ही यथार्थ सत्संग है। सब कुछ गुरु में समाहित है।'

अम्मा से आध्यात्मिक संवाद प्रारंभ करते समय पता नहीं चलता कि समय कैसे बीतता जा रहा है। बच्चे की भूख उससे भी अधिक खूब जानती अम्मा ने उनसे पूछा- 'समय क्या हुआ बच्चों?'

'तीन बजे हैं अम्मा।'

'आगे जहाँ छाया मिले वहाँ गाड़ी रोकना। गाड़ी सड़क के किनारे रोकी। वृक्ष की छाया में सभी खाना खाने बैठे। ब्रह्मचारियों ने गीता के १५वें अध्याय का पाठ किया। यात्रा के दौरान भी भोजन के पहले गीता पाठ का क्रम तोड़ना अम्मा को पसंद नहीं है। अम्मा ने बच्चों को भोजन परोस दिया। चावल व चटनी। पीने के लिए ठंडा पानी पास के घर से लाये।

जब वे खाना खा रहे थे तब एक स्कूटर हवा की तेज़ी से भाग रही थी। उस पर बैठे दंपति की तरफ इशारा करके अम्मा ने कहा- 'क्या तुम लोगों को इस प्रकार सैर करने की इच्छा है? अम्मा नहीं कहती कि बिलकुल नहीं होगी। अगर इच्छा हो तो

तुरन्त मनन करके उसे हटाना चाहिए। कल्पना करना कि तुम स्कूटर चलाकर अपने साथी को किसी खड्डे में गिराकर मार डालते हो। फिर वे नहीं आएँगे न?'(अम्मा हँसती हैं।)

सड़क के किनारे भक्तों को दर्शन

सड़क खराब होने के कारण कई लोगों ने सुझाया कि आलुवा से होकर चलें। मगर अम्मा सहमत नहीं हुईं। उन्हीं के बताये रास्ते आगे बढ़े। ञारयक्कल पहुँचने पर वहाँ कुछ लोग सड़क पर अम्मा की प्रतीक्षा में खड़े मिले। संभव है, अम्मा ने उनको लक्ष्य करके आलुवा का मार्ग स्वीकार न किया हो।

उन लोगों ने अम्मा से प्रार्थना की- 'अम्मा, यहाँ उतरिएगा। फिर जाइएगा।'

'बच्चों, अव फुरसत नहीं है, फिर कभी' अम्मा के प्रेम मधुर शब्दों के सामने वे नतमस्तक हो गये । हथेली से 'मत जाओं' का इशारा करती एक महिला गाड़ी के छूटते समय दौड़ी आती है। गाड़ी फिर से रुकी।

भक्ता- 'अम्मा, सबेरे दस बजे से ब्रह्मचारी बच्चों की काफी घर पर तैयार करके अम्मा की प्रतीक्षा में यहाँ खड़ी थी। अभी अभी घर गई। अम्मा घर पर उतरकर ही जाना।'

अम्मा ने देर होने के कारण घर जाने की असुविधा बताई।

भक्ता- 'ऐसा नहीं हो सकता, अम्मा एक बार आकर ही जाइएगा। आइए न अम्मा।'

अम्मा- 'कहा था कि तीन बजे कोडुंगल्लूर पहुँचेंगे। अब चार बज चुके। फिर कभी उतरूँगी। आगे कभी कोडुंगल्लूर जाऊँगी तब।'

अम्मा ने किसी तरह उस महिला को मनाया।

भक्त महिला- 'तो एक मिनिट। मैं बेटे को घर भेजूँगी। अम्मा के लिए फ्लास्क में दूध गरम कर रखा है। वह लाऊँगी। पीकर ही जाना।'

उसके भक्तिभरे हठ के सामने अम्मा झुक गईं। उन्होंने पास खड़े

बालक को घर को दौड़ाया। उस समय वहाँ आई एक वृद्ध माता ने अम्मा के गले पर फूलों का हार पहनाया। अम्मा ने उनके दोनों हाथ पकड़ उन्हें आशीर्वाद दिया। भक्तिविभोर वृद्धा की आँखें सजल थे।

बालक दूध लेकर आया। भक्त महिला ने उसे गिलास में ड़ालकर अम्मा को दिया। तभी उन्हें स्मरण आया कि ब्रह्मचारियों के लिए केले उबालकर रखे थे। भक्ता ने बालक को फिर से घर भेजा। वे केले भी गाड़ी में रखवाकर ही उन्होंने अम्मा को आगे बढ़ने दिया। अम्मा भक्त पराधीन हैं। पाँच बजे तक कोडुंगल्लूर पहुँचे। सात बजे भक्तिगानसुधा प्रारंभ हुई। अम्मा के दिव्य कंठ से निर्गलित नादब्रह्म भक्ति की ज्वार उठाता अंतरिक्ष में तरंगित हो उठा।

१९८६ सितंबर २ मंगलवार

अम्मा पर्णशाला में बैठी हैं। भक्तगण अम्मा के दर्शन करने आ रहे थे। कुंड़रा गाँव के एक ड़ॉक्टर परिवार सहित आये हैं। ड़ाक्टर की बेटी अम्मा के समीप बैठकर ध्यान कर रही है।

पिछले दिन पड़ोसियों के मचाये झमेले की बात अम्मा ने बताई- 'कल बच्चे अच्छे वेदमंत्र सुन सके। पड़ोसी इतना सुना गये कि कुछ शेष न रह गया। बच्चों ने टेप ज़ोर से बजाया ताकि वे शब्द कानों में न पड़ें। बच्चे कैसे जवाब देते? उनकी पोशाक यह ठहरी न?'

अम्मा ने बच्चों से कहा- 'बच्चों, हम याचक हैं। याचक कुछ भी सुने सहन करेंगे। हमें अब याचक की भावना ज़रूरी है। इसके अलावा उनके दो शब्द सुनकर हम अविवेकी हो हंगामा मचावें तो हमारी शान्ति नष्ट हो जाएगी। इतने दिनों तक साधना करके हमने जो शक्ति प्राप्त की वह क्या इतनी निस्सार बातों पर गँवाने की है? हम गौर न करें तो उनकी बातें उन्हीं में रहेंगी। हम उनको महत्त्व दें तभी वे हम पर पड़ेंगी। भगवान उनके ज़रिए हमारी परीक्षा ले रहे हैं। हम सीखते हैं - मैं शरीर नहीं, मन नहीं, बुद्धि नहीं, आदि। भगवान ने यह दिखाने का मौका दिया कि वे शब्द हमने कहाँ तक अपनाए हैं? क्या हमारा मन दूसरों

के एक शब्द पर निर्भर है? क्या हमारी शान्ति व समाधान उन पर आश्रित है?'

'वे क्या एक बदमाश से यह बदमाशी दिखा सकेंगे? इन बच्चों से ही ऐसा व्यवहार कर सकेंगे न? ये भोले हैं न? आज ये छोटे बच्चों के समान हैं। उन्होंने क्या कहा? मालूम है? अम्मा को उसका इतना हंगामा मचाने पर भी गाली देने पर भी कुछ कहने की इच्छा नहीं हुई। लगा, एक सनकी आदमी कुछ बक रहा है। क्या कोई पागल के शब्दों को महत्त्व देगा?'

ड़ाक्टर- 'अम्मा, हमारे अस्पताल के समीप के घरवाले दूसरों के माँगने पर भी पानी नहीं पिलाते हैं। नल से न लेकर कुएँ से पानी भर लेने की अनुमति माँगने पर भी अनुमति नहीं देते। कहते हैं कि कुएँ से पानी बाल्टी में निकालने से पानी मैला हो जायेगा। अस्पताल के रोगियों के माँगने पर भी पानी नहीं देते हैं। इतने दुष्ट लोग अब भी है।'

अम्मा- 'हम प्रार्थना करें कि उन्हें अच्छा मन मिले।'

ड़ाक्टर- 'ईश्वर ही समुद्र का खारा पानी भाँप बनाकर वर्षा कराते हैं। उस जल पर अपना दावा करते देखकर दुःख होता है।'

अम्मा- (ड़ाक्टर की बेटी को देखकर) 'बेटी यहाँ आते ही ध्यानस्थ हो गई है। क्या बात है?'

ड़ाक्टर- 'अम्मा ने जब उसे पहली बार देखा तब बताया 'ध्यान करना। तभी भगवान बुद्धि देंगे।' उसी दिन से ध्यान करने लगी है।'

एक भक्त महिला अम्मा को प्रणाम कर उठी तो अम्मा ने पूछा- 'क्या सतीश बेटे के कहने से बेटी आयी हो?'

अम्मा का यह प्रश्न सुनकर उस महिला की आँखें आश्चर्य से विस्फारित हो गई। वह रो पड़ी। अम्मा ने उसके आँसू पोंछ ड़ाले। कुछ शान्त हो गयी तो उन्होंने कहा- 'हाँ अम्मा, मैं दिल्ली से आ रही हूँ। शिवगिरी गई थी। वहाँ सतीश से मुलाकात हुई। सतीश से ही अम्मा के बारें में जाना। इस स्थान का रास्ता भी मालूम हुआ। मैंने अम्मा को प्रणाम करते समय मन में सोचा- 'कल मैंने जिस व्यक्ति के साथ बातें की उसका नाम क्या अम्मा बता सकेंगी? यों

सोचती उठी तभी अम्मा ने वह प्रश्न पूछा।'

अम्मा हँस पड़ीं। छोटे बालक जैसा निश्छल मंदहास! वे अम्मा की खाट से सटी बैठ गईं। अम्मा अन्य भक्तों को दर्शन देकर कमरे की तरफ चलीं तो शाम के चार बजे थे।

कायल के तीर पर ध्यान व कीर्तन

दो ब्रह्मचारी खरीदी के लिए एरणाकुलम गये हैं। रात बहुत हो गई है। फिर भी वे लौटे नहीं हैं। अम्मा उनकी प्रतीक्षा में कायल के तीर पर बैठी हैं। पास ब्रह्मचारी भी हैं। आश्रम से ब्रह्मचारी जब गाड़ी लेकर बाहर जाते तब वे नियत समय पर न आते तो रात को चाहे कितनी भी देरी हो, अम्मा घाट पर प्रतीक्षा करती हैं। ब्रह्मचारियों के आ जाने की सूचना मिलने के बाद ही कमरे में लौटती हैं।

एंजिनवाली नाव कायल से तेज़ी से आगे बढ़ी। लहरें लगातार तेज हो उठीं। थोड़ी देर में वे धीमी धीमी होती थम गईं।

अम्मा- 'गये लोग कभी कभी देर से ही लौटते हैं। तब तक व्यर्थ न बैठना। ध्यान करो। सब अम्मा के चारों ओर इकट्ठे हुए। पहले कई बार ओंकार दुहरायेंगे। जपते समय प्रत्येक बार मूलाधार से निकली ध्वनि सहस्रार तक का स्पर्श करके पूरे शरीर में व्याप्त हो निश्शब्दता में लीन हों जाती है, ऐसी कल्पना करनी चाहिए।'

अम्मा ने ओंकार का जप किया। सब ने उसे दुहराया। प्रत्येक बार थोड़ा अन्तराल देकर ही अगला ओंकार जपते थे। प्रणवध्वनि निशा की शान्ति में अंतरिक्ष में गूँज उठी।

अम्मा के निर्देशानुसार सब ने अम्मा के साथ प्रणवमंत्र दुहराया। ध्वनि शंखनाद सी उठी। क्रमशः घुलते घुलते वह समाप्त हो गयी। उसके साथ सब ध्यान में लीन हुए। पश्चिमी सागर की गर्जन और पवन के सीत्कार को छोड़ शेष अंतरिक्ष मौन।

करीब दो घंटे बीत गये। अम्मा के साथ सब ने सम्मिलित रूप से फिर से एक बार प्रणवजप किया। उसके बाद अम्मा ने एक भजन गाया। सब ने दुहराया।

अद्‌भुत चरित्रे अमर वंदिते
त्वत्पदभक्ति की शक्ति दीजिये।
अंधता से किये सारे कर्म
आर्त बंधु तुम पर अर्पित करता हूँ।
अधीरता से किये सारे जल्पन
क्षितिनाथे! क्षमा करना!
फुल्ल उद्यतभानु किरणों जैसे
मेरे हृदयतट पर उल्लसित हो अंबिके!
ज़रा भी भेदबुद्धि दिये बिना तुम
तुल्यभाव बोध दिजिए।
सर्वकर्म पुण्यपाप कारिणी!
सर्वबंध भेदिनी महेश्वरी!
सर्व तत्त्वसार मुक्त पथ पर
धर्ममूल पथ की रक्षा कीजिए।

कीर्तन जिस क्षण संपन्न हुआ उस क्षण में दूसरे पार आश्रम की गाड़ी का भोंपू सुनायी दिया। साथ ही गाड़ी की जलती बत्तियाँ भी दिखायी दीं।

'बच्चों, क्या हमारी गाड़ी है?' अम्मा झट उठीं। नाव ब्रह्मचारियों को लिये किनारे लगी। गहरी रात में भी अम्मा को प्रतीक्षा में खड़े देखकर बच्चों के आनंद का ठिकाना नहीं था। चिरकाल के बाद अम्मा को देखने का आनंद! वे नाव से कूद पड़े और दौड़े आकर प्रणाम किया।

दूसरे ब्रह्मचारियोंने सामान नाव से उतारा और किनारे पहुँचाया। उनके बीच में ब्रह्मचारी रामकृष्णन् नही दिखायी पड़ा तो अम्मा ने पूछा- 'बेटा, रामकृष्णन् क्यों नहीं आया?'

'तुरंत आयेगा। छुरे की चोट खाये एक व्यक्ति को लेकर अस्पताल गया है। हमारे आते समय तीन-चार आदमी वहाँ आये। वे कही मारपीट करके एक घायल आदमी को कंधों पर उठाये आ गये। वे घायल को अस्पताल पहुँचाना चाहते थे। तुरंत हमारी गाड़ी माँग रहे थे। पहले बताया कि अम्मा से अनुमति लेकर ही गाड़ी

दे सकते हैं। मगर दूसरी गाड़ी नहीं मिली। रामकृष्णन् उन्हें लेकर अस्पताल गया है।'

अम्मा- 'ऐसी परिस्थिति में अम्मा से अनुमति लेने की देरी न करना। बीमार व घायल को लाते हैं तो तुरंत उन्हें अस्पताल पहुँचाना चाहिए। शत्रु-मित्र का अंतर नहीं देखना चाहिए। ऐसी घड़ी में सेवा न कर सके तो फिर कब सेवा कर सकेंगे?

ब्रह्मचारी रामकृष्णन् रात को ढ़ाई बजे ही पहुँचा। उसके बाद ही अम्मा अपने कमरे में गईं।

१९८६ सितंबर १४ रविवार

प्रार्थना मंदिर का निर्माण कार्य चल रहा था। इसलिए आश्रम का पूरा अहाता अस्तव्यस्त पड़ा था। पत्थर व ईंटें बिखरी पड़ी हैं। सब को ठीकठाक करने पर भी दूसरे दिन पहले की सी हालत हो जाती है। निर्माण कार्य पूरा होने पर ही सब साफ हो पाएगा।

आश्रम के अहाते का गंदा रहना अम्मा को बिलकुल पसंद नहीं। इसलिए इन दिनों अम्मा जब कभी कमरे से निकलती हैं तो चारों तरफ की सफाई किये बिना कमरे में नहीं लौटती।

अम्मा सबेरे ही नीचे आ गईं। उन्होंने ब्रह्मचारियों को कुदाली व टोकरा लाने का निर्देश दिया। आँगन में एक जगह जमी पड़ी मिट्टी हटाने लगे। अम्मा ही टोकरे में मिट्टी भरती। अम्मा के सिर पर गमछे का छोटा साफा भी बाँधा है। अम्मा बड़े उत्साह से काम कर रही हैं। अम्मा का उत्साह दूसरों में भी संक्रमित हुआ। काम के बीच में एक ब्रह्मचारी अविराम बातचीत कर रहा था। यह देख अम्मा ने कहा- 'बच्चों, काम करते समय बातचीत किये बिना मंत्र जपो। यह तुम्हारी साधना है, न कि मामूली काम। कोई भी काम करते समय मन में मंत्रजप न छोड़ना। तभी वह कर्मयोग होगा। यह पढ़ने, कहने या सुनने से लाभ नहीं। प्रयोग में लाने की कोशिश करनी चाहिए। इसीलिए कहते हैं कि ऐसे काम करें। मन को ईश्वर से एक क्षण भी दूर नहीं रखना चाहिए।'

अम्मा भजन गाने लगीं। सबने दुहराया-

नंदकुमारा गोपाला

वृंदावन के सुन्दरबाला
मोहन राधे श्याम गोपाला
मोहन मुरलीधारी गोपाला
गोर्वधनगिरीधारी गोपाला
गोपी मानसलोला गोपाला

मिट्टी का छोटा टीला क्षणों में गायब। आज दो दिशाओं में मिट्टी गिट्टी सफाई और रेत छानने का काम शुरू हो गया।

एक भक्त परिवार सहित अम्मा के दर्शनों के लिए आया है। वे अपने बच्चे का अन्नप्राशन अम्मा से कराना चाहते हैं। जो काम चल रहा था उसे करीव करीब पूरा करने के बाद अम्मा उस भक्त परिवार के साथ कलरिमंड़प पर पहुँचीं। तब तक वहाँ अन्नप्राशन की पूरी तैयारी हो चुकी थी। अम्माने बच्चे को अपनी गोदी में बिठाया। उसके माथे पर चंदन लगाया। फूल चढ़ाये। बच्चे की कर्पूर आरती उतारी। उसके बाद थोड़ी देर उसे दुलारती रहीं। इसके बीच अन्न भी दे दिया। यह देखनेवाले को लग सकता है कि कहीं नंदलाल को दुलारती यशोदा तो नहीं? अम्मा के लिए कोई भी बच्चा मामूली शिशु नहीं, साक्षात् नंदलाल है।

कलरिमंड़प से अम्मा भक्तों को दर्शन देने पर्णशाला चलीं।

शाम को अम्मा नीचे आ रही थीं, दो ब्रह्मचारी ध्यान मंड़प पर बैठे गरम बहस में लगे थे। खिड़की के पीछे खड़ी अम्मा ने उनकी बातचीत पर गौर किया। बहस में डूबे ब्रह्मचारियों को इसका पता नहीं लगा।

प्रथम ब्रह्मचारी- 'अद्वैत ही परम सत्य है। ब्रह्म के सिवा और कुछ नहीं है।'

द्वितीय ब्रह्मचारी- 'यदि ब्रह्म के अलावा और कुछ नहीं है तो जगत् के अनुभव की बुनियाद क्या है?'

प्रथम- 'अज्ञान। प्रपंच मनःकल्पित है।'

द्वितीय- 'जब दो नहीं हैं तब अज्ञान ने किसे बाधित किया? क्या ब्रह्म को?'

'बच्चों' अम्मा ने पुकारा। अम्मा की आवाज़ सुनकर उन्होंने झट

मुड़कर देखा। अम्मा को देखकर दोनों मौन हो गये।

अम्मा- 'बच्चों, अद्वैत बताना अच्छा लगता है। मगर उसका अनुभव करने साधना अनिवार्य है। किसी पराये की दौलत का पहरेदार होने से क्या लाभ? इसलिए बहस में समय न गँवाकर साधना करो। हमारी संपत्ति वही है। सदा जप करना चाहिए। तभी कुछ पा सकेंगे। हमारे भीतर जो कुछ संजोया है, उसे हटाने का यही उपाय है।'

'मधुमख्खी कहीं भी जाय उसका ध्यान मधु पर ही होता है। और कोई चीज़ उसे आकर्षित नहीं कर सकती। लेकिन मामूली मक्खी गुलाब के बाग में भी मल पर बैठने की रुचि रखती है। अब हमारा मन मक्खी जैसा है। वह बदलना चाहिए। जैसे मधुमक्खी हर कहीं मधु चखती है वैसे हमारे मन हर कहीं भलाई ही देखें। बच्चों, उसके लिए केवल चर्चा से लाभ नहीं है। सीखी बातें जीवन में अमल में लानी चाहिए। अद्वैत ही सत्य है। परन्तु उसे जीवन में उतारना चाहिए। किसी भी परिस्थिति में उसी सत्य पर दृढ़ रहने की शक्ति होनी चाहिए।'

अंध युवक को आश्वस्त करती अम्मा

अम्मा अतिथिभवन की दिशा में चलीं। वहाँ खड़े एक अंधयुवक ने अम्मा को आयी जानकर उन चरणों पर प्रणाम किया। वह कुछ दिनों से आश्रम में रहता है। आज वह बहुत दुःखित है।

आश्रम में आने के बाद ब्रह्मचारीगण उसकी सारी बातों में मदद देते हैं। भोजन को ले जाना, दैनिक कार्यों में सहायता करना आदि।

दोपहर के भोजन के लिए बहुत सारे भक्त थे। चावल जल्दी खतम हो गया। फिर से चावल चूल्हे पर चढ़ाया है। भीड़ के बीच ब्रह्मचारी पहली ही पारी में अंधयुवक को भोजन पर ले जा नहीं सका। वह उसे ले जाने पहुँचा तो अंधयुवक एक भक्त की मदद से सीढ़ीयाँ उतरकर आ रहा था। ब्रह्मचारी ने कहा- 'क्षमा करना, भीड़ के कारण पहली ही पारी के लिए ले आना भूल गया। भीड़ बहुत है। पहली बार पकाया चावल खत्म हो गया। दुबारा तैयार हो रहा है। अभी तैयार होगा।'

मगर युवक क्षमा नहीं कर सका।

'मेरे पास पैसे हैं। पैसे देने से चावल मिलने में क्या मुश्किल है?' इतना गुस्से में कहकर वापस अपने कमरे में गया।

यद्यपि उसने क्रोध से बातें कीं तो भी ब्रह्मचारी ने सोचा कि बेचारा भूख के मारे यों बोला। उसने कमरे में कुछ फल ले जाकर कहा- 'चावल अभी तैयार होगा। मैं यहाँ ला दूँगा। तब तक यह खा लो।' किंतु क्रोध शान्त न होने से युवक फिर से झल्ला उठा। वह फल खाने राज़ी नहीं हुआ।

खबर सुनकर अम्मा पहुँचीं। अम्मा ने गंभीर भाव से कहा- 'तुम लोग कितने लापरवाह हो? तुमने क्यों समय पर उस बच्चे को खाना नहीं दिया? वह बच्चा देख नहीं सकता। अपने आप आ नहीं सकता। यह तुम्हें मालूम था। ले जाने या आने में समय लगता तो एक बर्तन में उस बच्चे के कमरे में भोजन पहुँचा सकते थे। ऐसे लोगों पर करुणा न करें, तो फिर किन पर करुणा करेंगे?'

'बच्चों, भक्तों की सेवा करने का जो भी मौका मिले उसे हाथ से छूटने न देना। हमारी सुविधा के अनुसार सेवा स्वीकार करनेवाले शायद न मिलें। ऐसे लोगों के लिए की जानेवाली सेवा ही यथार्थ पूजा है। अगर उस बच्चे में देखने की शक्ति होती तो घंटी बजते ही वह भोजन पर आ जाता।'

अम्मा ने उस युवक की पीठ सहलाते हुए पूछा- 'बेटा, क्या बहुत परेशान हो गया? काम की व्यग्रता के कारण बच्चे घंटी बजते ही बेटे को ले जा नहीं सके। बेटे को रोज़ जो ब्रह्मचारी ले जाता है वह यहाँ नहीं था। उसने जिस ब्रह्मचारी को यह काम सौंपा था वह भीड़ के कारण परोसनेवालों की मदद करने गया। उस बीच बेटे की बात भूल गया। इसीलिए समय पर कोई बुलाने नहीं आया। बेटा यह न सोचना कि जानबूझकर नहीं आये।'

'बेटा, कहीं भी जाओ, वहाँ की परिस्थिति के अनुसार रहना चाहिए। हर बात पर धीरज चाहिए। आश्रम आनेपर हमें त्याग स्वीकार कर जीना सीखना चाहिए। तभी ईश्वर की कृपा पा सकते हैं। बेटा, इसे आश्रम जानकर यहाँ कोई कमी हो तब भी सहन करने, क्षमा करने की शक्ति होनी चाहिए। अम्मा और आश्रम से

नाता उसीमें है।'

उसकी आँखें बरसने लगीं। अम्मा ने आँखें पोंछते हुए पूछा- 'बेटे ने कुछ खाया?' युवक ने 'नहीं' के अर्थ में सिर हिलाया। अम्मा ने पास खड़े ब्रह्मचारी से भोजन लाने को कहा। अम्मा ज़मीन पर बैठ गईं। युवक को हाथ थामकर पास बिठाया। ब्रह्मचारी एक बर्तन में चावल, भाजी ले आया। अम्मा ने वह लेकर अपने हाथ से कौर बनाकर युवक को खिलाया। अम्मा की प्रेमधारा के सामने वह युवक एक नन्हा बच्चा हो गया। अम्मा ने युवक का हाथ पकड़ उठाया। नल के पास ले जाकर हाथ धुलाने के बाद वापस कमरे में पहुँचाया। वह युवक के हृदय की धड़कने बताती होंगी कि,

आँख न होने पर भी मैंने आज
दिल की आँख से माँ को देखा...

१९८६ सितंबर १७ सोमवार

आश्रम पर ओणम की दावत

तिरुओणम (सितंबर मास का श्रवणी नक्षत्र का दिन) केरलीयों के लिए हर्षोल्लास का दिन है। परिवार के सारे लोगों को एकत्र होकर आनंदित होने का दिवस है। देश के भिन्न-भिन्न भागों से अम्मा के भक्त तिरुओणम अम्मा के साथ मनाने के लिए कल से आते रहे हैं। छोटे बच्चे बड़ी संख्या में हैं। अम्मा बच्चों से हिलमिल गईं। उन्होंने चारों तरफ खड़े हाथ मिलाये अम्मा को बंधनस्थ कर दिया। कहीं अम्मा उन्हें छोड़ चली जायें तो? साधारणत: ओणम के कुछ दिन पहले ही झूला तैयार होता था। अम्मा बच्चों के साथ झूले पर झूला करती। अब की बार झूला तैयार नहीं। प्रार्थना मंदिर का काम, भीड़ और जगह की कमी के कारण वह हो नहीं सका। बालगोपालों को एक साथ देखने पर अम्मा को तुरंत झूला चाहिए। ब्रह्मचारी नेडुमुडी और ब्रह्मचारी कुंजुमोन मिलकर झूले की तैयारी करने लगे। प्रार्थना मंदिर के लिए ढ़ाले गये दो कॉंक्रिट स्तंभों के बीच में लकड़ी का लंबा लट्ठा

रखकर उन्होंने झूला तैयार किया। बच्चे अम्मा को झूले पर बिठाकर झुलाने लगे। हर जगह खुशी की फूलझरियाँ!

अम्मा भी अपने बच्चों के लिए दावत की तैयारी में व्यस्त हो गईं। सब्जी काटने, चूल्हा जलाने - जहाँ देखो वहाँ अम्मा हाज़िर थीं। दोपहर को अम्मा ने सभी बालगोपालों को भोजन कक्ष के उत्तर-पश्चिमी कमरे में बिठाया। उनके मध्य में बैठकर अम्मा ने सब से ओंकार का जप कराया। अम्मा ओंकार जपती और बच्चे ज़ोर से दुहराते। थोड़ी देर के लिए आश्रम का पूरा वातावरण प्रणवध्वनि से मुखरित हो उठा। बच्चों के निश्छल हृदयों से उठे ओंकार ने अंतरिक्ष में शीतलता भर दी। अम्मा के कहने से सारे बच्चों के लिए पत्तल बिछाये। भोज्य वस्तु अभी-अभी पकाकर चूल्हे से नीचे उतार रखी हैं। बड़े पात्रों से छोटे-छोटे पात्रों में परोसने के लिए भरा नहीं है। पापड़ तले नहीं। मगर अम्मा बच्चों को भोजन कराने अधीर हैं। सब्जियाँ छोटे-छोटे बर्तन में लेकर अम्मा ने अपने सामने रखीं। अम्मा ने खुद बच्चों के लिए केले के पत्तों पर सब परोस दिया। उससे भी अम्मा का जी नहीं भरा। उन्होंने प्रत्येक बालक के सामने बैठकर उनके सामने परोसे हुए चावल से एक एक कौर बनाकर प्रत्येक बालक को खिलाया।

अम्मा ने जब तक बच्चों को खिलाया तब तक अम्मा के बड़े बच्चे - गृहस्थ एवं ब्रह्मचारी बगलवाले दो कमरों में बैठ गये। अम्मा ने खुद सबको परोसा। अम्मा के गृहस्थ भक्त इसी घड़ी के लिए दूर-दूर से अपने बंधुमित्रों को छोड़ अम्मा की सन्निधि में पहुँचते हैं। अन्नपूर्णेश्वरी ने अपने हाथ से अन्न देकर उन्हें संतुष्ट किया।

खाने के बीच शायद अनजाने मिर्च काटने के कारण किसी के मुँह से 'हाय रे!' शब्द निकल पड़ा। वह सुनकर अम्मा ने कहा- 'बच्चे कुछ भी हो, 'हाय रे' नहीं कहते 'माँ' ही कहते हैं। 'हाय रे' की पुकार बड़े होने पर आती है। किसी भी परिस्थिती में किसी भी समय जीभ पर ईश्वर मंत्र आना चाहिए। ऐसा होने के लिए मन से अभ्यास कराना चाहिए। इसीलिए हमेशा मंत्र जपने का उपदेश देते हैं। बच्चे मन को सीख दें कि ठोकर लगते समय भी *कृष्णा, शिवा* पुकारें।'

एक भक्त महिला- 'ऐसे कहते हैं कि 'हाय रे' पुकारना यमराज को बुलाना है।'

अम्मा- 'सही है। ईश्वर नाम का उच्चारण जिन क्षणों में नहीं करते उनमें हम यमराज की ओर बढ़ रहे हैं। ईश्वर नाम छोड़ और कोई भी शब्द यमराज को निमंत्रण देना है। इसलिए अगर नहीं मरना है तो ईश्वर का नाम जपना।'(अम्मा हँसती हैं)

बच्चों को खीर देने के बाद अम्मा ने ही नींबू भी दिया। अम्मा ने इसी मौके पर बच्चों को पेट भरने के साथ मन में आध्यात्मिक चिंतन का बीज बोने के लिए समय का सदुपयोग किया।

'बच्चों, खीर और नींबू भक्ति व ज्ञान के समान हैं। नींबू तो खीर को पचाने के लिए है। उसी तरह भक्ति का तत्त्व समझकर अपनाने में ज्ञान मदद देता है। भक्ति को अधिक रोचक बनाने के लिए ज्ञान चाहिए। किंतु भक्ति से रहित ज्ञान कडुआ लगेगा। जो *अहम् ब्रह्मास्मि* कहते हैं उनमें करुणा नहीं मिलती। भक्ति वही कारुण्य है।'

यथार्थ गुरु उपदेश देने अलग से समय निर्धारित नहीं करते। वे यही देखते हैं कि किस समय बताने से शिष्य वाक्यों को पूर्णतः आत्मसात करेगा। अम्मा के जीवन में इसका अनुभव कई बार पाया जा सकता है। आध्यात्मिक विद्या का अध्ययन करने गुरु के साथ शिष्य के रहने की ज़रूरत जो बतायी जाती है उसका मर्म भी यही हो सकता है। प्राचीन गुरुकुलों में जिन्होंने अध्ययन किया उनमें जो आज्ञाकारिता व स्वभावशुद्धि थी वह वर्तमान विद्यार्थियों में नहीं मिलती। सो अचरज की बात नहीं है। गुरु उचित समय पर उचित निर्देश व उपदेश दिया करते थे। आज गुरु-शिष्य संबंध नहीं है। वर्ग लेक्चर में सीमित रहता है। हम जब प्राचीनता को छोड़ नवीनता के पीछे पड़ते हैं, तब हम कई बार नहीं जान पाते कि हाथ से क्या छूट रहा है!

प्रत्येक बच्चे को देखते समय अम्मा यह पूछना नहीं भूलती थी कि क्या भोजन कर लिया? एक कुटुम्ब प्रमुख की तरह अम्मा प्रत्येक बच्चे की हर बात का ध्यान रखती है। हर वर्ष ओणम पर काफी पहले से आया करता एक भक्तपरिवार उस वर्ष बड़े विलंब

से आया। अब की बार उन्हें देखते ही अम्मा ने देर करने का कारण और बच्चों की पढ़ाई आदि के संदर्भ में पूछताछ की।

भोजन के बाद ब्रह्मचारियों और गृहस्थों ने मिलकर आश्रम का अहाता साफ करना शुरू किया। एक सप्ताह बाद अम्मा का जन्मदिन है। उसकी तैयारियाँ अभी शुरू हुई हैं।

आश्रम में बहुत काम चल रहे हैं। इसलिए परिसर पूरा अस्तव्यस्त पड़ा है। कीर्तन के बाद भी काम चालू रहा। तब तक अम्मा भी आ गईं। नये भवन का काम जहाँ हो रहा था उसके सामने जो दरार, गड्ढे आदि थे उनमें गिट्टी भरकर समतल बनाया गया। सफ़ेद रेत बिछाई गयी। रात्रि भोजन के बाद सभी उस रेतीली जगह पर अम्मा के चारों ओर बैठ गये। गृहस्थ भक्त डॉ. रामचंद्रन, केशव मल्लन, पप्पेट्टन्, जर्मनीवासी मार्कोस आदि और ब्रह्मचारी हैं। थोड़ी देर बातें करने के बाद अम्मा एक भक्त महिला की गोद में सिर रखे लेट गईं। इसी समय कोल्लम का एक भक्त परिवार अम्मा के लिए ओणम की खीर लेकर आ गया। वे भी अम्मा के पास बैठ गये। अम्मा ने मार्कोस को देख हँसतें हुए कहा- 'देखो उसका गंजा सिर।' सबने मार्कोस के सिर की तरफ देखा। अति विस्तृत माथा। मानो उसकी सुंदरता बढ़ाने कुछ केश खड़े हैं।

अम्मा- (मार्कोस को लक्ष्य करके) 'धूप या बारिश, रात हो या दिन हमेशा काम ही काम करता है।'

मार्कोस- 'जन्मदिन की ज़रूरत के लिए कुछ जगह की आवश्यकता बतायी गयी। इसलिए अब खेती करने जगह नहीं। (अपना सिर दिखाते हुए) अब खेती यहीं पर होगी।' (सब हँस पड़ते है)

एक भक्त- 'शायद इसीलिए कि वहाँ कीचड़ भरी है।(अम्मा और सभी हँसते हैं।)

और एक भक्त- 'उसी को चेरत्तला(मलयालम में चेर का अर्थ कीचड़ है और तला का अर्थ है सिर) कहते है।'(मल्लन चेर्त्तला का निवासी है।)

एक ब्रह्मचारी घर से लौट आया। अम्मा को प्रणाम करके बैठ गया।

अम्मा- (ब्रह्मचारी से) 'बेटे के घर जाते समय अम्मा ने कहा था न कि आज बेटा लौटेगा तो खीर खिलाऊँगी।'

ब्रह्मचारी- 'उसके लिए अब खीर कहाँ? दोपहर की खीर समाप्त हुई होगी न?'

अम्मा- 'सो भगवान ला देंगे। क्या वे अम्मा के शब्दों को असत्य बना सकते हैं।'

कोल्लम के घरवाले जो खीर लाये उसे अम्मा ने उस ब्रह्मचारी को और उपस्थित अन्य लोगों में बाँट दिया। खीर में से एक काजू अम्मा ने खाया। एक बालक खीर से काजू निकाल निकालकर अम्मा को देता रहा।

अम्मा- 'खाली काजू अम्मा को पसंद नहीं। बच्चे जो कुछ लाते हैं वह सब कमरे में पड़ा है। अम्मा नहीं लेती। खीर और सब्जी में जो दिखाई पड़ता है वह कभी कभी अम्मा लेकर खाती है। एक किसमिस, इलायची व काजू हथेली में लिये अम्मा बोलीं- ये चीज़ें खीर का स्वाद बढ़ाती हैं। उसी प्रकार आध्यात्मिक तत्त्व जीवन को मिठास देते हैं।'

त्यागी जब घर जावें

घर हो आये ब्रह्मचारी से अम्मा ने कहा- 'बच्चे बताते हैं मेरा कोई रिश्तेदार नहीं, अपना नहीं आदि। मगर तुम लोग वहाँ जाते हो। उसी समय बड़ी बंधुता का दावा करनेवाले यहाँ आकर नहीं मिलते। हर काम बड़ी सावधानी से सोच-विचारकर करना चाहिए। हमारा ओणम आध्यात्मिक है। जब हम संसार के सामने एक भूमिका ग्रहण करते हैं तब उस भूमिका का अभिनय खूब करना चाहिए। 'मैं' का भाव छोड़ने के लिए तुम लोगों ने आध्यात्मिक जीवन स्वीकार किया है। मेरे पिता, मेरा भाई, रिश्तेदार सब 'मैं' में शामिल हैं। 'मैं' के जानेपर वे सब गये। फिर 'तुम' ही बचता है। वह ईश्वर है। सब उसकी इच्छापर छोड़ना चाहिए। उसके अनुसार जीवन बिताना चाहिए। तभी आध्यात्मिक जीवन में

आने से लाभ है।'

'जब तुम यहाँ से जाते हो तब तुम्हारी साधना का समय नष्ट हो जाता है। तुम्हारा प्रत्येक क्षण बहुमूल्य है। माँ-बाप को अगर बेटे के साथ ओणम का खाना खाने की इच्छा हो तो यहाँ आ सकते हैं न? हम उसकी पूरी व्यवस्था करते हैं न? बारबार घर जानेपर यहाँ विकसित किए हुए पूरे संस्कार नष्ट हो जाएँगे। बंधन ही बचेगा।

'साधकों को प्रारंभ में घरवालों से दूर रहकर साधना करनी चाहिए। नहीं तो घरवालों से ममता के कारण साधना में प्रगति नहीं होगी। घरवालों से हमारी ममता अॅल्यूमिनियम बर्तन में इमली ड़ालने के समान है। बर्तन में छेद पड़ेगा। फिर उस में कुछ रख नहीं सकेंगे। ईश्वर को छोड़ अन्य किसी भी वस्तु से हमारी ममता हमारी आध्यात्मिक शक्ति को खा जाती है। वह साधक की दुश्मन है। उसे शत्रु रूप में ही देखना चाहिए। ऐसे रिश्तों से साधकों को दूर रहना चाहिए। नाव को खूँट से बाँधने के बाद खेते चले तो नाव आगे नहीं बढ़ेगी। हम आत्मा की संतान हैं। दूसरे सब लोगों से जैसा संबंध हो वैसा ही संबंध बंधुओं और घरवालों से भी रखना चाहिए। माता-पिता वृद्धावस्था में बीमार पड़े हैं, उनकी सेवा शुश्रूषा के लिए कोई नहीं। ऐसी हालत में घर जाकर माता-पिता को देखने में कोई गलती नहीं। मगर तब भी यदि तुम्हारे मन में मेरे पिता, मेरी माँ की भावना आई तो सब नष्ट हो जाएगा। कठिनाइयों में उलझे लोगों के प्रति हममें करुणा अवश्य हो। उन्हें ईश्वर के रूप में देखकर सेवा करनी चाहिए। यही एकमात्र भाव वहाँ होना चाहिए। 'मेरा' आ गया तो सब बरबाद। मेरा बेटा, मेरी बेटी कहनेवालों का प्यार अगर यथार्थ होता तो वे क्या यहाँ न आते? आध्यात्मिकता के नाम पर आश्रम आ गये तो आध्यात्मिक जीव के अनुकूल आचरण होना चाहिए। नहीं तो ऐसी स्थिति आएगी कि न संसार का लाभ होगा, न घर का। बच्चों वैसा नही होना चाहिए।'

बीच में समय मिलने पर एक भक्त ने स्वामी दयानंद सरस्वती के बारें में कहना शुरू किया।

भक्त ने दयानंदजी की मूर्तिपूजा के खंड़न की बातें और उनके वह दृष्टिकोण अपनाने के कारण बताये। 'एक दिन उन्होंने देखा कि शिव को भोग के रूप में चढ़ाई मिठाई चूहा ले जा रहा है। उसे देख उन्होंने सोचा कि अपने सामने रखा प्रसाद चूहा जब ले जा रहा है तब उसे रोकने में असमर्थ मूर्ति में कौन सी शक्ति है? यह मूर्ति हमारे जीवन की समस्याएँ कैसे दूर कर सकती हैं? उस दिन से वे मूर्तिपूजा के विरोधी हो गये।'

सब बातें मौन सुनने के बाद अम्मा ने कहा-

मंदिर में देवता हैं

'पिता का चित्र देखता मन चित्रकार का स्मरण करता है कि पिता का? उसी प्रकार ईश्वर के प्रतीक हमारे भीतर ईश्वर का स्मरण बढ़ाने में मदद देते हैं। हम छोटे बच्चे को तोते की तस्वीर खींचकर सिखाते हैं कि वह तोता है। जब बच्चा बड़ा हो जाता है तब वह तस्वीर को देखे बिना ही तोते को पहचान लेता है। सब ईश्वर हैं, ईश्वर सर्वव्यापी हैं तो उस पत्थर में भी ईश्वर हैं न? उसे कैसे नकार सकते हैं? शिव के लिए रखा प्रसाद चूहा खा गया तो यही समझना चाहिए कि चूहे ने अपने पिता की चीज़ें लेकर खा ली।'

भक्त- 'अम्मा, मंदिरों का इन दिनों कितना ही अधःपतन हो गया है। कई मंदिरों में नित्यपूजा तक करने के लिए धन की समस्या है तो कुछ मंदिरों में धन जमकर अंबार सा लग जाता है। क्या वह गरीबों के काम में आता है? वह भी नहीं। यही बेहतर है न कि मंदिर ही न हों?'

अम्मा- 'हम मंदिरों पर अभियोग नहीं लगा सकते। अगर किसी संस्था के अफसरों ने गलती की तो क्या वह संस्था त्याग देंगे? वहाँ की गलती को दूर करना ही चाहिए। मंदिरों के कार्यक्रमों में कमी हो तो उसे दूर करना चाहिए। मंदिर को त्याग देने की बात कहना इसका समाधान नहीं। जो भी हो, मंदिर के वातावरण और ताड़ीखाने के वातावरण में फरक तो है न? दोनों स्थानों के

चिंतातरंगों में फरक है। मंदिरों के वातावरण की पवित्र तरंगों का प्रभाव वहाँ जानेवालों पर पड़ेगा ही।'

भक्त- 'कई ब्राह्मण वर्षों से नित्य जप और पूजा करते हैं। उनमें से किसी को साक्षात्कार मिला हो ऐसा बताया नहीं जाता न?'

अम्मा- 'सत्य को जानने की व्याकुलता व वैराग्य ही प्रधान हैं। तपस मात्र से ही ईश्वर नही मिलेंगे। ईश्वर प्राप्ती के लिए निर्मल ह्रदय व प्रेम होना चाहिए।'

एक भक्त- 'गीता में कहा गया है न कि शरीर मंदिर है?'

अम्मा- 'हममें भीतर व बाहर का भेद है। इसीलिए हम कहते हैं कि ईश्वर बाहर नहीं भीतर हैं। सभी शरीरों को मंदिर के रूप में देखना चाहिए। सभी वस्तुओं को शरीर के रूप में देखना चाहिए।'

जातिभेद निरर्थक

भक्त- 'अम्मा, आज भी जातिभेद की अस्पृश्यता प्रचलित है। यद्यपि जानकार गुरुजन हैं उनमें भी यह भेदभाव है।'

अम्मा- 'श्री आदिशंकराचार्य के पास आये चंड़ाल की कथा क्या मालूम नहीं है? श्री शंकराचार्य ने उन से हट जाने को कहा। चंड़ाल ने पूछा- 'क्या शरीर को हटाना है या आत्मा को? अगर आत्मा को हटाना है तो वह हटकर कहाँ जाएगी? शरीर को हटाना हो तो बताइए कि आप के शरीर तथा मेरे शरीर में क्या फरक है? दोनों शरीर एक ही प्रकार की वस्तुओं से बनाये गये हैं। त्वचा रंग में अंतर मिलेगा।

एक भक्त ने संगीतमय सुर में गाया-

'ब्राह्मण्य से एकदम दंभ करते
कुछ लोग कहते हैं कि
ब्रह्मा भी हमारे बराबर नहीं हैं।'

अम्मा सुनकर हँस पड़ीं।

अम्मा- 'जो ब्रह्म को जानता है वही यथार्थ ब्राह्मण है। जो कुंड़लिनी को सहस्रार तक ऊपर उठाये वही ब्राह्मण है।'

'कहते हैं कि अच्छे संस्कार के धनी दूषित संस्कार के लोगों से अधिक न हिलें मिलें। इसका कारण यह है कि उनके संस्कार अच्छे संस्कारवालों में संक्रमित हो जायेंगे। वैसे आज उत्तम ब्राह्मण ही कहाँ? शास्त्र में बताया है कि कलियुग में ब्राह्मण शूद्र और शूद्र ब्राह्मण बन जायगा। अतएव आज जातिभेद के अनुसार अस्पृश्यता का विचार निरर्थक है।'

'पहले लोगो को उनके संस्कार के अनुसार काम दिया करते थे। आज वह स्थिति नहीं है। पहले उत्तम ब्राह्मण मंदिर के कार्य इत्यादी देखते थे। आज कई लोग शराब पीने के बाद मंदिरों में पूजा करते हैं। उन्हें ब्राह्मण कहने से क्या लाभ? वर्तमान दिनों में यह कह नहीं सकते हैं कि ब्राह्मण का बेटा ब्राह्मण है, क्षत्रिय का क्षत्रिय है, आदि। यहीं मछुआरा जाति के कितने लोग उच्च्व शिक्षा और पद पाये हुए हैं। वे अपने वंश का पेशा तक नहीं जानते।'

एक युवक ने जिज्ञासा प्रस्तुत की- 'भगवान ने गीता में यही कहा है *चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम्* - चार वर्णों का सृजन मैंने किया है। आजकल जाति व धर्म के नाम पर जितने भी अत्याचार होते हैं उनका दायित्व भगवान का है न?

दूसरे भक्त ने उस गीता श्लोक को पूरा किया- *'गुण कर्म विभागशः* अर्थात वर्णाश्रम का विभाजन गुण व कर्म के आधार पर किया है। एक आदमी जन्म से ब्राह्मण या चंड़ाल नहीं होता।'

अम्मा- 'एक व्यक्ति उपनयन करने के पहले ब्राह्मण नहीं होता। एक व्यक्ति बापतिस्मा के पहले ईसाई नहीं बनता। मुसलमानों के लिए भी ऐसी बात है। इन सब के पहले वह कौन है? तो मनुष्यों ने ही जाति आदि की सृष्टि की, न कि ईश्वर ने। जाति व धर्म में जितनी धाँधलियाँ चलती हैं उनके लिए भगवान को दोषी ठहराना निरर्थक है।' अम्मा के शब्दों ने वादविवाद का निर्णय कराया।

रात होने पर भी बच्चे नहीं सोये हैं। झूले के पास बड़ी भीड़ है। तीन चार आदमी मिलकर एक बच्ची को ओणमगीत गाने के लिए प्रेरणा दे रहे हैं। थोड़ी देर के झिझक के बाद तोतली आवाज़ में सुनाई दिया-

महाबली राजा जब राज करते थे
तब सारे मानुष समान थे।
न झूठ था, न कपट
तिल भर भी असत्य न था।

दादाजी की दाढ़ी की तरह धीरे से बहते शरद के श्वेत मेघों पर आँखे पड़ीं तो खयाल आया कि यदि हम समत्व सुंदर समाज की स्मृति को ताज़ा करने के लिए ओणम मनाते हैं तो एक अम्मा के सामने नाना जाति, धर्म के बच्चे इधर अम्मा के बच्चों की तरह रहते हैं। यहाँ तो प्रतिदिन तिरुओणम ही है।

१९८६ सितंबर १७ बुधवार

ब्रह्मचारियों की कक्षा चल रही है। अम्मा सीढ़ीयाँ उतरकर आईं और गोशाला की तरफ चलीं। गोशाला के पीछेवाली टँकी में गोबर व मूत्र भरा है। वहाँ की एक बालटी में वह लेकर अम्मा नारियल के थाले में ड़ालने लगीं। तब तक कक्षा की समाप्ति पर ब्रह्मचारी आ गये। उन्होंने अम्मा के हाथ से बालटी लेकर काम जारी रखा। बच्चों के आग्रह के कारण अम्मा वह काम छोड़कर वहाँ से चल पड़ीं।

अम्मा के हाथों व पैरों पर गोबर लगा है। पहने कपड़े पर जगह जगह गोबर के छिड़कने से दाग पड़े हैं। एक भक्त महिला ने अम्मा के लिए नल खोल दिया। उन्होंने अम्मा के हाथ-पाँव धुलाने की कोशिश की, तो भी अम्मा ने अनुमति नहीं दी। 'नहीं बेटे, अम्मा कर लेंगी। अपना हाथ गंदा न करना।'

भक्त महिला- 'अम्मा ऐसे काम पर क्यों जाती हैं? काम करने बच्चें हैं न?'

अम्मा- 'बेटी, कोई काम किये बिना दूर बैठी रहे तो बच्चे भी उसकी नकल करेंगे। वे बड़े सुस्त हो जायेंगे। संसार के लिए बोझ बन जायेंगे। वैसा नहीं होना चाहिए। अम्मा को काम करने में खुशी ही है। गायत्री का स्मरण करने पर ही दुःख आता है। जब अम्मा काम पर उतरती हैं तब वस्त्र गंदे होते हैं। उन वस्त्रों को गायत्री

ही धोती हैं न? अगर अम्मा धोने को तयार हो जाएँ तो गायत्री नहीं मानेगी। फिर भी उसकी नज़र बचाकर कभी कभी अम्मा कपड़े धो लेती है।'(हँसती हैं।)

एक भक्त महिला अम्मा को प्रणाम करने आगे बढ़ी।

अम्मा-'बेटी, अब नमस्कार मत करना। सारे कपड़े पर गोबर लगा है। अम्मा जाकर स्नान करके कपड़े बदलकर आएँगी।'

अम्मा कमरे में जाकर कुछ क्षणों में लौट आईं। कलरिमंड़प पर भक्तजन अम्मा की प्रतीक्षा कर रहे थे, और ब्रह्मचारी उनके साथ थे।

एक ब्रह्मचारी- 'अम्मा, सत्संग को अम्मा इतना महत्त्व क्यों देती हैं?

अम्मा- 'बच्चों, सत्संग उचित ढ़ंग से जीवन बिताने का तरीका सिखाता है। जब हम दूर अकेले गाड़ी से जायेंगे तब हाथ में रोड़मैप हो तो भटके बिना सही समय पर लक्ष्य स्थान पर पहुँच सकते हैं। उसी प्रकार सत्संग हो तो हम जीवन बिना आफत के सीधे मार्ग पर बिता सकते हैं। सत्संग जीवन का सही रास्ता दिखाता है। जिन्होंने पाककला सीखी हैं वे भोजन आराम से पका सकते हैं। कृषि विज्ञान सीखने के बाद खेती करना आसान है। जीवन का लक्ष्य समझकर उसके साक्षात्कार के लिए सही ढ़ंग से जो कार्य करते हैं उनके लिए जीवन आनंदपूर्ण रहेगा। सत्संग उसमें सहायता करेगा।'

'आग से घर को जला सकते हैं, खाना भी पका सकते हैं। सुई से किसी की आँख फोड़ सकते हैं, कपड़े सी भी सकते हैं। इसलिए प्रत्येक बात का प्रयोजन समझकर उसका प्रयोग करना चाहिए। उसी प्रकार सत्संग हमारे जीवन का सही प्रयोजन समझाकर उसके अनुसार जीवन यापन करना सिखाता है व उसमें मदद भी देता है। सत्संग से हम जीवन में शाश्वत संपत्ति पा सकते हैं।

ब्रह्मचारी- 'साक्षात्कार पाने के लिए क्या सत्संग ही काफी है?'

साधना आवश्यक

अम्मा- 'बेटे, पाकविधियाँ सीखने मात्र से भूख नहीं मिटेगी। भूख मिटने के लिए भोजन तैयार करके खाना चाहिए। केवल खेती

सीखना मात्र पर्याप्त नही है। वृक्षों और पौधो को अच्छी तरह परवरिश से ही फल प्राप्त होता है। केवल यह जानने से कोई लाभ नहीं कि अमुक जगह खोदने से पानी मिलेगा। वहाँ खोदकर पानी निकालना चाहिए। कुँए का नक्शा बनाकर देखते रहने से प्यास नहीं बुझती। प्यास बुझाने के लिए कुँए से पानी लेकर पीना चाहिए। नक्शा देखते हुए गाड़ी में बैठना ही नहीं, उसमें बताये रास्ते से चलने पर ही मंज़िल पर पहुँचेंगे। उसी प्रकार सत्संग में भाग लेने या शास्त्र ग्रंथ पढ़ने से ही बात पूरी नहीं होती। अनुभव तल पर उसके अनुसार जीने भी तैयार होना चाहिए। साधना करने पर ही परिस्थितियों का गुलाम होने से बच सकेंगे। समझे हुए तत्त्व जीवन में अमल में लाये जा सकेंगे। सत्संग सुनना और आध्यात्मिक सिद्धान्तों के अनुसार जीवन बिताना होगा। कामना छोड़ निष्काम भाव से ईश्वर का आश्रय लेना पड़ेगा।'

शास्त्र 'अहं ब्रह्मास्मि।', 'तत्त्वमसि।' आदि बताते हैं। तो भी आंतरिक अज्ञान के दूर होने पर ही ज्ञान का प्रकाश निखर आएगा। जब तक साधना नहीं करते तब तक 'तत्त्वमसि', 'अहं ब्रह्मास्मि' आदि कहना अंधबालक को 'प्रकाश' नाम से पुकारने की तरह है। वह बालक जानता ही नहीं कि प्रकाश क्या है?

एक बार एक सज्जन ने भाषण दिया- 'हम सब ब्रह्म हैं न, फिर साधना आदि की ज़रूरत क्या है?' भाषण के बाद वे भोजनार्थ आ बैठे। सेवक ने उनके सामने थाली रख दी। देखा तो उसमें चावल, सब्जी, सांबार, खीर आदि शब्द कुछ पर्चियों पर लिखकर छोड़े थे। खाने के लिए कुछ नहीं था। सज्जन को क्रोध आया, पूछा- 'तू ने यह क्या किया? क्या मेरा उपहास कर रहा है?'

'मैं ब्रह्म हूँ- वह विचार ही पर्याप्त है, साधना आदि की आवश्यकता नहीं है।' ऐसा मैंने आपको भाषण देते सुना। तो भोजन करने की जगह भोजन के बारे में सोचने से ही पेट भर जायेगा, ऐसा मैंने सोचा, सेवक ने जवाब दिया।

'बच्चो, केवल भाषण देने से लाभ नहीं होता। अमल में लाना चाहिए। साधना से ही सत् का साक्षात्कार कर सकते हैं। प्रयत्न न करनेवाले के लिए सत्संग उसी प्रकार है जिस प्रकार सियार को

नारियल मिले। वह उससे भूख मिटा नहीं पाता।'

'टॉनिक सेहत बढ़ाने के लिए है। उसका उपयोग बोतल के लेबल पर लिखा रहता है। उसके अनुसार पीने से ही लाभ होता है। सत्संग टॉनिक का सेवन क्रम समझने के समान है। साधना टॉनिक पीने के बराबर। सत्संग से नित्यानित्य के बारे में जान सकते हैं। किंतु साधना करने पर ही बात अनुभव में आयेगी।'

'रेड़ियो का निर्माण करने के लिए ज़रूरी वस्तुएँ निर्धारित क्रम से जोड़कर बैटरी से चालू करें तो हम दूर के रेड़ियो स्टेशन से प्रसारित कार्यक्रम अपने घर पर बैठे बैठे सुन सकते हैं। यदि हम अपने मन को साधना के ज़रिए उचित क्रम से प्रवृत्त करें, महात्माओं की बताई रीति से जीवन बिताएँ तो इसी शरीर में रहते हुए आनंद अनुभव कर सकते हैं। साधना एवं निष्काम सेवा हो तो फिर अन्य किसी की ज़रूरत नहीं है।'

'वेदान्त कितना भी सीखें साधना के बिना उसका अनुभव किया नहीं जा सकता। हम जिसको खोज रहे हैं वह हमारे ही भीतर है। मगर उसे प्राप्त करने के लिए साधना ज़रूरी है। बीज के वृक्ष बनने के लिए उसे मिट्टी में बोकर पानी व खाद देना होगा। सिर्फ हाथ में रखे रहने से काम नहीं।'

अम्मा का अमृत भाषण सुनते रहने से समय का बीतना पहचान नहीं सके। आखिर अम्मा ने ही याद दिलाया- 'बच्चों, जाकर सो जाओं बड़ी देर हो गई न? सबेरे अर्चना के लिए जगना है न?'

सब अनमना हो उठकर चले। थोड़ी दूर चलकर मुड़कर देखा तो उन्हें चाँदनी में स्नात अम्मा का मोहक रूप दिखा। क्या वही मुखकांति आकाश, चंद्रमा, सूर्य और नक्षत्रों को कांति प्रदान नहीं करती?

तमेव भान्तं अनुभाति सर्वम् ।
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥

उपदेशामृत भाग-२

श्री श्री माता अमृतानन्दमयी देवी

महात्मा अपने सान्निध्य से पृथ्वी को पवित्र करनेवाले जंगम तीर्थ हैं। वर्षों के निरन्तर तीर्थयात्रा और मन्दिरों के दर्शन मन को शुद्ध बनाते हैं। किन्तु महात्माओं की एक दृष्टि, स्पर्श या शब्द मानव को पवित्र बनाता है तथा उसमें उच्च संस्कार के बीज बोता है। महात्माओं के वचन केवल मौखिक नहीं होते। वे अपने वचनों के साथ अनुग्रह की भी वर्षा करते हैं। वे वचन जब ग्रंथ रूप में प्रकट होते हैं, तब उस ग्रंथ का पारायण सत्संग व ध्यान के रूप में परिणत होता है। अम्मा जैसे सत्यद्रष्टा महात्मा देशकाल की सीमाओं से परे हैं। अम्मा की अमृतवाणी पढ़ते और सुनते समय हम अदृश्य रूप से अम्मा से अंतरंग-सम्बन्ध स्थापित करने और उनके अनुग्रह का पात्र बनने में समर्थ हो जाते हैं। इस सद्ग्रन्थ के वचन का वास्तविक महत्त्व भी यही है।

HINDI

Mata Amritanandamayi Mission Trust, Amritapuri P.O., Kollam Dt., Keralam.